मानवी

जुलाई -सितंबर 2025

त्रैमासिक साहित्यिक ई पत्रिका

कविता सिंह

अहमदाबाद

दूरी इतनी ही रहे कि–

पलट कर देखे जा सकें
एक ऑख से दूसरी ऑख के आँसू
सुनाई देती रहे धड़कनें,
हाथ बढ़ाकर
थामा जा सके दूसरे का हाथ...

दूरी इतनी ही रहे कि–

तुम्हारी हथेली पर
सुस्ता सके मेरी हथेली...।

– कविता सिंह

त्रैमासिक ई पत्रिका

वर्ष– 5 ,अंक – 3 (जुलाई - सितंबर 2025)

प्रधान सम्पादक - कविता सिंह

****

सम्पादक—राजेश कुमार सिंह

****

आवरण -चित्र -तेजस सिंह

****

ई मेल : manvipatrika@gmail.com

****

Website : http://www.manvipatrika.co.in/

****

संरक्षक

श्रीमती जानकी किशोरी देवी एवं

श्री राम चन्द्र सिंह

****

पता -कार्यकारी -बी -701 ,स्वाति फ्लोरेंस , निकट सोबो सेंटर ,साउथ बोपल ,अहमदाबाद -380058

स्थायी - 274/x ,शक्ति णगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

मोब -9833775798

मानवी पत्रिका में प्रकाशित लेख /काव्य आदि रचनकारों के अपने विचार है ,जिनसे प्रकाशक/ संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है । सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गोरखपुर रहेगा । रचना की मौलिकता का दायित्व रचनाकार का है पत्रिका से जुड़े सभी पद अवैतनिक है ।

पत्रिका प्रधान संपादक कविता सिंह जी के स्वामित्व में आन-लाइन प्रकाशित होती है। पत्रिका के वेबसाईट से सभी अंकों का पीडीएफ़ डाउनलोड किया जा सकता है ।

पत्रिका निःशुल्क है , पत्रिका का उद्देश्य हिन्दी साहित्य की सेवा है।

पत्रिका आप सभी मित्रों से रचनात्मक सहयोग के अलावा अर्थ-सहयोग का भी निवेदन करती है, यह स्वैच्छिक है आप पेटिएम नं - 9833775798 पर स्वेच्छा से यथासंभव धनराशि सहयोग के रुप में अंतरित कर सकते हैं।

इस अंक में .....

5	कुछ मेरी भी	संपादक
	काव्य धरोहर	
7	हरी घास	सोहनलाल द्विवेदी
7	ऋतु शरद	त्रिलोचन
	लेख/संस्मरण/आलेख	
8	सावन मौसम के उल्लास का उत्सवधर्मी पर्व है कजरी लोक संस्कृति की लय है कजरी	कृष्ण कुमार यादव
१२	लोकचेतना में स्वाधीनता की लय	आकांक्षा यादव
17	आल्हा	रश्मि तिवारी
20	भूमंडलीकरण और हिंदी कविता	डॉ रेश्मा एम एल
22	गोपाल सिंह नेपाली : साहित्य से सिनेमा तक	राजेन्द्र परदेसी
33	लंदन में महात्मा बुद्ध की अस्थियां-कहानी पिपरहवा स्तूप की	कादंबरी मेहरा
	हास्य/व्यंग्य	
26	जरा हट के ,जरा बच के	दिलीप कुमार
	परिचर्चा	
28	वरिष्ठ साहित्यकार:डॉ दिनेश पाठक शशि	डॉ अनुराधा प्रियदर्शिनी
	यात्रा वृतांत	
37	श्रीखंड महादेव यात्रा: श्रद्धा, साहस और आत्मशुद्धि की रोमांचकारी गाथा	छविन्दर शर्मा
	कहानी	
39	आखिर कब तक	महेश शर्मा
48	ब्रम्हांड प्रिया	ऊषा कुशवाहा
51	खुशियों का द्वार	शीला मिश्रा
	लघुकथा	
19	लघुकथा	श्रद्धा जोशी
21	लघुकथा	अशोक आनन
27	काठ का ढेर	सुरेश पुष्पाकर
32	समझदारी	अश्विनी देशपांडे
32	अभिषेक	वैदेही कोठारी
36	सास-बहू	बसन्त राघव
38	दीपक और दीप	चौहान संजय सिंह
54	दान	डॉ.सरला सिंह स्निग्धा
	काव्य/हाइकु /गजल	
2	दूरी इतनी हि रहे कि ..	कविता सिंह
११	सानेट	अनिमा दास
16	मुक्तक	टीकम चन्दर ढोडरिया
25	ग़ज़ल	संजय ग्रोवर
53	मन ढूंढता है	अनीता तिवारी
53	मेरी कविता	बबिता कुमावत
55	कुछ गह लो,धर्म निभाना	डॉ मीरा सिंह "मीरा"
55	सब हैं खरे	प्रोमिला पुन्नु भारद्वाज
56	तीन कविताएँ	प्रेरणा यादव
57	सुनो पथिक	अनिता सिंह
57	भारत की आन बान शान है हिंदी	डॉ. संध्या शुक्ल 'मृदुल'
58	दोहे	राजपाल सिंह गुलिया
59	ग़ज़ल	सत्यम भारती
60	हाइकु	कश्मीरी लाल चावला
60	काव्य	जितेन्द्र निर्मोही
60	झूमें तन-मन सारा	सतीश कुमार नारनौंद
60	ग़ज़ल	वाई. वेद प्रकाश
61	ग़ज़ल	नवीन माथुर पंचोली
62	काव्य	डा. अनीश गर्ग
63	दो गीत	गिरेन्द्रसिंह भदौरिया "प्राण"
64	तेरे दीदार को आ गये चाँद हम	अमलेन्दु शुक्ल
64	मुसाफ़िर	डॉ. अखिलेश शर्मा
	पुस्तक समीक्षा	
65	आईने से हक़ीक़त पूछती हुई ग़ज़लें	डॉ.ज़ियाउर रहमान जाफ़री
66	मेरी इतनी कहानी है	डॉ.ज़ियाउर रहमान जाफ़री
67	मन के मनके	डॉ अनुराधा प्रियदर्शिनी

कुछ मेरी भी....

स्वामित्व यानि मलिकाना यानि स्वत्व शुल्क यानि रॉयल्टी

एक सवाल जिसका जबाब कुछ कुछ हाँ हैं और कुछ कुछ ना । क्या लेखक या कवि पैसों के लिए लिखते हैं । क्या साहित्य पैसों के लिए लिखा जाता है। जबाब है नहीं । लेखक जब लिखता है तब सिर्फ आत्मसंतुष्टि के लिए लिखता है,बाद में उसकी इच्छा होती है, पाठकों द्वारा उसकी रचना को पसंद किया जाना और उसके बाद उसकी इच्छा में रुपया पैसा आता है। यकीनन एक लेखक रुपये पैसे से कहीं ज्यादा अपनी रचना को तरजीह देता है। कितने बड़े लेखक मायानगरी के रुपये पैसों को छोड़ सच्चे साहित्य की सेवा में लगे रहें। लेकिन यह भी सर्वविदित तथ्य है कि जिस तरह जीवन के लिए हवा जरूरी है वैसे ही जीने के लिए पैसा भी जरूरी है।

अब चूंकि सिर्फ आत्मसंतुष्टि और सराहना से पेट तो नहीं भरा जा सकता है, तो पैसा भी जरुरी है। जरुरी क्या बहुत जरूरी है। साहित्य सृजन में लेखक का खून पसीना लगा होता है, उसके वर्षों की मेहनत होती है। साहित्य समाज का न सिर्फ आईना होता है बल्कि समाज को जगाने का भी काम करता है। साहित्य समाज को एक नई दिशा भी देता है। अब जब हिंदी साहित्य इतना महत्वपूर्ण है, फिर यह समृद्धि के पैमाने पर हाशिए पर क्यूं रहता है। क्यों हिन्दी साहित्य के लेखकों की दशा दीन हीन है। अधिकतर लेखक फाकाकशी का जीवन क्यूं व्यतीत करते हैं। खासकर हिंदी साहित्य के लेखकों की बात कर रहा हूं। क्या हिंदी में उत्कृष्ट साहित्य की कमी है, क्या हिंदी साहित्य अंग्रेजी साहित्य की तुलना में कमतर है, क्या हिंदी लेखकों की सोच उनकी कल्पना उनका लेखन अंग्रेजी साहित्य के लेखकों के समक्ष कमतर या दोयम दर्जे का है। या फिर हिंदी साहित्य में पाठकों का अभाव है। क्या हिंदी साहित्य में पाठकों का अकाल है।

शायद अब तक ऐसा माना जा रहा था, पर हिंदी युग्म प्रकाशन ने एक उत्सव समारोह आयोजित कर इस प्रकार की सोच पर विराम चिह्न लगा दिया है। हिंदी साहित्य के आकाश में जबरदस्त हलचल मचा दी है।

लेखकीय कुनबा दो ध्रुवों में बंटकर सोशल मीडिया पर अनर्गल प्रलाप कर रहा है। जाहिर है जिनको नहीं मिला वहीं कल्प रहे हैं। दु:खद तो यह है, कि यह प्रलापी, विनोद कुमार शुक्ल जी के लेखन को भी नहीं बख्श रहें हैं। अरे भाई सब पर आप ही निर्णय सुना दोगे कि कुछ पाठकों पर भी रहने दोगे। अब जो पाठकों को पसन्द आयेगा पाठक वही पढ़ेगा।

समारोह में पहली पर कोई प्रकाशक,लेखक और प्रकाशक के मध्य पारदर्शिता को स्थापित करते हुए मंच पर खुली सभा में 30 लाख के लायल्टी के चेक का ऐलान करता है और साहित्य अकादमी , ज्ञान पीठ पुरुस्कार से प्राप्त लेखक विनोद कुमार शुक्ल को समारोह में चेक सौंपा जाता है। और यह सब दिया जाता है उनकी पुस्तक "दीवार में एक खिड़की रहती थी" की छह माह में लगभग 90 हजार प्रतियों की बिक्री पर। यह हिंदी साहित्य में प्रकाशक और लेखक के बीच ईमानदारी की पहल है। जिसका स्वागत किया जाना चाहिए। अन्य प्रकाशको को भी ऐसी पारदर्शिता और ईमानदारी अपनाकर हिन्दी साहित्य को समृद्ध करना चाहिए।

हिंदी युग्म की यह पहल इस बात की गवाही है कि हिंदी में पाठकों की कमी का रोना,केवल एक छद्म शिगूफा है, जिसका सच्चाई से कोई लेना-देना नहीं है। हिंदी में खरीदकर किताब पढ़ने वाले पाठकों की संख्या अच्छी-खासी है ,और आगे भी रहेगी। यह बात लेखकों खासकर नवोदित लेखकों के लिए लेखन के प्रति भरोसा जगाती हैं। ऐसा नहीं है कि इससे पहले किसी हिंदी लेखक की इतनी या लाखों प्रतियां न बिकी हो , इससे पहले भी बिकी है और आगे भी बिकती रहेंगी। लेकिन इन सब के बीच एक बात तो साफ हो जाती है कि हिंदी साहित्य को पाठकों की संख्या विशाल है।

आजकल छिड़ी सामयिक बहस का मुद्दा यह नहीं है कि हिंदी में पाठक है या नहीं,है तो कितने है बल्कि यह है कि समारोह आयोजित करके रायल्टी की धनराशि को सार्वजनिक करना और लेखक को चेक सौंपना शोभायमान हैं या नहीं। यहां से एक नई बहस शुरू हो जाती है। फेसबुक पर या फिर सोशल मीडिया पर पक्ष और विपक्ष में तर्कों की भरमार लगी हुई है। लेखकों का कोई झुंड इसे अशोभनीय सिद्ध करने पर तुला है। जाहिर है ऐसे झुंड ईष्या के साथ भरे हो। लेखकों का कोई खेमा ऐसी पहल का स्वागत करता है।

प्रकाशक झुंड अपनी बातें रख रहा है। प्रकाशकों के ऊपर अब पारदर्शिता और ईमानदारी का भारी दबाब है, प्रकाशक कभी रायल्टी देते थे ,कभी नहीं देते थे, सब कुछ अंधेरे में रहता था। हिंदी युग्म की इस पहल से अन्य प्रकाशनों पर भी ईमानदारी बरतने का दबाव बन गया है।

खैर इन मुद्दों पर हमेशा बहस चलती रहेंगी, लेकिन कुछ बातें साफ हुई है,वो यह कि हिंदी में विशाल पाठक वर्ग है,और सही विपणन की नीति अपनाकर पाठकों तक आसानी से पंहुचा जा सकता है। दूसरा प्रकाशन संस्थाओं का लेखक के प्रति ईमानदार और पारदर्शी चलन हिंदी साहित्य को और अधिक मजबूती प्रदान करेगा। हिंदी में लिखने वालों के विश्वास पर मुहर लगी है। जो अच्छे और उत्कृष्ट हिंदी साहित्य लेखन को बढ़ावा देगा।

आप सभी को हिन्दी दिवस 14 सितंबर की बहुत बहुत बधाई । भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार, देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किया गया है। संविधान सभा ने लम्बी चर्चा के बाद 14 सितम्बर सन् 1949 को हिन्दी को **भारत की राजभाषा** स्वीकारा गया। इसके बाद संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा के सम्बन्ध में व्यवस्था की गयी। इसकी स्मृति को ताजा रखने के लिये 14 सितम्बर का दिन प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है। ध्यातव्य है कि भारतीय संविधान में राष्ट्रभाषा का उल्लेख नहीं है।

सुख, शांति और समृद्धि की, मंगलमय कामनाओं के साथ, आप और आप के परिवार को शारदीय नवरात्र की हार्दिक मंगल कामनाएं, मां अम्बे आपको सुख समृद्धि वैभव ख्याति प्रदान करें। मां दुर्गा का आशीर्वाद आपके जीवन में हमेशा बना रहे। आपको और आपके परिवार को शारदीय नवरात्र की बहुत-बहुत शुभकामनाएं ।

आपका
शुभेच्छू

काव्य धरोहर

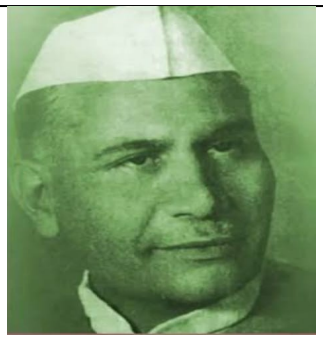

सोहनलाल द्विवेदी

हरी घास पर बिखेर दी हैं
ये किसने मोती की लड़ियाँ?

कौन रात में गूँथ गया है
ये उज्ज्वल हीरों की कड़ियाँ?

जुगनू से जगमग-जगमग ये
कौन चमकते हैं यों चमचम?

नभ के नन्हें तारों से ये
कौन दमकते हैं यों दमदम?

लुटा गया है कौन जौहरी
अपने घर का भरा ख़ज़ाना?

पत्तों पर, फूलों पर, पग-पग
बिखरे हुए रतन हैं नाना।

बड़े सबेरे मना रहा है
कौन ख़ुशी में यह दीवाली?

वन-उपवन में जला दी है
किसने दीपावली निराली?

जी होता, इन ओस-कणों को
अंजलि में भर घर ले आऊँ?

इनकी शोभा निरख-निरखकर
इन पर कविता एक बनाऊँ।

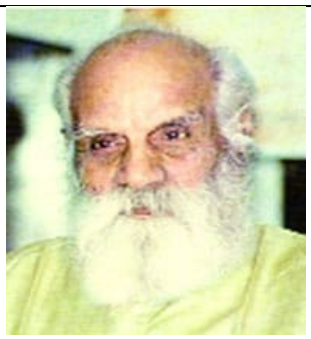

त्रिलोचन

ऋतु शरद और
नवमी तिथि है

है कितनी कितनी मधुर रात
मन में बस जाती शीतलता

है अभी नहीं जाड़ा कोई
बस ज़रा ज़रा रोएँ काँपे

तन-मन में भर आया अजीब रहा—
रिमझिम रिमझिम पानी बरसा

फिर खुला गगन
हो गई धूप

दिन भर ऐसा ही रहा तार
कपसीले, ऊदे, लाल और

पीले मटमैले—दल के दल
आए बादल

अब रात
न उतना रंग रहा

काला—हल्का या गहरा
या धुएँ-सा

कुछ उजला उजला
किसके अतृप्त दृग देखेंगे

चाँदनी चमकती है गंगा बहती जाती है

सावन मौसम के उल्लास का उत्सवधर्मी पर्व है कजरी

लोक संस्कृति की लय है कजरी

कृष्ण कुमार यादव

भारत सरकार में वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी। प्रशासन के साथ-साथ साहित्य, लेखन और ब्लॉगिंग के क्षेत्र में भी प्रवृत्त। विभिन्न विधाओं में अब तक कुल 7 पुस्तकें प्रकाशित- 'अभिलाषा' (काव्य-संग्रह, 2005), 'अभिव्यक्तियों के बहाने' व 'अनुभूतियाँ और विमर्श' (निबंध-संग्रह, 2006 व 2007), इत्यादि

सम्मान : उ.प्र. के मुख्यमंत्री द्वारा "अवध सम्मान", पश्चिम बंगाल के राज्यपाल द्वारा "साहित्य-सम्मान", छत्तीसगढ़ के राज्यपाल द्वारा "विज्ञान परिषद शताब्दी सम्मान", परिकल्पना समूह द्वारा "दशक के श्रेष्ठ हिन्दी ब्लॉगर दम्पति" सम्मान, अंतर्राष्ट्रीय ब्लॉगर सम्मेलन, भूटान में " परिकल्पना सार्क शिखर सम्मान", विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, भागलपुर, बिहार द्वारा डॉक्टरेट (विद्यावाचस्पति) की मानद उपाधि, भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा "डॉ. अम्बेडकर फेलोशिप राष्ट्रीय सम्मान" साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा, राजस्थान द्वारा "हिंदी भाषा भूषण", वैदिक क्रांति परिषद, देहरादून द्वारा "श्रीमती सरस्वती सिंहजी सम्मान", भारतीय बाल कल्याण संस्थान द्वारा "प्यारे मोहन स्मृति सम्मान", आदि विभिन्न पुरुस्कारों से सम्मानित।

संपर्क सूत्र :पोस्टमास्टर जनरल,
उत्तरी गुजरात परिक्षेत्र, अहमदाबाद -380004
kkyadav.t@gmail.com

भारतीय परम्परा का प्रमुख आधार तत्व उसकी लोक संस्कृति है। यहाँ लोक कोई एकाकी धारणा नहीं है बल्कि इसमें सामान्य-जन से लेकर पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, ऋतुएं, पर्यावरण, हमारा परिवेश और हर्ष-विषाद की सामूहिक भावना से लेकर श्रृंगारिक दशाएं तक शामिल हैं। 'ग्राम-गीत' की भारत में प्राचीन परंपरा रही है। लोकमानस के कंठ में, श्रुतियों में और कई बार लिखित-रूप में यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित होते रहते हैं। पं. रामनरेश त्रिपाठी के शब्दों में-'ग्राम गीत प्रकृति के उद्गार हैं। इनमें अलंकार नहीं, केवल रस है। छन्द नहीं, केवल लय है। लालित्य नहीं, केवल माधुर्य है। ग्रामीण मनुष्यों के स्त्री-पुरुषों के मध्य में हृदय नामक आसन पर बैठकर प्रकृति मानो गान करती है। प्रकृति का यह गान ही ग्राम गीत है....।' इस लोक संस्कृति का ही एक पहलू है- कजरी। ग्रामीण अंचलों में अभी भी प्रकृति की अनुपम छटा के बीच कजरी की धारायें समवेत फूट पड़ती हैं। यहाँ तक कि जो अपनी मिटटी छोड़कर विदेशों में बस गए, उन्हें भी यह कजरी अपनी ओर खींचती है। तभी तो कजरी अमेरिका, ब्रिटेन इत्यादि देशों में भी अपनी अनुगूंज छोड़ चुकी है। सावन के मतवाले मौसम में कजरी के बोलों की गूंज वैसे भी दूर-दूर तक सुनाई देती है -

रिमझिम बरसेले बदरिया,
गुईयां गावेले कजरिया
मोर सवरिया भीजै न
वो ही धानियां की कियरिया
मोर सविरया भीजै न।

वस्तुतः 'लोकगीतों की रानी' कजरी सिर्फ गायन भर नहीं है बल्कि यह सावन मौसम की सुन्दरता और उल्लास का उत्सवधर्मी पर्व है। प्रतीक्षा, मिलन और विरह की अविरल सहेली, निर्मल और लज्जा से सजी-धजी नवयौवना की आसमान छूती खुशी, आदिकाल से कवियों की रचनाओं का श्रृंगार कर, उन्हें जीवंत करने वाली 'कजरी' सावन की हरियाली बहारों के साथ जब फिज़ा में गूंजती है तो देखते ही बनता है। प्रतीक्षा के पट खोलती लोकगीतों की श्रृंखलाएं इन खास दिनों में गजब सी हलचल पैदा करती हैं, हिलोर सी उठती है, श्रृंगार के लिए मन मचलता है और उस पर कजरी के सुमधुर बोल! सचमुच 'कजरी' सबकी प्रतीक्षा है, जीवन की उमंग और आसमान को छूते हुए झूलों की रफ्तार है। शहनाईयों की कर्णप्रिय गूंज है, सुर्ख लाल मखमली वीर बहूटी और हरियाली का गहना है, सावन से पहले ही तेरे आने का एहसास! महान कवियों और रचनाकारों ने तो कजरी के

सम्मोहन की व्याख्या विशिष्ट शैली में की है। मौसम और यौवन की महिमा का बखान करने के लिए परंपरागत लोकगीतों का भारतीय संस्कृति में कितना महत्व है-कजरी इसका उदाहरण है। चरक संहिता में तो यौवन की संरक्षा व सुरक्षा हेतु बसन्त के बाद सावन महीने को ही सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। सावन में नयी ब्याही बेटियाँ अपने पीहर वापस आती हैं और बगीचों में भाभी और बचपन की सहेलियों संग कजरी गाते हुए झूला झूलती हैं-

घरवा में से निकले ननद-भउजईया
जुलम दोनों जोड़ी साँवरिया।

छेड़छाड़ भरे इस माहौल में जिन महिलाओं के पति बाहर गये होते हैं, वे भी विरह में तड़पकर गुनगुना उठती हैं ताकि कजरी की गूँज उनके प्रीतम तक पहुँचे और शायद वे लौट आयें-

सावन बीत गयो मेरो रामा
नाहीं आयो सजनवा ना।
.....
भादों मास पिया मोर नहीं आये
रतिया देखी सवनवा ना।

यही नहीं जिसके पति सेना में या बाहर परदेश में नौकरी करते हैं, घर लौटने पर उनके सांवले पड़े चेहरे को देखकर पत्नियाँ कजरी के बोलों में गाती हैं -

गौर-गौर गइले पिया
आयो हुईका करिया
नौकरिया पिया छोड़ दे ना।

एक मान्यता के अनुसार पति विरह में पत्नियाँ देवि 'कजमल' के चरणों में रोते हुए गाती हैं, वही गान कजरी के रूप में प्रसिद्ध है-

सावन हे सखी सगरो सुहावन
रिमझिम बरसेला मेघ हे
सबके बलमउवा घर अइलन
हमरो बलम परदेस रे।

नगरीय सभ्यता में पले-बसे लोग भले ही अपनी सुरीली धरोहरों से दूर होते जा रहे हों, परन्तु शास्त्रीय व उपशास्त्रीय बंदिशों से रची कजरी अभी भी उत्तर प्रदेश के कुछ अंचलों की खास लोक संगीत विधा है। कजरी के मूलतः तीन रूप हैं- बनारसी, मिर्जापुरी और गोरखपुरी कजरी। बनारसी कजरी अपने अक्खड़पन और बिन्दास बोलों की वजह से अलग पहचानी जाती है। इसके बोलों में अइले, गइले जैसे शब्दों का बखूबी उपयोग होता है, इसकी सबसे बड़ी पहचान 'न' की टेक होती है-

बीरन भइया अइले अनवइया
सवनवा में ना जइबे ननदी।
.....
रिमझिम पड़ेला फुहार
बदरिया आई गइले ननदी।

विंध्य क्षेत्र में गायी जाने वाली मिर्जापुरी कजरी की अपनी अलग पहचान है। अपनी अनूठी सांस्कृतिक परम्पराओं के कारण मशहूर मिर्जापुरी कजरी को ही ज्यादातर मंचीय गायक गाना पसन्द करते हैं। इसमें सखी-सहेलियों, भाभी-ननद के आपसी रिश्तों की मिठास और छेड़छाड़ के साथ सावन की मस्ती का रंग घुला होता है-

पिया सड़िया लिया दा मिर्जापुरी पिया
रंग रहे कपूरी पिया ना
जबसे साड़ी ना लिअईबा
तबसे जेवना ना बनईबे
तोरे जेवना पे लगिहें मजूरी पिया
रंग रहे कपूरी पिया ना।

विंध्य क्षेत्र में पारम्परिक कजरी धुनों में झूला झूलती और सावन भादो मास में रात में चौपालों में जाकर स्त्रियाँ उत्सव मनाती हैं। इस कजरी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह पीढ़ी दर पीढ़ी चलती हैं और इसकी धुनों व पद्धति को नहीं बदला जाता। कजरी गीतों की ही तरह विंध्य क्षेत्र में कजरी अखाड़ों की भी अनूठी परम्परा रही है। आषाढ़ पूर्णिमा के दिन गुरू पूजन के बाद इन अखाड़ों से कजरी का विधिवत गायन आरम्भ होता है। स्वस्थ परम्परा के तहत इन कजरी अखाड़ों में प्रतिद्वन्दता भी होती है। कजरी लेखक गुरु अपनी कजरी को एक रजिस्टर पर नोट कर देता है, जिसे किसी भी हालत में न तो सार्वजनिक किया जाता है और न ही किसी को लिखित रूप में दिया जाता है। केवल अखाड़े का गायक ही इसे याद करके या पढ़कर गा सकता है-

कइसे खेलन जइबू
सावन में कजरिया
बदरिया घिर आईल ननदी
संग में सखी न सहेली
कईसे जइबू तू अकेली
गुंडा घेर लीहें तोहरी डगरिया।

बनारसी और मिर्जापुरी कजरी से परे गोरखपुरी कजरी की अपनी अलग ही टेक है और यह 'हरे रामा' और 'ऐ हारी' के कारण अन्य कजरी से अलग पहचानी जाती है-

हरे रामा, कृष्ण बने मनिहारी
पहिर के सारी, ऐ हारी।

सावन की अनुभूति के बीच भला किसका मन प्रिय मिलन हेतु न तड़पेगा, फिर वह चाहे चन्द्रमा ही क्यों न हो -

चन्दा छिपे चाहे बदरी मा
जब से लगा सवनवा ना।

विरह के बाद संयोग की अनुभूति से तड़प और बेकरारी भी बढ़ती जाती है। फिर यही तो समय होता है इतराने का, फरमाइशें पूरी करवाने का-

पिया मेंहदी लिआय दा मोतीझील से
जायके साइकील से ना
पिया मेंहदी लिअहिया
छोटकी ननदी से पिसईहा
अपने हाथ से लगाय दा
कांटा-कील से
जायके साइकील से।
.....
धोतिया लइदे बलम कलकतिया
जिसमें हरी- हरी पतियां।

ऐसा नहीं है कि कजरी सिर्फ बनारस, मिर्जापुर और गोरखपुर के अंचलों तक ही सीमित है बल्कि इलाहाबाद और अवध अंचल भी इसकी सुमधुरता से अछूते नहीं हैं। कजरी सिर्फ गाई नहीं जाती बल्कि खेली भी जाती है। एक तरफ जहाँ मंच पर लोक गायक इसकी अद्भुत प्रस्तुति करते हैं वहीं दूसरी ओर इसकी सर्वाधिक विशिष्ट शैली 'धुनमुनिया' है, जिसमें महिलायें झुक कर एक दूसरे से जुड़ी हुयी अर्धवृत्त में नृत्य करती हैं।

मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ के कुछ अंचलों में तो रक्षाबन्धन पर्व को 'कजरी पूर्णिमा' के तौर पर भी मनाया जाता है। मानसून की समाप्ति को दर्शाता यह पर्व श्रावण अमावस्या के नवें दिन से आरम्भ होता है, जिसे 'कजरी नवमी' के नाम से जाना जाता है। कजरी नवमी से लेकर कजरी पूर्णिमा तक चलने वाले इस उत्सव में नवमी के दिन महिलायें खेतों से मिट्टी सहित फसल के अंश लाकर घरों में रखती हैं एवं उसकी साथ सात दिनों तक माँ भगवती के साथ कजमल देवी की पूजा करती हैं। घर को खूब साफ-सुथरा कर रंगोली बनायी जाती है और पूर्णिमा की शाम को महिलायें समूह बनाकर पूजी जाने वाली फसल को लेकर नजदीक के तालाब या नदी पर जाती हैं और उस फसल के बर्तन से एक दूसरे पर पानी उलचाती हुई कजरी गाती हैं। इस उत्सवधर्मिता के माहौल में कजरी के गीत सातों दिन अनवरत् गाये जाते हैं।

कजरी लोक संस्कृति की जड़ है और यदि हमें लोक जीवन की ऊर्जा और रंगत बनाये रखना है तो इन तत्वों को सहेज कर रखना होगा। कजरी भले ही पावस गीत के रूप में गायी जाती हो पर लोक रंजन के साथ ही इसने लोक जीवन के विभिन्न पक्षों में सामाजिक चेतना की अलख जगाने का भी कार्य किया है। कजरी सिर्फ राग-विराग या श्रृंगार और विरह के लोक गीतों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसमें चर्चित समसामयिक विषयों की भी गूँज सुनायी देती है। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान कजरी ने लोक चेतना को बखूबी अभिव्यक्त किया। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान कजरी ने लोक चेतना को बखूबी अभिव्यक्त किया। आजादी की लड़ाई के दौर में एक कजरी के बोलों की रंगत देखें-

केतने गोली खाइके मरिगै
केतने दामन फांसी चढ़िगै
केतने पीसत होइहें जेल मां चकरिया
बदरिया घेरि आई ननदी।

1857 की क्रान्ति पश्चात जिन जीवित लोगों से अंग्रेजी हुकूमत को ज्यादा खतरा महसूस हुआ, उन्हें कालापानी की सजा दे दी गई। अपने पति को कालापानी भेजे जाने पर एक महिला 'कजरी' के बोलों में गाती है-

अरे रामा नागर नैया जाला काले पनियां रे हरी
सबकर नैया जाला कासी हो बिसेसर रामा
नागर नैया जाला काले पनियां रे हरी
घरवा में रोवै नागर, माई और बहिनियां रामा
से जिया पैरोवे बारी धनिया रे हरी।

स्वतंत्रता की लड़ाई में हर कोई चाहता था कि उसके घर के लोग भी इस संग्राम में अपनी आहुति दें। कजरी के माध्यम से महिलाओं ने अन्याय के विरूद्ध लोगों को जगाया और दुश्मन का सामना करने को प्रेरित किया। ऐसे में उन नौजवानों को जो घर में बैठे थे, महिलाओं ने कजरी के माध्यम से व्यंग्य कसते हुए प्रेरित किया-

लागे सरम लाज घर में बैठ जाहु
मरद से बनिके लुगइया आए हरि
पहिरि के साड़ी, चूड़ी, मुंहवा छिपाई लेहु
राखि लेई तोहरी पगरइया आए हरि।

सुभाष चन्द्र बोस ने जंग-ए-आजादी में नारा दिया कि- "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा, फिर क्या था पुरूषों के साथ-साथ महिलाएं भी उनकी फौज में शामिल होने के लिए बेकरार हो उठीं। तभी तो कजरी के शब्द फूट पड़े-

हरे रामा सुभाष चन्द्र ने फौज सजायी रे हारी
कड़ा-छड़ा पैंजनिया छोड़बै, छोड़बै हाथ कंगनवा रामा
हरे रामा, हाथ में झण्डा लै के जुलूस निकलबैं रे हारी।

महात्मा गाँधी आजादी के दौर के सबसे बड़े नेता थे। चरखा कातने द्वारा उन्होंने स्वावलम्बन और स्वदेशी का रूझान जगाया। नवयुवतियाँ अपनी-अपनी धुन में गाँधी जी को प्रेरणास्त्रोत मानतीं और एक स्वर में कजरी के बोलों में

गातीं-

अपने हाथे चरखा चलउबै
हमार कोऊ का करिहैं
गाँधी बाबा से लगन लगउबै
हमार कोई का करिहैं।

कजरी में 'चुनरी' शब्द के बहाने बहुत कुछ कहा गया है। आजादी की तरंगें भी कजरी से अछूती नहीं रही हैं-

एक ही चुनरी मंगाए दे बूटेदार पिया
माना कही हमार पिया ना
चद्रशेखर की बनाना, लक्ष्मीबाई को दर्शाना
लड़की हो गोरों से घोड़ां पर सवार पिया।
जो हम ऐसी चुनरी पइबै, अपनी छाती से लगइबे
मुसुरिया दीन लूटै सावन में बहार पिया
माना कही हमार पिया ना।
.....
पिया अपने संग हमका लिआये चला
मेलवा घुमाये चला ना
लेबई खादी चुनर धानी, पहिन के होइ जाबै रानी
चुनरी लेबई लहरेदार, रहैं बापू औ सरदार
चाचा नेहरू के बगले बइठाये चला
मेलवा घुमाये चला ना
रहइं नेताजी सुभाष, और भगत सिंह खास
अपने शिवाजी के ओहमा छपाये चला
जगह-जगह नाम भारत लिखाये चला
मेलवा घुमाये चला ना

उपभोक्तावादी बाजार के ग्लैमरस दौर में कजरी भले ही कुछ क्षेत्रों तक सिमट गई हो पर यह प्रकृति से तादातम्य का गीत है और इसमें कहीं न कहीं पर्यावरण चेतना भी मौजूद है। इसमें कोई शक नहीं कि सावन प्रतीक है सुख का, सुन्दरता का, प्रेम का, उल्लास का और इन सब के बीच कजरी जीवन के अनुपम क्षणों को अपने में समेटे यूं ही रिश्तों को खनकाती रहेगी और झूले की पींगों के बीच छेड़-छाड़ व मनुहार यूँ ही लुटाती रहेगी। कजरी हमारी जनचेतना की परिचायक है और जब तक धरती पर हरियाली रहेगी कजरी जीवित रहेगी। अपनी वाच्य परम्परा से जन-जन तक पहुँचने वाले कजरी जैसे लोकगीतों के माध्यम से लोकजीवन में तेजी से मिटते मूल्यों को भी बचाया जा सकता है।

अनिमा दास
सॉनेटियर
कटक, ओड़िशा

प्रतीक्षा (सॉनेट)

प्रेम की प्रतीक्षा में तपोवन की तपस्विनी कह रही क्या सुन
मेदिनी वक्ष में कंपन मंद-मंद, ऐसी तेरे स्पंदन की धुन
बूँद-बूँद शीतल-शीतल तेरे स्पर्श से सरित जल कल-कल
मंदार की लालिमा सा क्यों *दमकता* तपस्वी मुखमंडल?

रहे तम संग जैसे शृंग गुहा में खद्योत ऐसे ही रहूँ त्रास संग
अयि! तपस्वी, मंत्रित कर अरण्य नभ, भर वारिद में सप्तरंग
शतपत्र पर रच काव्यचित्र मेरी काया को कर अभिषिक्त
अयि! तपस्वी, त्रसरेणु सी विचरती, कर स्वप्न में मुझे रिक्त।

कह रही तपस्विनी, तपस्वी हृदय की अतृप्त तरुणी
रौप्य-पटल पर कर चित्रित मुग्ध मर्त्य, दे दो मुक्त अरुणी!
तपस्या हुई तृप्त, नहीं है क्षुधा का क्षोभ क्षरित स्वेदबिंदु में
समाप्ति के सौंदर्य से झंकृत बह रही
निर्झरिणी सिंधु में।

अयि तपस्वी! मोक्ष की इस सूक्ष्म धारा में है समय, कर्ता
स्मृति सहेजती तपस्विनी के द्वार पर मोह है मनोहर्ता।

मैं अदृश्या (सॉनेट)

उज्ज्वल नक्षत्रों में लुप्त जीवन का एक अन्वेषण
करती रही मैं अर्धशतक आयु पर्यंत निरीक्षण
मंत्र ध्वनि-मंगल ध्वनि से गूँजता रहा.. शून्यमंडल
दिवा-निशि आत्म-क्रंदन स्तब्ध किया पुष्प दल।

"तमिस्र तमिस्र" कहा; किंतु नहीं आया कभी प्रकाश
अपितु तमस की परिधि में समग्र स्वप्न हुए नाश
शून्य को घोर शून्य होते करता रहा वह प्रतीक्षा
किंतु कहा नहीं अमृत मुहूर्त की भी हो अन्वीक्षा।

आज का ज्योति पर्व..मुखर हुआ शताब्दी पश्चात्
रघुवीर का प्रत्यागमन..अथवा विश्वास का भूमिसात्
किंतु हुआ था पुरुष पुरुषोत्तम... वैदेही हुई थी रिक्त
किंतु ज्योतिर्मय है अयोध्या..अंतर्मन हुआ प्रेम-सिक्त।

न न... कोई प्रतिवाद अथवा नहीं है कोई परिवाद
मैं सदा रहूँगी अदृश्या किंतु मुझसे ही होगा शंखनाद।

लोकचेतना में स्वाधीनता की लय

आकांक्षा यादव

कॉलेज में प्रवक्ता। साहित्य, लेखन और ब्लॉगिंग के क्षेत्र में भी प्रवृत्त। नारी विमर्श, बाल विमर्श और सामाजिक मुद्दों से सम्बंधित विषयों पर प्रमुखता से लेखन। लेखन-विधा- कविता, लेख, लघुकथा एवं बाल कविताएँ। अब तक 4 पुस्तकें प्रकाशित- 'प्रकृति, संस्कृति और स्त्री' (2023), 'आधी आबादी के सरोकार' (2017), 'चाँद पर पानी' (बाल-गीत संग्रह-2012) एवं 'क्रांति-यज्ञ : 1857-1947 की गाथा' (संपादित, 2007)।

देश-विदेश की प्रायः अधिकतर प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं और इंटरनेट पर वेब पत्रिकाओं व ब्लॉग पर रचनाओं का निरंतर प्रकाशन। व्यक्तिगत रूप से 'शब्द-शिखर' और युगल रूप में 'बाल-दुनिया', 'सप्तरंगी प्रेम' व 'उत्सव के रंग' ब्लॉग का संचालन। 60 से अधिक प्रतिष्ठित पुस्तकों/संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाएँ, वार्ता इत्यादि का प्रसारण। व्यक्तित्व-कृतित्व पर डॉ. राष्ट्रबंधु द्वारा सम्पादित 'बाल साहित्य समीक्षा' (नवम्बर 2009, कानपुर) का विशेषांक जारी।

संपर्क: आकांक्षा यादव, पोस्टमास्टर जनरल आवास, बंगला नं.-22. कैंटोनमेंट, शाही बाग, अहमदाबाद (गुजरात)-380004
ई-मेल: akankshay1982@gmail.com

स्वतंत्रता और स्वाधीनता प्राणिमात्र का जन्मसिद्ध अधिकार है। इसी से आत्मसम्मान और आत्मउत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त होता है। भारतीय राष्ट्रीयता को दीर्घावधि विदेशी शासन और सत्ता की कुटिल-उपनिवेशवादी नीतियों के चलते परतंत्रता का दंश झेलने को मजबूर होना पडा था और जब इस क्रूरतम कृत्यों से भरी अपमानजनक स्थिति की चरम सीमा हो गई तब जनमानस उद्वेलित हो उठा था। अपनी राजनैतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक-आर्थिक पराधीनता से मुक्ति के लिए सन् 1857 से सन् 1947 तक दीर्घावधि क्रान्ति यज्ञ की बलिवेदी पर अनेक राष्ट्रभक्तों ने तन-मन जीवन अर्पित कर दिया था। यह क्रान्ति करवटें लेती हुयी लोकचेतना की उत्ताल तरंगों से आप्लावित है। यह आजादी हमें यूँ ही नहीं प्राप्त हुई वरन् इसके पीछे शहादत का इतिहास है। लाल-बाल-पाल ने इस संग्राम को एक पहचान दी तो महात्मा गाँधी ने इसे अपूर्व विस्तार दिया। एक तरफ सत्याग्रह की लाठी और दूसरी तरफ भगतसिंह व आजाद जैसे क्रान्तिकारियों द्वारा पराधीनता के खिलाफ दिया गया इन्कलाब का अमोघ अस्त्र अँग्रेजों की हिंसा पर भारी पड़ा और अन्ततः 15 अगस्त 1947 के सूर्योदय ने अपनी कोमल रश्मियों से एक नये स्वाधीन भारत का स्वागत किया।

इतिहास अपनी गाथा खुद कहता है। सिर्फ पन्नों पर ही नहीं बल्कि लोकमानस के कंठ में, गीतों और किंवदंतियों इत्यादि के माध्यम से यह पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवाहित होता रहता है। वैसे भी इतिहास की वही लिपिबद्धता सार्थक और शाश्वत होती है जो बीते हुये कल को उपलब्ध साक्ष्यों और प्रमाणों के आधार पर यथावत प्रस्तुत करती है। जरूरत है कि इतिहास की उन गाथाओं को भी समेटा जाय जो मौखिक रूप में जन-जीवन में विद्यमान है, तभी ऐतिहासिक घटनाओं का सार्थक विश्लेषण हो सकेगा। लोकलय की आत्मा में मस्ती और उत्साह की सुगन्ध है तो पीड़ा का स्वाभाविक शब्द स्वर भी। कहा जाता है कि पूरे देश में एक ही दिन 31 मई 1857 को क्रान्ति आरम्भ करने का निश्चय किया गया था, पर 29 मार्च 1857 को बैरकपुर छावनी के सिपाही मंगल पाण्डे की शहादत से उठी ज्वाला वक़्त का इन्तज़ार नहीं कर सकी और प्रथम स्वाधीनता संग्राम का आगाज़ हो गया। मंगल पाण्डे के बलिदान की दास्तां को लोक चेतना में यूँ व्यक्त किया गया है-

"जब सत्तावनि के रारि भइलि/ बीरन के बीर पुकार भइल/बलिया का मंगल पाण्डे के/ बलिवेदी से ललकार भइल/मंगल मस्ती में चूर चलल/ पहिला बागी मसहूर चलल/गोरनि का पलटनि का आगे/ बलिया के बाँका सूर चलल।"

कहा जाता है कि 1857की क्रान्ति की जनता को भावी सूचना देने हेतु और उनमें सोयी चेतना को जगाने हेतु 'कमल' और 'चपाती' जैसे लोकजीवन के प्रतीकों को संदेशवाहक बनाकर देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भेजा गया। यह कालिदास के मेघदूत की तरह अतिरंजना नहीं अपितु एक सच्चाई थी। क्रान्ति का प्रतीक रहे 'कमल' और 'चपाती' का भी अपना रोचक इतिहास है। किंवदन्तियों के अनुसार एक बार नाना साहब पेशवा की भेंट पंजाब के सूफी फकीर दस्सा बाबा से हुई। दस्सा बाबा ने तीन शर्तों के आधार पर सहयोग की बात कही- सब जगह क्रान्ति एक साथ हो, क्रान्ति रात में आरम्भ हो और अँग्रेजों की महिलाओं व बच्चों का कत्लेआम न किया जाय। नाना साहब की हामी पर अलौकिक शक्तियों वाले दस्सा बाबा ने उन्हें अभिमंत्रित कमल के बीज दिये तथा कहा कि इनका चूरा मिली आटे की चपातियाँ जहाँ-जहाँ वितरित की जायेंगी, वह क्षेत्र विजित हो जायेगा। फिर क्या था, गाँव-गाँव तक क्रान्ति का संदेश फैलाने के लिए चपातियाँ भेजी गईं। कमल को तो भारतीय परम्परा में शुभ माना जाता है पर चपातियों को भेजा जाना सदैव से अँग्रेज अफसरों के लिए रहस्य बना रहा। वैसे भी चपातियों का सम्बन्ध मानव के भरण-पोषण से है। विचारक वी. डी. सावरकर ने एक जगह लिखा है- **"हिन्दुस्तान में जब भी क्रान्ति का मंगल कार्य हुआ, तब ही क्रान्ति-दूतों चपातियों द्वारा देश के एक छोर से दूसरे छोर तक इस पावन संदेश को पहुँचाने के लिये इसी प्रकार का अभियान चलाया गया था क्योंकि वेल्लोर के विद्रोह के समय में भी ऐसी ही चपातियों ने सक्रिय योगदान दिया था।"**चपाती (रोटी) की महत्ता मौलवी इस्माईल मेरठी की इन पंक्तियों में देखी जा सकती है- "**मिले खुश्क रोटी जो आजाद रहकर/तो वह खौफो जिल्लत के हलवे से बेहतर/जो टूटी हुई झोंपड़ी वे जरर हो/भली उस महल से जहाँ कुछ खतर हो।"**

1857 की क्रान्ति वास्तव में जनमानस की क्रान्ति थी, तभी तो इसकी अनुगूँज लोक साहित्य में भी सुनायी पड़ती है। भारतीय स्वाधीनता का संग्राम सिर्फ व्यक्तियों द्वारा नहीं लड़ा गया बल्कि कवियों और लोक गायकों ने भी लोगों को प्रेरित करने में प्रमुख भूमिका निभायी। लोगों को इस संग्राम में शामिल होने हेतु प्रकट भाव को लोकगीतों में इस प्रकार व्यक्त किया गया- "**गाँव-गाँव में डुग्गी बाजल, बाबू के फिरल दुहाई/लोहा चबवाई के नेवता बा, सब जन आपन दल बदल/बा जन गंवकई के नेवता, चूड़ी फोरवाई के नेवता/सिंदूर पोंछवाई के नेवता बा, रांड कहवार के नेवता।**" राजस्थान के राष्ट्रवादी कवि शंकरदान सामोर ने मुखरता के साथ अँग्रेजों की गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ देने का आह्वान किया- "**आयौ औसर आज, प्रजा परव पूरण पालण/आयौ औसर आज, गरब गोरां रौ गालण/आयौ औसर आज, रीत रारवण हिंदवाणी/ आयौ औसर आज,विकट रण खाग बजाणी/फाल हिरण चुक्या फटक, पाछो फाल न पावसी/आजाद हिन्द करवा अवर, औसर इस्यौ न आवसी।**"1857 की लड़ाई आर-पार की लड़ाई थी। हर कोई चाहता था कि वह इस संग्राम में अँग्रेजों के विरुद्ध जमकर लड़े। यहाँ तक कि ऐसे नौजवानों को जो घर में बैठे थे, महिलाओं ने लोकगीत के माध्यम से व्यंग्य कसते हुए प्रेरित किया- ' ' **लागे सरम लाज घर में बैठ जाहु/मरद से बनिके लुगइया आए हरि/ पहिरि के साड़ी, चूड़ी, मुंहवा छिपाई लेहु/ राखि लेई तोहरी पगरइया आए हरि।"**

1857 की जनक्रान्ति' का गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने भी बड़ा जीवन्त वर्णन किया है। उनकी कविता पढ़कर मानो 1857, चित्रपट की भाँति आँखों के सामने छा जाता है- "**सम्राट बहादुरशाह 'जफर', फिर आशाओं के केन्द्र बने/सेनानी निकले गाँव-गाँव, सरदार अनेक नरेन्द्र बने/लोहा इस भाँति लिया सबने, रंग फीका हुआ फिरंगी का/हिन्दू-मुस्लिम हो गये एक,रह गया न नाम दुरंगी का/ अपमानित सैनिक मेरठ के, फिर स्वाभिमान से भड़क उठे/ घनघोर बादलों-से गरजे, बिजली बन-बनकर कड़क उठे/हर तरफ क्रान्ति ज्वाला दहकी, हर ओर शोर था जोरों का/ पुतला बचने पाये न कहीं पर, भारत में अब गोरों का।"**

1857 की क्रान्ति की गूँज दिल्ली से दूर पूर्वी उत्तर प्रदेश के इलाकों में भी सुनायी दी थी। वैसे भी उस समय तक अँग्रेजी फौज में ज्यादातर सैनिक इन्हीं क्षेत्रों के थे। स्वतंत्रता की गाथाओं में इतिहास प्रसिद्ध चौरीचौरा की डुमरी रियासत बंधू सिंह का नाम आता है, जो कि 1857 की क्रान्ति के दौरान अँग्रेजों का सर कलम करके और चौरीचौरा के समीप स्थित कुसुमी के जंगल में अवस्थित माँ तरकुलहा देवी के स्थान पर इसे चढ़ा देते। कहा जाता है कि एक गद्दार के चलते अँग्रेजों की गिरफ्त में आये बंधू सिंह को जब फाँसी दी जा रही थी, तो सात बार फाँसी का फन्दा ही टूटता रहा। यही नहीं जब फाँसी के फन्दे से उन्होंने दम तोड़ दिया तो उस पेड़ से रक्तस्राव होने लगा जहाँ बैठकर वे देवी से अँग्रेजों के खिलाफ लड़ने की शक्ति माँगते थे। पूर्वांचल के अंचलों में अभी भी यह पंक्तियाँ सुनायी जाती हैं- "**सात बार टूटल जब, फांसी के रसरिया/ गोरवन के अकिल गईल चकराय/असमय पड़ल माई गाढ़े में परनवा/अपने ही गोदिया में माई लेतु तू सुलाय/बंद भईल बोली रुकि गइली संसिया/नीर गोदी में बहाते, लेके बेटा के लशिया।"**

भारत को कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था। पर अँग्रेजी राज ने हमारी सभ्यता व संस्कृति पर घोर प्रहार किये और यहाँ की अर्थव्यवस्था को भी दयनीय अवस्था में पहुँचा दिया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इस दुर्दशा का मार्मिक वर्णन किया है- ' ' **रोअहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई/हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई/सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो/सबके पहले जेहि सभ्य विधाता कीनो/ सबके पहिले जो रूप-रंग रस-भीनो/सबके पहिले विद्याफल**

जिन गहि लीनो/अब सबके पीछे सोई परत लखाई/हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।"

आजादी की सौगात भीख में नहीं मिलती बल्कि उसे छीनना पड़ता है। इसके लिये ज़रूरी है कि समाज में कुछ नायक आगे आयें और षेश समाज उनका अनुसरण करे। ऐसे नायकों की चर्चा गाँव-गाँव की चौपालों पर देखी जा सकती थी। गुरिल्ला शैली के कारण फिरंगियों में दहशत और आतंक का पर्याय बन क्रान्ति की ज्वाला भड़काने वाले तात्या टोपे से अँग्रेजी रूह भी काँपती थी फिर उनका गुणगान क्यों न हो। राजस्थानी कवि शंकरदान सामौर तात्या की महिमा'हिन्द नायक' के रूप में गाते हैं- "**जठै गयौ जंग जीतियो, खटकै बिण रण खेत/तकड़ौ लडियाँ तांतियो, हिन्द थान रै हेत/मचायो हिन्द में आखी,तहल कौ तांतियो मोटो/धोम जेम घुमायो लंक में हणूं घोर/रचाओ ऊजली राजपूती रो आखरी रंग/जंग में दिखायो सूवायो अथग जोर।**" इसी प्रकार शंकरपुर के राना बेनीमाधव सिंह की वीरता को भी लोकगीतों में चित्रित किया गया है- "**राजा बहादुर सिपाही अवध में/धूम मचाई मोरे राम रे/ लिख लिख चिठिया लाट ने भेजा/आब मिलो राना भाई रे/ जंगी खिलत लंदन से मंगा दूं/ अवध में सूबा बनाई रे।**"

1857 की क्रान्ति में जिस मनोयोग से पुरुष नायकों ने भाग लिया, महिलायें भी उनसे पीछे न रहीं। लखनऊ में बेगम हज़रत महल तो झाँसी में रानी लक्ष्मीबाई ने इस क्रान्ति की अगुवाई की। बेगम हज़रत महल ने लखनऊ की हार के बाद अवध के ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर क्रान्ति की चिन्गारी फैलाने का कार्य किया-"**मजा हज़रत ने नहीं पाई/ केसर बाग लगाई/कलकत्ते से चला फिरंगी/ तंबू कनात लगाई/पार उतरि लखनऊ का/ आयो डेरा दिहिस लगाई/आसपास लखनऊ का घेरा/सड़कन तोप धराई।**" रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी वीरता से अँग्रेजों के दाँत खट्टे कर दिये। उनकी मौत पर जनरल ह्यूगरोज ने कहा था कि- "यहाँ वह औरत सोयी हुयी है, जो त्रिदोही में एकमात्र मर्द थी।" 'झाँसी की रानी' नामक अपनी कविता में सुभद्राकुमारी चौहान 1857 की उनकी वीरता का बखान करती हैं- "**चमक उठी सन् सत्तावन में/वह तलवार पुरानी थी/बुन्देले हरबोलों के मुँह/हमने सुनी कहानी थी/ खूब लडी मर्दानी वह तो/झाँसी वाली रानी थी/खूब लड़ी मरदानी/ अरे झाँसी वारी रानी/पुरजन पुरजन तोपें लगा दई/ गोला चलाए असमानी/अरे झाँसी वारी रानी/ खूब लड़ी मरदानी/सबरे सिपाइन को पैरा जलेबी/ अपन चलाई गुरधानी।**"

1857 की क्रान्ति में शाहाबाद के 80 वर्षीय कुँअर सिंह को दानापुर के विद्रोही सैनिकों द्वारा 27 जुलाई को आरा शहर पर कब्जा करने के बाद नेतृत्व की बागडोर सौपी गयी। बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के तमाम अंचलों में शेर बाबु कुँअर सिंह ने घूम-घूम कर 1857 की क्रान्ति की अलख जगायी। आज भी इस क्षेत्र में कुँअर सिंह को लेकर तमाम किंवदन्तियाँ मौजूद है। इस क्षेत्र के अधिकतर लोकगीतों में जनाकांक्षाओं को असली रूप देने का श्रेय बाबु कुँअर सिंह को दिया गया है- "**बक्सर से जो चले कुँअर सिंह पटना आकर टीक/पटना के मजिस्टर बोले करो कुँअर को ठीक/अतुना बात जब सुने कुँअर सिंह दी बंगला फुंकवाई/गली-गली मजिस्टर रोए लाट गये घबराई।**"

1857 की क्रान्ति के दौरान ज्यों-ज्यों लोगो को अँग्रेजों की पराजय का समाचार मिलता वे खुशी से झूम उठते। अजेय समझे जाने वाले अँग्रेजों का यह हश्र, उस क्रान्ति के साक्षी कवि सखवत राय ने यूँ पेश किया है- "**गिद्ध मेडराई स्वान स्यार आनंद छाये/कहिं गिरे गोरा कहीं हाथी बिना सूंड के।**"1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम ने अँग्रेजी हुकूमत को हिलाकर रख दिया। बौखलाकर अँग्रेजी हुकूमत ने लोगों को फाँसी दी, पेड़ों पर समूहों में लटका कर मृत्यु दण्ड दिया और तोपों से बाँधकर दागा- "**झूलि गइलें अमिली के डरियाँ/बजरिया गोपीगंज कई रहलि।**" वहीं जिन जीवित लोगों से अँग्रेजी हुकूमत को ज्यादा खतरा महसूस हुआ, उन्हें कालापानी की सजा दे दी। तभी तो अपने पति को कालापानी भेजे जाने पर एक महिला 'कजरी' के बोलो में कहती है- "**अरे रामा नागर नैया जाला काले पनियां रे हरी/सबकर नैया जाला कासी हो बिसेसर रामा/नागर नैया जाला काले पनियां रे हरी/घरवा में रोवै नागर, माई और बहिनियां रामा/से जिया पैरोवे बारी धनिया रे हरी।**"

बंगाल विभाजन के दौरान स्वदेशी- बहिष्कार- प्रतिरोध का नारा खूब चला। अँग्रेजी कपड़ों की होली जलाना और उनका बहिष्कार करना देश भक्ति का शगल बन गया था, फिर चाहे अँग्रेजी कपड़ों में ब्याह रचाने आये बाराती ही हों- "**फिर जाहु-फिरि जाहु घर का समधिया हो/मोर धिया रहिहैं कुंआरि/ बसन उतारि सब फेंकहु विदेशिया हो/ मोर पूत रहिहैं उघार/ बसन सुदेसिया मंगाई पहिरबा हो/ तब होइहै धिया के बियाह।**"

जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड अँग्रेजी हुकूमत की बर्बरता व नृशंसता का नमूना था। इस हत्याकाण्ड ने भारतीयों विशेषकर नौजवानों की आत्मा को हिलाकर रख दिया। गुलामी का इससे वीभत्स रूप हो भी नहीं सकता। सुभद्राकुमारी चौहान ने 'जलियावाले बाग में वसंत' नामक कविता के माध्यम से श्रद्धांजलि अर्पित की है- "**कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा-खाकर/कलियाँ उनके लिए गिराना थोड़ी लाकर/आशाओं से भरे हृदय भी छिन्न हुए हैं/ अपने प्रिय-परिवार देश से भिन्न हुए हैं/कुछ कलियाँ अधखिली यहाँ इसलिए चढ़ाना/करके उनकी याद अश्रु की ओस बहाना/तड़प-तड़पकर वृद्ध मरे हैं गोली खाकर/शुष्क पुष्प कुछ वहाँ गिरा देना तुम जाकर/यह सब करना, किन्तु बहुत धीरे-से आना/यह है शोक-स्थान, यहाँ मत शोर मचाना।**"

कोई भी क्रान्ति बिना खून के पूरी नहीं होती, चाहे कितने ही बड़े दावे किये जायें। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में एक ऐसा भी दौर आया जब कुछ नौजवानों ने अँग्रेजी हुकूमत की चूल हिला दी, नतीजन अँग्रेजी सरकार उन्हें जेल में डालने के लिये तड़प उठी। 11 अगस्त 1908 को जब 15 वर्षीय क्रान्तिकारी खुदीराम बोस को अँग्रेज सरकार ने निर्ममता से फाँसी पर लटका दिया तो मशहूर उपन्यासकार प्रेमचन्द के अन्दर का देशप्रेम भी हिलोरें मारने लगा और वे खुदीराम बोस की एक तस्वीर बाजार से खरीदकर अपने घर लाये तथा कमरे की दीवार पर टाँग दिया। खुदीराम बोस को फाँसी दिये जाने से एक वर्ष पूर्व ही उन्होंने 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' नामक अपनी प्रथम कहानी लिखी थी, जिसके अनुसार- 'खून की वह आखिरी बूँद जो देश की आजादी के लिये गिरे, वही दुनिया का सबसे अनमोल रतन है।' उस समय अँग्रेजी सैनिकों की पदचाप सुनते ही बहनें चौकन्नी हो जाती थीं। तभी तो सुभद्राकुमारी चौहान ने 'बिदा' में लिखा कि- "**गिरफ्तार होने वाले हैं/आता है वारंट अभी/धक-सा हुआ हृदय, मैं सहमी/हुए विकल आशंक सभी/मैं पुलकित हो उठी! यहाँ भी/आज गिरफ्तारी होगी/फिर जी धड़का, क्या भैया की / सचमुच तैयारी होगी।**" आजादी के दीवाने सभी थे। हर पत्नी की दिली तमन्ना होती थी कि उसका भी पति इस दीवानगी में शामिल हो। तभी तो पत्नी पति के लिए गाती है- "**जागा बलम गाँधी टोपी वाले आई गइलैं..../राजगुरू सुखदेव भगत सिंह हो/तहरे जगावे बदे फाँसी पर चढ़ाय गइलै।**"

सरदार भगत सिंह क्रान्तिकारी आन्दोलन के अगुवा थे, जिन्होंने हँसते-हँसते फासी के फन्दों को चूम लिया था। एक लोकगायक भगत सिंह के इस तरह जाने को बर्दाश्त नहीं कर पाता और गाता है- "**एक-एक क्षण बिलम्ब का मुझे यातना दे रहा है – तुम्हारा फंदा मेरे गरदन में छोटा क्यों पड़ रहा है/मैं एक नायक की तरह सीधा स्वर्ग में जाऊँगा/अपनी-अपनी फरियाद धर्मराज को सुनाऊँगा/मैं उनसे अपना वीर भगत सिंह माँग लाऊँगा।**" इसी प्रकार चन्द्रशेखर आजाद की शहादत पर उन्हें याद करते हुए एक अंगिका लोकगीत में कहा गया- "**हौ आजाद त्वौं अपनौ प्राणे कऽ /आहुति दै के मातृभूमि कै आजाद करैलहों/तोरो कुर्बानी हम्मै जिनगी भर नैऽ भुलैबे/देश तोरो रिनी रहेते।**" सुभाष चन्द्र बोस ने नारा दिया कि- "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा,फिर क्या था पुरूषों के साथ-साथ महिलाएँ भी उनकी फौज में शामिल होने के लिए बेकरार हो उठ- "**हरे रामा सुभाष चन्द्र ने फौज सजायी रे हारी/ कड़ा-छड़ा पैंजनिया छोड़बै, छोड़बै हाथ कंगनवा रामा/ हरे रामा, हाथ में झण्डा लै के जुलूस निकलबैं रे हारी।**"

महात्मा गाँधी आजादी के दौर के सबसे बड़े नेता थे। चरखा कातने द्वारा उन्हने स्वावलम्बन और स्वदेशी का रूझान जगाया। नौजवान अपनी-अपनी धुन में गाँधी जी को प्रेरणास्त्रोत मानते और एक स्वर में गाते- "**अपने हाथे चरखा चलउबै/हमार कोऊ का करिहैं/गाँधी बाबा से लगन लगउबै/हमार कोई का करिहैं।**"1942 में जब गाँधी जी ने 'अँग्रेजों भारत छोड़ो' का आह्वान किया तो ऐसा लगा कि 1857 की क्रान्ति फिर से जिन्दा हो गयी हो। क्या बूढ़े, क्या नवयुवक, क्या पुरुष, क्या महिला, क्या किसान, क्या जवान..... सभी एक स्वर में गाँधी जी के पीछे हो लिये। ऐसा लगा कि अब तो अँग्रेजों को भारत छोड़कर जाना ही होगा। गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने इस ज्वार को महसूस किया और इस जन क्रान्ति को शब्दों से यूँ सँवारा-"**बीसवीं सदी के आते ही, फिर उमड़ा जोश जवानों में/हड़कम्प मच गया नए सिरे से, फिर शोषक शैतानों में/सौ बरस भी नहीं बीते थे सन् बयालीस पावन आया/लोगों ने समझा नया जन्म लेकर सन् सत्तावन आया/आजादी की मच गई धूम फिर शोर हुआ आजादी का/फिर जाग उठा यह सुप्त देश चालीस कोटि आबादी का।**"

भारत माता की गुलामी की बेड़ियाँ काटने में असंख्य लोग शहीद हो गये, बस इस आस के साथ कि आने वाली पीढ़ियाँ स्वाधीनता की बेला में साँस ले सकें। इन शहीदों की तो अब बस यादें बची हैं और इनके चलते पीढ़ियाँ मुक्त जीवन के सपने देख रही हैं। कविवर जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' इन कुर्बानियों को व्यर्थ नहीं जाने देते- "**शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले/वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा/कभी वह दिन भी आएगा जब अपना राज देखेंगे/जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमाँ होगा।**"

देश आजाद हुआ। 15अगस्त 1947के सूर्योदय की बेला में विजय का आभास हो रहा था। फिर कवि लोकमन को कैसे समझाता। आखिर उसके मन की तरंगें भी तो लोक से ही संचालित होती हैं। कवि सुमित्रानन्दन पंत इस सुखद अनुभूति को यूँ सँजोते हैं-"**चिर प्रणम्य यह पुण्य अहन्, जय गाओ सुरगण/आज अवतरित हुई चेतना भू पर नूतन/नव भारत,फिर चीर युगों का तमस आवरण/तरुण-अरुण-सा उदित हुआ परिदीप्त कर भुवन/सभ्य हुआ अब विश्व, सभ्य धरणी का जीवन/ज खुले भारत के संग भू के जड़ बंधन/ शांत हुआ अब युग-युग का भौतिक संघर्षण/मुक्त चेतना भारत की यह करती घोषण!**"

देश आजाद हो गया, पर अँग्रेज इस देश की सामाजिक-सांस्कृतिक-आर्थिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर गये। एक तरफ आजादी की उमंग, दूसरी तरफ गुलामी की छायाओं का डर..... गिरिजाकुमार माथुर 'पन्द्रह अगस्त' की बेला पर उल्लास भी व्यक्त करते हैं और सचेत भी करते हैं- "**आज जीत की रात, पहरुए, सावधान रहना/ खुले देश के द्वार, अचल दीपक समान रहना/ऊँची हुई मशाल हमारी, आगे कठिन डगर है/शत्रु हट गया, लेकिन उसकी छायाओं का डर है/शोषण से मृत है समाज,कमजोर हमारा घर है/**

किन्तु आ रही नई जिंदगी,यह विश्वास अमर है।"कवि रसूल मियाँ 'पन्द्रह अगस्त' की बेला पर उल्लास भी व्यक्त करते हैं और सचेत भी करते हैं – '

'पंद्रह अगस्त सन् सैंतालिस के सुराज मिल/बड़ा कठिन से ताज मिल/सुन ला हिन्दू-मुसलमान भाई/अपना देशवा के कर ला भलाई/तोहरे हथवा में हिन्द माता के लाज मिल/बड़ा कठिन से ताज मिलल।" आजादी भले ही मिल गई पर देश में सांप्रदायिकता व नफरत के बीज भी बो गई। 'बांटो और राज करो' की तर्ज पर अंग्रेजों ने जाते-जाते देश के दो टुकड़े कर दिए। आजादी के जश्न से परे महात्मा गांधी निकल पड़े ऐसे ही दंगाइयों को समझाने पर उनकी नियति में कुछ और ही लिखा था। अंततः 30 जनवरी 1948 को गाँधी जी की गोली मारकर हत्या कर दी गई। फिर भला लोक-कवि का आहत मन भला कैसे शांत रहता-

''केमारलहमरा गाँधी के गोली हो/धमाधम तीन गो/कल्हीए आजादी मिल/आज चलल गोली/गाँधी बाबा मारल गइले/देहली के गली हो/धमाधम तीन गो/पूजा में जात रहले बिरला भवन में/दुशमनवा बइठल रहल पाप लिए मन में/गोलिया चला के बनल बली हो/धमाधम तीन गो (कवि रसूल मियाँ)।"

आजादी की कहानी सिर्फ एक गाथा भर नहीं है बल्कि एक दास्तान है कि क्यों हम बेड़ियों में जकड़े, किस प्रकार की यातनायें हमने सहीं और शहीदों की किन कुर्बानियों के साथ हम आजाद हुये।यह ऐतिहासिक घटनाक्रम की मात्र एक शोभा यात्रा नहीं अपितु भारतीय स्वाभिमान का संघर्ष, राजनैतिक दमन व आर्थिक शोषण के विरुद्ध लोक चेतना का प्रबुद्ध अभियान एवं सांस्कृतिक नवोन्मेष की दास्तान है। आजादी का अर्थ सिर्फ राजनैतिक आजादी नहीं अपितु यह एक विस्तृत अवधारणा है, जिसमें व्यक्ति से लेकर राष्ट्र का हित व उसकी परम्परायें छुपी हुई हैं। जरूरत है हम अपनी कमजोरियों का विश्लेषण करें, तद्नुसार उनसे लड़ने की चुनौतियाँ स्वीकारें और नए परिवेश में नए जोश के साथ आजादी के नये अर्थों के साथ एक सुखी व समृद्ध भारत का निर्माण करें।

मुक्तक

टीकम चन्दर ढोडरिया

छबड़ा , जिला बाराँ

कोई पोथी या किताब नहीं
कोई मिन्नत या रुआब नहीं
उससे मिलना है मिलों दिल से
कोई पर्दा या नकाब नहीं

**

सपनों में रोज सताते हो
मिलते हो तो शरमाते हो
क्या प्यार इसी को कहते हैं
हाँ हाँ कर ना कर जाते हो

**

मन को मंदिर बनाओ तो
प्रेम की ज्योति जलाओ तो
कान्हा तो दोड़े आयेंगे
मीरा सी पीर जगाओ तो

**

दाँतों में दबा दुपट्टे को, जब तुमने आँख चुराई थी
सारी दौलत दुनिया भर की, मेरी झोली में आई थी
मैं भी कब तक रोके रखता, संकेतों के प्रति उत्तर को
टूट गये थे संयम सारे जब ली तुमने अँगड़ाई थी

**

दुर्गम पथ सा जीवन मेरा, प्रीति तुम्हारी साथ रही
संकट में जब सबने छोड़ा, प्रीति तुम्हारी साथ रही
लाज रखी आँखों ने इतनी,आँसू बाहर ना छलके
बिखर गया होता मैं कब का, प्रीति तुम्हारी साथ रही

**

व्याधियाँ जगती रहीं,गीत मैं गाता रहा
पीर उर पलती रहीं, गीत मैं गाता रहा
वर्तिका साहस भरी, तमस से कब है डरी
आँधियाँ चलती रहीं,गीत मैं गाता रहा

**

आयी जो याद उनकी, आँसू छलक पड़े
कहने को बात दिल की, आँसू छलक पड़े
बदले थे पृष्ठ यूँ ही, मैंने किताब के
सूखे मिले गुलाब तो, आँखें छलक पड़ी

रश्मि तिवारी
लखनऊ
rashmitewary@hotmail.com

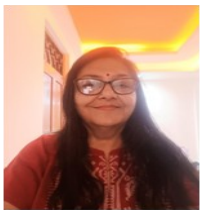

आल्हा

भारतीय संस्कृति में अध्यात्म, वीरता एवं श्रृंगार रस का अद्भुत समावेश है। खासतौर पर हिंदी क्षेत्र में मध्यकाल की बात करें तो इस दौर में जहां एक तरफ रामचरितमानस जैसी आध्यात्मिक कृति जनमानस को महाकवि तुलसीदास ने दी तो दुसरी तरफ मलिक मोहम्मद जायसी ने पद्मावत महाकाव्य के द्वारा श्रृंगार रस का अनुपम व्याख्यान लोकमानस के समक्ष प्रस्तुत किया। वही कविराज जगनिक ने वीर रस से ओत-प्रोत 'आल्ह खण्ड' का निर्माण कर डाला।

'आल्ह खण्ड', 'पृथ्वीराज रासो' के महोबा-खण्ड की कथा से समानता रखते हुए भी एक स्वतंत्र रचना है। वाचन गेय परंपरा के कारण इसमें दोषों तथा परिवर्तनों का समावेश हो गया है। 'आल्ह खण्ड' वीर रस की मनोरम गाथा है, जिसमें त्याग, प्रेम, उत्साह और गौरवमय मर्यादा का सुन्दर प्रस्तुतिकरण है।

आल्हा मात्रिक छन्द,सवैया,सोलह-पन्द्रह
यति अनिवार्य।
गरु-लघु चरण अन्त में रखिये, सिर्फ वीरता हो स्वीकार्य।
अलंकार अतिशयताकारक, करे राई को तुरत पहाड़।
ज्यों मिमयाती बकरी सोचे, गुँजा रही वन लगा दहाड़।

बुंदेलखंड की वीर भूमि महोबा और आल्हा एक दूसरे के पर्याय हैं। महोबा की सवेरा आल्हा से प्रारंभ हो उसी में समाप्त होता है । बुंदेलखंड का जन-जन आज भी जोश ओर हर्षौल्लास के साथ गाता है-

"बुंदेलखंड की सुनो कहानी बुंदेलों की बानी में,
पानीदार यहां का घोडा, आग यहां के पानी में।"

महोबा के ढेर सारे स्मारक आज भी आल्हा और ऊदल वीरों की याद दिलाते हैं। सामाजिक संस्कार आल्हा की गायन के बिना पूर्ण नहीं होता। आल्हा का व्यक्तित्व ही कुछ ऐसा था कि 800 वर्षो के बीत जाने के बावजूद वह आज भी बुंदेलखंड के प्राण स्वरूप हैं ।

रन में दपक -दप बोले तलवार,
पनपन-पनपन तीर बोलत है,
कहकह कहे अगिनिया बाण,

जगनिक (1250) कालिंजर के चंदेल राजा परमाल (1165-1203 ई.) का भाट था। इसने परमाल के सामंत और सहायक महोबा के आल्हा और ऊदल को नायक मानकर 'आल्ह खण्ड' नामक ग्रंथ की रचना की जिसे लोकमानस में 'आल्हा' नाम से प्रसिध्दि मिली। इसे जनता ने अपनाया और उत्तर भारत में इसका इतना प्रचार हुआ कि धीरे-धीरे मूल काव्य संभवत: लुप्त हो गया। विभिन्न बोलियों में इसके भिन्न-भिन्न स्वरूप मिलते हैं। अनुमान है कि मूलग्रंथ बहुत बड़ा रहा होगा। 1865 ई. में फर्रूखाबाद के कलक्टर सर चार्ल्स इलियट ने 'आल्ह खण्ड' नाम से इसका संग्रह कराया जिसमें कन्नौजी भाषा की बहुलता है। 'आल्ह खण्ड' जन समूह की निधि है। जिसने रचना काल से लेकर आज तक भारतीयों के हृदय में साहस और त्याग का मंत्र फूँका।

बारह बरिस लै कूकर जीऐं ,औ तेरह लौ जिऐं सियार,
बरिस अठारह छत्री जिऐं, आगे जीवन को धिक्कार,

वीर रस से भरे हुए ये आल्हा लोक गीत बुंदेलखंड का अभिमान और पहचान भी। ढोलक, झांझड़ और मंजीरे की संगत में आल्हा गायक तलवार चलाते हुए जब ऊंची आवाज़ में आल्हा गाते हैं, तो माहौल जोश से भर जाता है।

जा दिन जनम भयौ आल्हा का धरती धंसी अढ़ाई हांथ।

ये गीत कई सदियों से बुंदेलखंड की संस्कृति का हिस्सा रहे हैं। आल्हा और ऊदल, चन्देल राजा परमल के सेनापति दसराज के पुत्र थे। वे बनाफर वंश के थे, जो कि चन्द्रवंशी क्षत्रिय होते है। मध्य-काल के आल्हा-ऊदल की गाथा क्षत्रिय शौर्य का प्रतीक है।

"अम्बर बेटा है जासर के अपना कटले बीर कटाय
जिन्ह के चलले धरती हीले डपटै गाछ झुराय
ओहि समन्तर रुदल पहुँचल बँगला में पहुँचल जाय
देखल सूरत रुदल के आल्हा मन में करे गुनान
देहिया देखें तोर धूमिल मुहवाँ देखों उदास"

आल्हा की उत्पत्ति बुंदेलखंड के महोबा जिले में हुई थी। यह लोकगीतों की एक विधा है। बुंदेलखंड के दो भाइयों (आल्हा और ऊदल) की वीरता की कहानियों का गेय रूप

हैं। यह गीत बुंदेली, बघेली और अवधी भाषा में लिखे गए हैं, जो मुख्यरूप से उत्तरप्रदेश के बुंदेलखंड और बिहार व मध्यप्रदेश के कुछ इलाक़ों में गाए जाते है। दुर्भाग्य से आल्हा के गवैये अब सिमटते जा रहे हैं, न पहले जैसे बुंदेली देहात रहे, न पहले जैसी चौमासे की बारिश, न वो कौतुहल, न वो उत्साह । हां, यादों का एक सिलसिला नदियाँ बन बरसते सावन में मचल उठता जरूर है। जिसकी फुहार में भीगकर विगत में लौटने जैसा प्रतीत होता है, जो बड़ा सुखमय लगता है।

"खट-खट-खट-खट तेगा बाजै। बोलै छपक-छपक तलवार।
चलै जुनब्बी औ गुजराती। ऊना चलै बिलायत क्यार॥
तेगा चटकैं बर्दवान के। कटि-कटि गिरैं सुघरुआ ज्वान।
पैदल के संग पैदल अभिरे। औ असवारन ते असवार॥
हौदा के संग हौदा मिलिगै। ऊपर पेशकब्ज की मार॥
कटि-कटि शीश गिरै धरनी में। उठि-उठि रूंड करै तलवार।"

आल्हा गायक पीर खां - मूसानगर, कालीसिंह और तांती सिंह ने - कानपुर , आल्हा गायकी का विकास किया। कानपुर के रामखिलावन मिश्र, उन्नाव के लल्लू राम बाजपेयी, हमीरपुर के काशीराम प्रसिद्ध आल्हा गायक हैं। श्री बच्चा सिंह द्वारा महोबा में आल्हा गायन प्रशिक्षण विद्यालय "जगनिक शोध संस्थान' द्वारा स्थापित किया गया है। उन्नाव के लालू बाजपेयी ने गायकी को प्रदर्शनकारी कला बनाया है। हिन्दी फ़िल्मों में भी आल्हा को स्थान दिया गया है। मंगल पान्डे, दबंग और ओंकारा इसका उदाहरण हैं।

चढ़ी पालकी मल्हना रानी, जगनेरी में पहुँची जाये।
गओ हरकारा जगनायक पै, जगनिक सो कही सुनाय।
मल्हना आई दरवाजे पै जल्दी चलो हमारे साथ।
जगनिक आये और द्वार पै मल्हना छाती लियो लगाय।
रो रो मल्हना बात सुनाई हम पै चढ़ै पिथौरा राय।
नगर महोबा उन धिरवा लओ फाटक बन्द दये करवाय।
विपत्ति हमारी मेटन के हित तुम आल्हा को ल्यावो मनाय।

म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल ने तीन वर्ष में आल्हा खण्ड के पैंतिस पाठों एकत्र कर संकलित किया है। सन् १९९३ में आल्हा गायकी की चार शैली - महोबा, दतिया, सागर और नरसिंहपुर गायकों में प्रचलित पाई गई। इनके द्वारा गाये १४ युद्धों का संकलन तैयार किया गया। दतिया गायकी के प्रणेता स्व. श्री गंगोले थे। उन्होंने गायकी को शास्त्रीय संगत का पुट दिया। गायकी की शैली के दूसरे चरण में २१ ऐतिहासिक लड़ाइयों का प्रस्तुतिकरण हो गया है। भोजपुर, बिहार - क्षेत्र में आल्हा अत्यन्त लोकप्रिय वीर रस प्रधान लोक गाथा है। छिन्वाड़ा म.प्र. में आल्हा-ऊदल माहिल आदि की सवारियां घोड़ों पर कजलियों के मेले के अवसर पर निकलती है तब आल्हा का गायन सामूहिक रुप से किया जाता है।

पं० ललिता प्रसाद मिश्र ने अपने ग्रन्थ 'आल्हखण्ड की भूमिका' में आल्हा को युधिष्ठिर और ऊदल को भीम का साक्षात अवतार बताते हुए लिखा है - "यह दोनों वीर अवतारी होने के कारण अतुल पराक्रमी थे। ये प्राय: 12वीं विक्रमीय शताब्दी में पैदा हुए और 13वीं शताब्दी के पुर्वार्द्ध तक अतुलनीय पराक्रम दिखाते हुए वीरगति को प्राप्त हो गये। 12वीं सदी में राजा पृथ्वीराज चौहान से अपनी मातृभूमि को बचाने के लिए दोनों भाई वीरता से लड़े थे । हालांकि इस लड़ाई में आल्हा और ऊदल की हार हुई, लेकिन बुंदेलखंड में इन दोनों की वीरता के किस्से अब भी सुनने को मिल जाते हैं।

"परे दुशाला जो लो में जनु नद्दी में परो सिवार।
पगिया डारी जे लोहु में। मानो ताल फूल उतरायँ॥
परी शिरोही हैं ज्वानन की। मानो नाग रहे भन्नाय।
घैहा डारे रण में लोटैं। जिनके प्यास-प्यास रट लागि॥
मुर्चन-मुर्चन नचै बेंदुला। ऊदनि कहै पुकारि-पुकारि॥
नौकर चाकर तुम नाहीं हौ। तुम सब भैया लगौ हमार।
पाँव पिछाडी को ना धरियो। यारौ रखियो धर्म हमार॥
सन्मुख लडिकै जो मरि जैहो। होइहै जुगन-जुगन लौं नाम।
दै-दै पानी रजपूतन को। ऊदनि आगे दियो बढाय॥
झुके सिपाही महुबे वारे। जिनके मार-मार रट लागि।
यहाँ कि बातैं तो यहाँ छोडो। अब आगे के सुनो हवाल॥
लाखिन बोले पृथीराज ते। तुम सुनि लेउ वीर चौहान।
है कोउ क्षत्री तुम्हारे दल में। सन्मुख लडै हमारे साथ॥"

राजा ऊदल ने अपनी मातृभूमि की रक्षा हेतु पृथ्वीराज चौहान से युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त की । जब आल्हा को अपने छोटे भाई की वीरगति की खबर सुनाई दी तो वो अपना आपा खो बैठे और पृथ्वीराज चौहान की सेना पर मौत बनकर टूट पड़े। आल्हा के सामने जो आया मारा गया एक घण्टे के घनघोर युद्ध के बाद पृथ्वीराज और आल्हा आमने-सामने थे दोनों में भीषण युद्ध हुआ, पृथ्वीराज चौहान बुरी तरह घायल हुए। अंत में गुरु गोरखनाथ के कहने पर आल्हा ने पृथ्वीराज चौहान को जीवनदान दिया और उस महायोद्धा आल्हा ने नाथ पन्थ स्वीकार कर लिया। यह भी माना जाता है कि मां के परम भक्त आल्हा को मां शारदा का आशीर्वाद प्राप्त था, अत: पृथ्वीराज चौहान की सेना को पीछे हटना पड़ा था। मां के आदेशानुसार आल्हा ने अपनी तलवार (हथियार) शारदा मंदिर पर चढ़ाकर नोक टेढ़ी कर दी थी जिसे आज तक कोई सीधा नहीं कर पाया है। मंदिर परिसर में आज भी तमाम ऐतिहासिक महत्व के अवशेष संग्रहित हैं जो आल्हा और पृथ्वीराज चौहान के युध्द की साक्षी हैं।

मान्यता यह भी है कि शारदा मां ने आल्हा को उनकी भक्ति और वीरता से प्रसन्न होकर अमरता का वरदान दिया था। जन आस्था की बात करे तो आज भी रात आठ बजे मंदिर की आरती के बाद साफ-

सफाई होती है और फिर मंदिर के सभी कपाट बंद कर दिए जाते हैं। इसके बावजूद जब सुबह मंदिर को पुन: खोला जाता है तो मंदिर में मां की प्रतिमा पर पूजा के पुष्प समर्पित मिलते हैं। व्याप्त भावना के अनुसार माता शारदा के दर्शन हर दिन सबसे पहले आल्हा और ऊदल ही करते हैं।

हिंदी क्षेत्र के लोकमानस में आल्हा कितने गहरे उतरा है, इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि 1914-18 और 1939-45 के पहले और दूसरे विश्व युद्ध में अंग्रेजों ने सैनिकों में उत्साह भरने के लिए छावनियों में आल्हा कार्यक्रम आयोजित कराए जाते थे । यही नहीं प्रचीन समय में पुलिस की पासिंग आउट परेड में भी जवानों में वीरता और कर्तव्यपरायणता के लिए आल्हा सुनाया जाता रहा। आल्हा हिंदी क्षेत्र की अमूल्य धरोहर है, लेकिन विदेशी विद्वानों ने भारतीय लेखकों से पहले ही इस पर काम शुरू कर दिया था। हिंदी के प्रसिद्ध ब्रिटिश मूल के लेखक ग्रियर्सन ने आल्हा की लोकप्रियता को देखते हुए इसके कई खंडों का अंग्रेजी में अनुवाद कराया था। इनमें 'मारू फ्यूड' यानी 'माड़ो की लड़ाई' और 'नाइन लैख चेन' यानी 'नौलखा हार की लड़ाई' जैसे खंड विशेषतौर पर उल्लेखनीय है। यही नहीं अमेरिकी रिसर्चर डॉ. केरिन शोमर ने तो आल्हा की यशोगाथा की तुलना में यूरोप में ओजस्वी कवि होमर द्वारा रचित 'इलियड और ओडिसी' के समकक्ष स्थान दिया है। ग्रियर्सन द्वारा 'ब्रह्म का विवाह' खंड का अंग्रेजी अनुवाद 'द ले ऑफ ब्रह्मज मैरिज: एन एपिसोड ऑफ द आल्हखंड' आज भी उपलब्ध है। ग्रियर्सन ने इसकी भूमिका में लिखा है कि महोबा, कानपुर उन्नाव, झांसी, पटना से लेकर दिल्ली तक आल्हा से अधिक कोई भी कहानी जनमानस में इतनी व्याप्त नही है। आम मान्यता है कि गंगा दशहरा से लेकर दशहरे तक यानी बरसात के मौसम में इसका गायन किया जाता है। इसके लिए कहा भी जाता है कि-

'भरी दुपहरी सरवन गाइय, सोरठ गाइये आधी रात।
आल्हा पंवाड़ा वा दिन गाइय, जा दिन झड़ी लगे बरसात।'

छत्रपति शिवाजी की तरह था आल्हा का सामाजिक न्याय। आल्हा और ऊदल का स्तुतिगान भले ही योद्धा के तौर पर किया गया है, लेकिन जातियों से परे समूचे समाज के लिए आल्हा का नायक होना शायद इसलिए भी संभव हो पाया था क्योंकि वे शिवाजी के समान समावेशी सेनापति थे। जैसे महाराष्ट्र समेत देश भर में हिंदवी साम्राज्य की स्थापना कर जननायक बने शिवाजी। उनके राज्य और सेना में सभी वर्गों का महत्व था। वैसी ही नीति आल्हा की भी थी। 'आल्ह खंड' के मुताबिक, उनकी सेना में लला तमोली, धनुवा तेली, रूपन बारी, चंदर बढ़ई, हल्ला, देबा पंडित जैसे लोग सेना के मार्गदर्शक थे। आल्हखंड की पंक्तियां इसका प्रमाण हैं-

'मदन गड़रिया धन्ना गूलर आगे बढ़े वीर सुलखान,
रूपन बारी खुनखुन तेली इनके आगे बचे न प्रान।
लला तमोली धनुवां तेली रन में कबहुं न मानी हार,
भगे सिपाही गढ़ माड़ौ के अपनी छोड़-छोड़ तलवार।।'

जिस समय आल्हा और उदल जैसे पराक्रमी मानव धरा पर अवतरित हुए हो उस शताब्दी को वीरों की सदी कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी । इन अलौकिक वीरगाथाओं को सुनकर सामान्य व्यक्ति जोश में भर अनेक साहसिक काम कर डालते हैं। मध्य-काल में आल्हा-ऊदल की गाथा क्षत्रिय शौर्य का प्रतीक दर्शाती है।

संदर्भ:

1 - मिश्र, पं० ललिता प्रसाद (2007). आल्हखण्ड (15 संस्करण). पोस्ट बॉक्स 85 लखनऊ 226001: तेजकुमार बुक डिपो (प्रा०) लि०. पृ॰ 1-11 (महोबे का इतिहास). पाठ "आल्हा ने 52 लड़ाईयां लडी और जीती कभी कोई आल्हा को नहीं हरा सके " ।

2 - विकिपीडिया।

3 - कविता कोश - भारतीय काव्य का विशालतम एवं अव्यवसायिक संकलन

4 - जगनिक का आल्हा खण्ड / शब्द शिल्पी

5 - आल्हा की वीरता की कहानी सुनने के बाद अपने आप फड़कने लगेगी बाहें। www भास्कर. कॉम

लघुकथा

कमला की इसबार कुछ ज्यादा ही छुट्टिया हो गई थी।वनिता ने भी ठान लिया था कि वो इस बार उसके पैसे काट ही लेगी,यही सोचते हुए वह मंदिर में दर्शन की ला ईन में खड़ी हो गई।मंदिर में भीड बढ़ती ही जा रही थी ।करीब दो घंटे की मशक्कत करने के बाद वो जैसे-तैसे दर्शन कर पाई। पर जल्दबाजी में दानपात्र में सौ रुपए का नोट डालना रह गया वह अब भी मुट्ठी में बंद था,अब फिर से इतनी भीड में वहां तक पहुंच पाना असंभव था।अचानक उसकी आंखो के सामने कमला का चेहरा घूम गया, जिसने मायूस होकर कहा था...चाहे आप मेरे पगार में से पैसें काट लेना पर छुट्टी लेना मेरी मजबूरी है।कमला के पैसे काटकर भगवान को चढ़ाकर क्या भगवान प्रसन्न होगा।

वनिता ने अपना इरादा बदल लिया, उसने समझ लिया कि उसे किसको खूश करना है।मंदिर की चौखट से नोट मुट्ठी में दबा कर वह घर लौट आई।

श्रद्धा जोशी

इन्दौर (म.प्र.)

लेख

डॉ रेश्मा एम एल
असिस्टन्ट प्रोफेसर
क्राइस्ट यूनिवर्सिटी
बंगलुरु

भूमंडलीकरण और हिंदी कविता

भूमंडलीकरण एक ऐसी व्यापक प्रक्रिया है जिसने विश्व को आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक रूप से एक वैश्विक संरचना में बाँध दिया है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत न केवल आर्थिक सीमाएँ टूटती हैं, बल्कि सांस्कृतिक और भाषिक सीमाएँ भी लुप्त होने लगती हैं। भूमंडलीकरण का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा है, विशेष रूप से कविता जैसे सशक्त अभिव्यक्ति माध्यम पर। हिंदी कविता, जो सदा से यथार्थ की संवेदनशील अभिव्यक्ति रही है, आज इस वैश्वीकरण के प्रभाव में नए विमर्शों को समाहित कर रही है।

यह शोधपत्र हिंदी कविता में भूमंडलीकरण के प्रभाव, प्रतिरोध और रूपांतरण की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करता है। इसमें उन रचनात्मक पक्षों की खोज की गई है, जहाँ कवि भूमंडलीकरण को केवल आर्थिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में भी देखता है। इस अध्ययन का उद्देश्य यह भी है कि कविता में आए परिवर्तन केवल शिल्पात्मक नहीं, बल्कि वैचारिक और विमर्शात्मक हैं।

भूमंडलीकरण (Globalization) को एक व्यापक परिघटना के रूप में देखा जाता है, जिसमें उत्पादन, उपभोग, संस्कृति, भाषा, और ज्ञान का वैश्विक स्तर पर विस्तार होता है। इस प्रक्रिया में पारंपरिक सीमाएँ टूटती हैं और नए आर्थिक, राजनीतिक, व सांस्कृतिक गठजोड़ बनते हैं। भूमंडलीकरण को नवउदारवादी अर्थनीति का परिणाम भी माना गया है, जो 1991 के भारत में आर्थिक उदारीकरण के बाद स्पष्ट रूप से दिखने लगा। यह वैश्विक व्यवस्था स्थानीयताओं को प्रभावित करती है, और इस प्रभाव को साहित्य ने तीव्रता से महसूस किया है।

साहित्य, विशेषकर कविता, समाज की संवेदना और परिवर्तन का दर्पण होती है। जब सामाजिक संरचनाएँ प्रभावित होती हैं, तब कविता उसका गहन चित्रण करती है। भूमंडलीकरण के चलते कविता में नए शब्द, छवियाँ और चिंताएँ आई हैं। हिंदी कविता भी अब केवल राष्ट्रीय सरोकारों तक सीमित नहीं रही, बल्कि वैश्विक संदर्भों को भूमंडलीकरण ने सबसे गहरा प्रभाव सांस्कृतिक पहचान पर डाला है। पारंपरिक समाजों में संस्कृति जीवनशैली, भाषिक परंपरा और सामाजिक संरचना से जुड़ी होती है, लेकिन वैश्वीकरण की प्रक्रिया में एकरूपता (homogenization) हावी होती जा रही है। हिंदी कविता में यह चिंता कई रचनाओं में प्रकट होती है, जहाँ कवि लोक-संस्कृति, गाँव और पारंपरिक मूल्यों के विस्थापन को गहराई से अनुभव करता है।

कुमार अंबुज की कविताओं में यह विस्थापन व्यंजना के माध्यम से प्रस्तुत होता है। वे लिखते हैं — "*हर जगह अब एक जैसी दुकानों की कतार है, स्वाद बदल गया है बच्चों की जुबान का*" । यह पंक्तियाँ सांस्कृतिक बहुलता के ह्रास और बाजार के द्वारा बनाई जा रही एकरूपता पर तीव्र कटाक्ष करती हैं। इस संदर्भ में भूमंडलीकरण न केवल बाह्य वस्तुओं को बदलता है, बल्कि लोगों के स्वाद, सोच और अभिरुचियों को भी नियंत्रित करने लगता है।

भूमंडलीकरण का एक मुख्य पहलू उपभोक्तावाद है, जिसमें व्यक्ति को उपभोक्ता के रूप में देखा जाता है, और मानवीय रिश्तों की जगह वस्तु संबंधों को प्राथमिकता दी जाती है। हिंदी कविता ने इस बाज़ारवादी प्रवृत्ति का तीखा प्रतिरोध किया है। बाज़ार केवल वस्तुएँ नहीं बेचता, वह सपने, संवेदनाएँ और मानवीय संबंध भी बेचने लगता है।

राजेश जोशी की कविता "सपनों को बेचा जा रहा है" एक सशक्त उदाहरण है - "*सपनों को बेचा जा रहा है, सौदे हो रहे हैं आत्मा के भी*" । यहाँ 'आत्मा के सौदे' रूपक के माध्यम से यह बताया गया है कि भूमंडलीकरण की व्यवस्था व्यक्ति के अंत:करण तक को बाज़ार में बदल देती है। हिंदी कविता इस संदर्भ में केवल उपभोक्तावाद की आलोचना नहीं करती, बल्कि वह मनुष्यता को पुनः प्रतिष्ठित करने का प्रयास भी करती है।

भूमंडलीकरण के साथ-साथ भारत में ग्रामीण समाज का शहरीकरण तीव्र गति से हुआ है। इसके परिणामस्वरूप गाँवों की पारंपरिक संरचना, कृषि आधारित अर्थव्यवस्था और आत्मनिर्भर जीवनशैली पर संकट आया है। हिंदी कवि इस संकट को केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और आत्मिक संकट के रूप में देखते हैं।

मंगलेश डबराल की कविता में यह संवेदना स्पष्ट है —

"*गाँव अब गाँव नहीं रहे, वहाँ शहर के विज्ञापन हैं, और शहर में गाँव की आत्मा मर चुकी है*" । यह कविता भूमंडलीकरण द्वारा लाए गए ग्रामीण क्षरण और आत्मिक रिक्तता की व्यथा को अभिव्यक्त करती है। भूमंडलीकरण में विकास की अवधारणा इतनी एकांगी हो गई है कि वह आत्मा की जगह विज्ञापन को रख देती है।

स्त्री विमर्श हिंदी कविता का एक सशक्त पक्ष रहा है। भूमंडलीकरण ने जहाँ स्त्रियों के लिए नए अवसर खोले हैं, वहीं दूसरी ओर उनकी देह का बाज़ारीकरण भी तीव्र हुआ है। विज्ञापनों, मीडिया और फिल्म जगत में स्त्री को वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा है। हिंदी की समकालीन कवयित्रियों ने इस मुद्दे को गहराई से उठाया है।

अनामिका की कविताएँ इस दृष्टि से अत्यंत मार्मिक हैं। वे लिखती हैं — "*जिसे वो 'प्रोडक्ट' कह रहे हैं, वह मेरी माँ की आँखों की नींद है*" । यह पंक्ति बाज़ार द्वारा स्त्री की अस्मिता को मिटाकर उसे उत्पाद बना देने की मानसिकता पर तीखा प्रहार करती है। भूमंडलीकरण के इस पहलू को हिंदी कविता ने केवल आलोचना के स्तर पर नहीं, बल्कि वैकल्पिक दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया है।

भूमंडलीकरण का एक अन्य पहलू भाषाई वर्चस्व का है, जिसमें अंग्रेज़ी जैसी वैश्विक भाषाएँ स्थानीय भाषाओं को हाशिए पर धकेलती हैं। हिंदी कविता इस खतरे को भली-भाँति पहचानती है। हिंदी भाषा की अस्मिता और विविधता की रक्षा कविता के लिए एक सांस्कृतिक कार्यभार बन गया है।

अशोक वाजपेयी लिखते हैं- "*हमारी भाषाओं के हाशिए पर अब अंग्रेज़ी के चमकीले बूट हैं*" यहाँ 'चमकीले बूट' का रूपक यह दर्शाता है कि अंग्रेज़ी का प्रभुत्व केवल सौंदर्य या आधुनिकता नहीं, बल्कि दमन का रूप भी लेता जा रहा है। हिंदी कविता इस भाषाई आक्रमण का प्रतिरोध कर रही है और नए भाषिक प्रयोगों के माध्यम से अपनी जड़ों से जुड़ी रहने की कोशिश कर रही है।

इस शोधपत्र के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि भूमंडलीकरण हिंदी कविता के लिए केवल बाह्य परिघटना नहीं है, बल्कि एक गहन आत्मिक, सांस्कृतिक और वैचारिक चुनौती है। हिंदी कविता ने इस चुनौती को केवल आलोचना के रूप में नहीं, बल्कि संवेदना, व्यंग्य, रूपक और नए शिल्प के माध्यम से प्रस्तुत किया है। हिंदी कविता आज स्थानीयता और वैश्विकता के द्वंद्व में एक मध्य मार्ग तलाश रही है -जहाँ न तो अपनी अस्मिता को खोना है, और न ही आधुनिकता से कटा रहना है।

भूमंडलीकरण के इस दौर में कविता, केवल विरोध का माध्यम नहीं, बल्कि पुनर्निर्माण का उपकरण बनती है। वह यथार्थ की नई परतों को खोलती है, और उन प्रश्नों को उठाती है, जिन्हें बाज़ार और सत्ता अक्सर दबा देती है। यह शोध इसदृष्टि से आवश्यक है कि वह दिखाता है कि कविता आज भी समय की सबसे प्रामाणिक आलोचक बनी हुई है।

संदर्भ सूची

1. वाजपेयी, अशोक। *कविता और समय*. राजकमल प्रकाशन, 2007, पृ. 22, 58.
2. जोशी, राजेश। *दो पत्थरों के बीच*. वाणी प्रकाशन, 2001, पृ. 37.
3. अंबुज, कुमार। *क्रूरता*. साहित्य उपक्रम, 2003, पृ. 51.
4. डबराल, मंगलेश। *हम जो देखते हैं*. राजकमल प्रकाशन, 1995, पृ. 42.

अनामिका। *स्त्रीत्व का मानचित्र*. सेतु प्रकाशन, 2004, पृ. 29.

लघुकथा

अशोक आनन

शाजापुर (म.प्र.)

पति की असामयिक मृत्यु के बाद , जब उसके सामने आर्थिक संकट गहराने लगा तो उसने निश्चय किया कि वह दिन में मेहनत - मजूरी और रात को कुछ समय निकालकर प्रौढ शिक्षा केन्द्र जाकर पढ़ाई करेगी , ताकि वह कुछ पढ़ - लिखकर अपना जीवन संवार सके । अगली सुबह उसने केन्द्र जाकर अपना नाम दर्ज़ करवा लिया ।

अब.... वह दिन में काम पर और रात में पढ़ने जाने लगी । वहाॅं जाकर उसे लगा , जैसे उसके जीवन में एक नया सवेरा हो गया हो । उसे पढ़ाई में बहुत आनंद आने लगा । वह अपनी मेहनत और लगन से जल्दी ही पढ़ना - लिखना सीख गई । उसके शिक्षित होते ही आस - पड़ौस और समाज में उसका मान - सम्मान बढ़ गया ।

एक दिन उसके बेटे ने उसका हायर सेकेण्डरी का फाॅर्म भरवा दिया । उसने अपनी मेहनत और लगन से वह परीक्षा भी अच्छे अंकों से उत्तीर्ण कर ली । और जल्द ही उसे लिपिक के पद पर अनुकम्पा नियुक्ति मिल गई । अब उसका अधिकांश समय पुस्तकों के पठन-पाठन में गुज़रने लगा । बेटे की भी एक प्रतिष्ठित कम्पनी में इंजीनियर के पद पर नौकरी लग गई ।

उसे लगा , मानों , शिक्षा की ज्योत प्रज्वलित होते ही उसका जीवन उजालों से भर गया हो । और पुस्तकों को मित्र बनाते ही उसका जीवन खुशियों से लबालब हो गया हो ।

सही है , पुस्तकों से बढ़कर जीवन में कोई मित्र नहीं होता ।

लेख

गोपाल सिंह नेपाली : साहित्य से सिनेमा तक

राजेन्द्र परदेसी

राजेंद्र परदेसी साहित्य कि लगभग सभी विधाओं मे लिखते और अधिकांश चर्चित पत्र -पत्रिकाओ मे नियमित छपते है,लेखन से इतर इनके रेखाचित्र भी लगभग सभी चर्चित पत्रिकाओ मे नियमित छपते रहते है

इसके अतिरिक्त इनकी कहानी पर बनी और प्रदर्शित भोजपुरी फिल्म, 'साचि पिरितिया हमार ' जिसमे कुली फिल्म से प्रसिद्धि प्राप्त पुनीत इशर ने खलनायक की भूमिका निभाई थी तथा चर्चित गायक गायिका सुरेश वाडेकर और अनुराधा पोडवाल ने गीत गाये थे

राजेंद्र परदेसी अनेकों पत्रिका मे परामर्शदाता तथा कयी साहित्यिक संस्थाओं के संरक्षक के रूप मे जुड़े होने के कारण इनका परिचय क्षेत्र देश विदेश के साहित्यकारो से है

प्रकाशित कृति : हताश होने से पहले (कविता संग्रह), शब्दशिल्पियों के सान्निध्य में (साक्षात्कार-संग्रह),दूर होता गांव (लघुकथा-संग्रह) शब्दों के संधान (हाइकु-संग्रह), दूर होते रिश्ते (कहानी-संग्रह), भोजपुरी लोककथाएं(प्रकाशन विभाग, भारत सरकार), सृजन के पथिक (निबंध-संग्रह), सत्रह आखर (हाइकु-संग्रह), प्रश्नों की प्रतिध्वनि

(साक्षात्कार-संग्रह), समय का चक्र (बाल कहानी संग्रह) सृजनधर्मिता के प्रतिमान (निबंध संग्रह), साहित्य के सहचर(निबंध संग्रह), साक्षात्कार के साक्ष्य (साक्षात्कार - संग्रह) संपादन-प्रतिनिधि कहानियां (कहानी संग्रह) । पूर्वोत्तर की काव्य

यात्रा (कविता संग्रह), भारत नेपाल काव्य सेतु (कविता संग्रह) हिंदी की विश्वयात्रा (कविता संग्रह), भारत-नेपाल कथा संगम(कहानी संग्रह) ।

संपर्क : 136, मयूर रेजीडेंसी, फरीदीनगर, लखनऊ-226015, मो. 09415045584

जब कोई व्यक्ति समय और समाज में सामान्य से ऊपर उठकर विशिष्ट बन जाता है तब वह अपनी कृति और कीर्ति से समाज को प्रभावित करने लगता है और समाज भी उसकी चेतना के विस्तार में निरंतर सहयोगी बनता जाता है। इस प्रकार रचनाकार सामाजिक स्वीकृति और समर्थन से अपने व्यक्तित्व में निखार लाता है और समाज के लिए उपादेय बनता है। उसकी यही उपादेयता हर काल और परिस्थिति में उसे जीवंतता प्रदान करती है और वह रचनाकार आमजन के बीच अपनी स्थायी पहचान बनाकर कालजयी बन जाता है। कबीर, तुलसी, प्रेमचंद, निराला, नागार्जुन, दिनकर इत्यादि कवियों की एक सुदीर्ध श्रृंखला का निर्माण इन्हीं संदर्भों में हुआ और जिसकी प्रासंगिकता निरंतर बढ़ती ही गई। समय की सीमाओं में सिमट कर उनका व्यक्तित्व कभी संकुचित नहीं हुआ। हिन्दी साहित्य के छायावादोत्तर काल के कवियों में गोपाल सिंह नेपाली भी इन्हीं कालजयी कवियों की श्रृंखला की महत्वपूर्ण कड़ी हैं, जो बिहार की वरेण्य वसुधा पर गीतों की एक नयी परम्परा को जन्म देकर विद्यापति, दिनकर, नागार्जुन की काव्यधारा के साथ-साथ महेन्द्र मिश्र और भिखारी ठाकुर की लोक परम्परा को विकसित करने में अहम् भूमिका प्रस्तुत किया।

गोपाल सिंह नेपाली का नाम साहित्य क्षेत्र में सन् 1927-30 के बीच उस समय उभरा, जब छायावादी कविता का परिपक्व स्वरूप हिन्दी में उभरकर आ चुका था और साहित्य के क्षितिज पर उससे जुड़े संस्कारों का साहित्य ही अधिक सशक्त एवं सक्रिय बना हुआ था। नेपाली इसी छायावादी संस्कारों के बीच गीतों की नयी सर्जनात्मकता द्वारा अपने व्यक्तित्व को विराट बनाने का आरम्भिक प्रयास किया, जो बाद में चलकर उनके नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का परिचायक बना। कविता में लोकभाषा के शब्दों को पिरोकर उसमें माधुर्य और मासूमियत लाने के माध्यम से गीत में एक नये प्रयोग को जन्म दिये और गीतात्मक लय में बांधकर उसे लोकग्राही बनाने में उन्होंने सफलता प्राप्त किया। इस प्रकार गोपाल सिंह नेपाली ने छायावादी संस्कारों के बीच कविता की एक नयी धारा को जन्म दिया। जिसका कथ्य यथार्थता से गहरा सरोकार रखने वाला था। छायावाद की कोमलकांत पदावली से मुक्त करके यथार्थोन्मुख बनाकर गीतों के नये सांचे में ढालने का प्रयास किया। उन्होंने कल्पना और यथार्थ के बीच एक ऐसा संतुलन स्थापित किया, जो छायावाद की कविता से जुड़कर भी उससे अलग अपनी निजी पहचान प्रस्तुत करके पूर्णतः नवीन था। कविता यथार्थोन्मुख आदर्श में युगबोध से अनुप्राणित अपना नया स्वरूप धारण करती हुई नेपाली को आम आदमी से जोड़कर जनमन का अमर गायक बनाने का श्रेय हासिल करती गई, प्रगतिवादी राजनीतिक प्रतिबद्धताओं से अलग होकर नेपाली प्रगतिशील रचनाकार की भूमिका में साहित्य

के क्षेत्र में अपनी एक अलग पहचान बनाते हुए आम आदमी के बीच आदरणीय और अनुकरणीय बनते गए। लोग उनके गीतों से प्रभावित होकर स्वतः करीब आते गए तथा आत्मसात करते हुए अपने अधरों पर गीतों को उतारने लगे। इन्हीं विशेषताओं से नेपाली आम आदमी के बीच भी खास बनते गए और उनके गीतों का अविरल प्रवाह सहज गति से बढ़ता गया।

गोपाल सिंह नेपाली का जन्म 11 अगस्त 1911 को बिहार की उर्वर धरती पर कालीबाग दरबार (नेपाली रानी महल) बेतिया (पश्चिमी चम्पारण) में हुआ था। इनके पिता का नाम रेलबहादुर सिंह था। जो गोरखा राइफल में हवलदार मेज़र थे। इनका विवाह वीणा रानी नेपाली से हुआ था। जो नेपाल सरकार के गुरू पुरोहित पंडित विक्रमराज की पुत्री थी। अल्पवय में ही नेपाली की माता सरस्वती देवी का निधन हो गया था। इनकी विमाता भी इन्हें छोड़कर अपने भाई के साथ वर्मा चलीं गयी और कभी वापस नहीं आयी। बचपन में मां के बिछुड़ जाने के बाद नेपाली की जिन्दगी अस्थिर हो गयी। सैनिक पिता के साथ देहरादून, मसूरी अफगानिस्तान और पेशावर की सैनिक छावनियों में नेपाली और उनके छोटे भाई बंब बहादुर पलते रहे। इन हालातों में इनकी शिक्षा-दीक्षा की कोई नियमित-समुचित व्यवस्था नहीं हो पायी, विपरीत परिस्थितियों में जैसे-तैसे समय काट रहे गोपाल सिंह नेपाली का विकास थम-सा गया। मातृ-स्नेह से वंचित नेपाली का जीवन दुर्भाग्यपूर्ण बनता गया और यायावर की जिन्दगी जीने के लिए वे मजबूर हो गये। यही कारण है उनकी शिक्षा प्रवेशिका से अधिक हो नहीं सकी। सन् 1926 में मिडिल स्कूल तथा 1932 मं बेतिया राज हाई स्कूल बेतिया से प्रवेशिका तक शिक्षा अर्जित कर सके। आरम्भ में इनका नाम गोपाल बहादुर सिंह था। जो बाद में गोपाल सिंह नेपाली हो गया। नेपाली परिवार के होने के कारण इनके नाम के साथ नेपाली उपनाम जुड़ गया। इनका जन्म कृष्ण जन्माष्टमी के दिन हुआ था। इसलिए इनके पिता ने इनका नाम गोपाल रख दिया। 'प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच गोपाल सिंह नेपाली एक यायावर की भांति जहाँ-तहाँ जिन्दगी के एक-एक क्षण को ढोते रहे। अभाव और अकेलापन के बावजूद मस्तमौला स्वभाव होने के कारण नेपाली की मनीषा कभी कुंठित नहीं हुई और उनकी कारयित्री प्रतिभा ने सर्जनात्मक मोड़ ले लिया।

काव्य प्रतिभा के धनी गोपाल सिंह नेपाली का बचपन सैनिक पिता के संग मसूरी, देहरादून के मुख्य प्रकृतिक परिवेश में तथा बेतिया के बन-बीहड़ों के बीच घाटियों-निर्झरों की शीतल स्वर काकली से गुंजित प्रकृति की गोद में किशोर और किशोरोपरान्त जवान हुआ। यही कारण है कि उनकी कविता प्राकृतिक सुषमा की सतरंगी छटाओं से आपूरित मोहक छवियों में आकारित हुई, दृष्टव्य है-

पीपल के पत्ते गोल-गोल
कुछ कहते रहते डोल-डोल
यह लघुसरिता का बहता जल
कितना शीतल कितना निर्मल
देहरादून के मधुर बेर
जंगल में मिलते ढेर-ढेर

जैसी कविताओं का सृजन प्रकृति के साथ कवि के अन्तर्मन के गहरे लगाव को दर्शाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सौंदर्य के प्रति नेपाली के मन में जो आकर्षण था। उसके पीछे प्रकृति ही प्रेरक रही। स्वयं नेपाली ने भी यह स्वीकार किया है-सुरम्य हरियाली की गोद में फौजी छावनी टिकी हुई है। सुबह-शाम सैनिकों की कवायद होती है। बैंड और पाइप बजते हैं और हवा में नंगी-नंगी संगीनें-चमकती हैं। सामने तुलसीदासजी की रामायण खुई हुई है और किर्चे साफ हो रही हैं। वहाँ गांधी और टालस्टाय को कोई नहीं जानता। दुनिया गेंदे की तरह फूलती है और हमेशा टंगी ही रहती है। इसी के चारों ओर खेत हैं, वन हैं, नदी-नाले हैं और पहाड़-पहाड़ियाँ हैं। कोई सहृदय प्रकृति प्रेमी यदि वहाँ पहुँच जाय तो आगे के लिए वह अपनी दिनचर्या ऐसी बनाएगा कि सबकी आँख बचाकर रोज वहाँ पहुँच जाया करे। यह हरी-हरी दूब की महिमा है कि आज मेरे हाथ में बन्दूक के बदले लेखनी है-(रागिनी-1935)। प्रकृति के प्रभाव में गोपाल सिंह नेपाली की कविता का सहज विकास होता रहा, किन्तु उनकी कविता वन-प्रान्तरों में ही अटकी नहीं रही। प्रकृति का इतना बड़ा प्रेमी कवि मानवीय संवेदनाओं को भी अपनी कविताओं का आधार बनाया और वस्तुपरक गीतों की रचना करके अपने को जन-मन का गायक बनने का गौरव प्राप्त किया। सामाजिक सरोकारों से युक्त नेपाली संवेदनाओं के सत्य को स्वीकार करते हुए मानव-मूल्यों को सर्जनात्मकता के केन्द्र में रखकर उसे वस्तुपरक बनाने की दिशा में निरंतर क्रियाशील रहे।

गोपाल सिंह नेपाली की काव्य-यात्रा की शुरूआत सन् 1932 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सभागार के काव्यमंच से हुई। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के अभिनंदन समारोह के अवसर पर विराट कवि-सम्मेलन का आयोजन था। जिसमें दरभंगा नरेश, काशी नरेश, ओरछा नरेश और हथुआ नरेश की उपस्थिति में मैथिलीशरा गुप्त, शिवपूजन सहाय, श्यामसुन्दर दास, निराला इत्यादि साहित्य के महारथी भी मंचासीन थे। 115 कवियों में मात्र 15 कवि काव्यपाठ के लिए चयनित हुए। उसमें नेपाली को भी जगह मिली। नेपाली का यह पहला अवसर था जब काव्यमंच पर उन्हें काव्य-पाठ के लिए आमंत्रित किया गया। जीवन में पहली बार उन्होंने काव्य पाठ किया और सबसे अधिक चर्चा के विषय निपाली ही बने। उसी दिन से नेपाली साहित्य की दुनिया में कदम रखकर निरंतर आगे बढ़ते रहे और स्थायी पहचान बनाते हुए नया कीर्तिमान स्थापित किया।

साहित्य सफर के साथ ही नेपाली के जीवन में एक नया मोड़ आया और वे पत्रकारिता को अपनी अभिव्यक्ति का एक अहम् माध्यम बना लिये। यो तो वे सन् 1932 से ही प्रभात (हस्तलिखित पत्रिका, बेतिया) का सम्पादन प्रारम्भ कर चुके थे। 'दि मुरली' अंग्रेजी की टाइपयुक्त पत्रिका भी

उनके द्वारा सम्पादित किया जाता रहा। कुछ समय तक वह 'मासिक सुधा' के सम्पादन विभाग में भी कार्य किये। उसके बाद वह 'ऋषभचरण जैन के सम्पर्क में लखनऊ और दिल्ली में रहकर पत्रकारिता से जुड़े। सन् 1934 में फिल्म पत्रिका 'चित्रपट' और सन् 1935 में 'रतलाम टाइम्स' (मध्य प्रदेश) का सम्पादन किया। सन् 1939 में वह पटना आ गये और ब्रजशंकर वर्मा के साथ साप्ताहिक 'योगी' का सम्पादन करने लगे। उसमें वह 'बाबा बौड़मदास' के नाम से 'गोलघर के मुड़ेरे से' स्तम्भ लिखा करते थे। इस प्रकार एक लम्बे समय तक वह हिन्दी पत्रकारिता से जुड़े रहे और हिन्दी पत्रकारिता को एक नई दिशा और दृष्टि देते रहे। पत्रकारिता की दुनिया में आने से उनको साहित्यिक अभिव्यक्ति का अच्छा अवसर मिला। इससे आमजन के बीच उनकी एक स्थायी और प्रभावशाली जगह बनी।

गोपाल सिंह नेपाली की कविताएं प्रकृति की गोद में अवश्य ही जन्म ली थीं, किन्तु चेतना के क्षणों में वह जीवन के विविध क्षेत्रों में बहुत दूर तक गई और बड़ी गहराई तक जाकर जीवन-यथार्थ की पड़ताल करने में समर्थ और सफल हुई। प्रकृति-प्रेम के साथ-साथ मानव जीवन के विविध पहलुओं को नेपाली ने अपनी कविता में स्थान दिया है। स्वतंत्रता पूर्व से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आजाद हिन्दुस्तान की तस्वीर को अनेक कोणों से निहारते हुए अलग-अलग संदर्भों में चित्रित किया। चूंकि प्रेम जीवन का एक महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य पक्ष है, इसलिए उनकी कविता में प्रेम के आकर्षक एवं मनोरम चित्रों की असरदार भूमिका देखने को मिलती है-

किन्तु देव कब समझोगे-
है यही स्वर्ग जीवन संसार
यही पुण्य है एक जगत का
उतरेंगे इससे ही पार।

जीवन में प्रेम की महत्ता और अनिवार्यता को समझते हुए गोपाल सिंह नेपाली ने उसके अनेक पक्षों का चित्रण अपने गीतों में किया है। रूप-सौंदर्य में, श्रृंगार, विरह-मिलन, प्यास, दरस-परस की आकुलता अभिव्यक्ति के स्तर पर गीतों में इन्द्रधनुषी रंग बिखेरती हुई मानव-मन को सम्मोहित करती है-

ओ मृगनैनी ओ पिक बैनी, तेरे सामने मधुर बसुरिया झूठी है
अंग-अंग में इतना रंग भरा, रंगीन चुनरिया झूठी है,
है दरस-परस इतना शीतल, शरीर नहीं है शबनम है,
तेरा मुखड़ा इतना गोरा, बिना चांद का पूनम है।
अलके पलकें इतनी काली, घनस्याम बदरिया झूठी है।

जीर्ण-क्षीर्ण मूल्यों को खारिज करते हुए सामाजिक विदूरपताओं के प्रति भी कवि का आक्रोश कविताओं में देखने को मिलता है और समग्रक्रान्ति की बात उठाते हुए सच्चाई को बड़े बेबाक ढंग से उपस्थित करने में नेपाली साहस का परिचय देते हैं। संवेदना और अर्थ की सत्ता के बीच के द्वन्द को बड़े सख्त होकर वह कुछ इस प्रकार व्यक्त करते हैं-

तुम-सा लहरों में वह लेता, तो मैं भी सत्ता गह लेता,
ईमान बेचता चलता तो, मैं भी महलों में रह लेता,
तू दलबंदी पर मरे, यहाँ लिखने में तल्लीन कलम
मेरा धन स्वाधीन कलम

सामाजिक रूढ़ियों, कुरीतियों, विद्रूपताओं, विषमताओं और विसंगतियों का विरोध करते हुए एक ऐसे भारत के निर्माण की कल्पना नेपाली के मन में जन्म लेती रही, जिसमें हर आदमी को सुखी-स्वतंत्र होकर सम्मान पूर्वक जीने की संभावना सन्निहित थी-

तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो
अब घिस गई समाज की तमाम नीतियाँ
अब घिस गई मनुष्य की अतीत-रीतियाँ
है दे रही चुनौतियाँ, तुम्हें कुरीतियाँ
निज राष्ट्र के शरीर के सिंगार के लिए
तुम कल्पना करो, नवीन कल्पना करो।

अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग समयों में गीतों की रचना करने वाले गोपाल सिंह नेपाली की सात काव्य-कृतियाँ प्रकाशित हुई-उमंग (1933), पंछी (1934), रागिनी (1935), पंचमी (1942), नवीन (1944), नीलिमा (1944), हिमालय ने पुकारा (1963) अप्रकाशित रचनाओं में हम तरूवर की चिड़िया रे, दो हमारे नयनःदो तुम्हारे नयन, नौ लाख सितारों ने लूटा, तूफानों को आवाज दो, प्रमुख हैं। इनके असंख्य गीत पत्र-पत्रिकाओं की धरोहर हैं। खासकर धर्मयुग में उनके गीतों को सर्वाधिक स्थान मिला।

सन् 1944 में उनकी जीवन-यात्रा साहित्य-जगत से निकलकर सिनेमा जगत में प्रवेश कर गयी। मुंबई में आयोति एक कवि सम्मेलन में मंच से काव्य-पाठ कर रहे गोपाल सिंह नेपाली के असरदार गीतों ने फिल्म निर्माण की संस्था फिल्मीस्तान के कन्ट्रोलर आफ प्रोडक्शन एस. मुकर्जी को सम्मोहित कर लिया और उन्होंने नेपाली को फिल्मीस्तान स्टूडियों के लिए बतौर गीतकार नियुक्त कर लिया। फिर तो नेपाली की दुनिया ही बदल गयी और वह फिल्मों के ही हो गये।

फिल्म जगत में नेपाली ने अपने गीतों से सिनेमा संसार को काफी समृद्ध किया। लगभग 45 फिल्मों में उन्होंने गीत लिखे, जिसमें 'मजदूर' उनकी पहली थी। 'मजदूर' फिल्म के संवाद लेखक उपेन्द्र नाथ अश्क थे। नेपाली द्वारा लिखे गए 'मजदूर' फिल्म के लगभग सभी गीत हिट होकर काफी लोकप्रिय हुए। जिस पर बंगाल फिल्म जर्नलिस्ट एसोसिएशन ने उन्हें उस वर्ष का सर्वश्रेष्ठ गीतकार का पुरस्कार दिया। लगभग 45 फिल्मों में उन्होंने 300-400 गीतों की रचना की जिसमें अधिकांश गीत लोकप्रिय हुए। मजदूर, सफर, नागपंचमी, नागचम्पा, बेगम, राजकन्या, शिवभक्त, तुलसीदास आदि फिल्मों में उनके द्वारा रचित गीतों से सिनेमा जगत में नेपाली का कद काफी ऊँचा हुआ। हिमालय फिल्मस तथा नेपाली पिक्चर्स के वह निर्माता-निर्देशक भी रहे। उनके द्वारा निर्देशित एवं निर्मित तीन फिल्में 'नज़राना', सनसनी और खुशबू हिन्दी फिल्म के

लिए मील का पत्थर बना। फिल्मों के लिए गीत लेखन में उन्होंने नये-नये प्रयोग किये, देशज़ शब्दों जैसे-अंगना, नजरिया, चुनरिया, डगरिया, बदरिया का प्रयोग करके हिन्दी गीतों की लोकप्रियता के शिखर पर पहुँचाये। फिल्म जगत में प्रवेश के बाद गोपाल सिंह नेपाली की जिन्दगी का आर्थिक पक्ष मजबूत तो हुआ, किन्तु साहित्य संसार से उनके रिश्ते कमजोर हो गए। फिल्म जगत में नये-नये शौक परवान चढते गए। जिससे उनका स्वास्थ्य खराब होने लगा। साहित्य जगत से रिश्ते टूटने से वे चिन्तित भी हुए। साहित्यकारों के बीच घटती लोकप्रियता के मद्देनज़र सन् 1959 में वह फिल्मों से अलविदा ले लिये।

फिल्मों से साहित्य जगत में वापसी के बाद वह स्वतंत्र लेखन, जनजागरण, मंचों पर काव्य-पाठ करने के साथ चीन आक्रमण के समय 'वन मैन आर्मी' की भूमिका में अपने उद्बोधन गीतों से जनता को संगठित करने में सक्रिय हो गये। इसी समय 'हिमालय ने पुकारा है' शीर्षक कविता में इतिहास बोध को दोहराते हुए नेपाली ने जनता में जागृति लाने के लिए निम्नपंक्तियाँ लिखी-

इतिहास पढ़ो, समझो तो यह मिलती है शिक्षा
होती न अहिंसा से कभी देश की रक्षा,
क्या लाज़ रही जब मिली प्राण की भिक्षा
यह हिन्द शहीदों की अमर देश है प्यारा
चालीस करोड़ को हिमालय ने पुकारा

साहित्य से सिनेमा तक के लम्बे सफर को तय करके नेपाली ने युग को बड़ी गहराई से जाँचा-परखा और खट्टे-मीठे अनुभवों से गीतों में ऐसी ताज़गी भर दी, जिससे आज तक वे गीत बासी नहीं हुए। काव्य-मंचों पर जागरण का गीत गा-गाकर देश की जनता को जगाने वाले गीतों के राजकुमार गोपाल सिंह नेपाली 17 अप्रैल 1963 को आखिरी काव्य-संध्या में भाग लेकर एकचारी गांव से ट्रेन द्वारा भागलपुर वापस आते समय भागलपुर रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म नम्बर दो पर अचानक हृदयगति रूक जाने के कारण स्वयं ही चिरनिद्रा में सो गए। उनके लोकांतरण के लगभग पांच दशक बीत गये। किन्तु उनके गीत आज भी आवाज दे रही है। उनकी स्मृति को समर्पित है उन्हीं की काव्य पंक्तियाँ-

दूर जाकर न कोई इशारा करे
मन दुबारा-तिबारा पुकारा करे।

ग़ज़ल

संजय ग्रोवर

दिल्ली

1.

ख़ुदको संभालना भी है
और वक़्त काटना भी है

इक जिस्म एक जां भी है
दुनिया का सामना भी है

गो हाथ पाक़-साफ हैं
दिल ख़ून से सना भी है

मैं उसको चाहता तो हूं
दिल ख़ुदको चाहता भी है

तुम तो पुराने हो, कहो
क्या और रास्ता भी है

तुमको बहुत है ग़ुमान है
क्या तुमको कुछ पता भी है

2.

किसीको डराना भी अच्छा नहीं है
गो ख़ुद मार खाना भी अच्छा नहीं है

नया कुछ है बेहतर, मगर आज़माओ
कि सारा पुराना भी अच्छा नहीं है

कहीं भीड़ में घुसके पत्थर न मारो
बहुत आना-जाना भी अच्छा नहीं है

नया था कभी वो पुराना ज़माना
पुराना ज़माना भी अच्छा नहीं है

मेरी रै रैं पैं पैं भी अच्छी नहीं है
तुम्हारा तराना भी अच्छा नहीं है

तआल्लुक मे गर साफ़गोई नहीं है
तो रिश्ते निभाना भी अच्छा नहीं है

अगर बस रवायत की ख़ातिर करो तो
क़िताबें सजाना भी अच्छा नहीं है

'ये अच्छा नहीं है वो अच्छा नहीं है
मेरा ये बहाना भी अच्छा नहीं है

दिलीप कुमार
आनन्दबाग, बलरामपुर

जरा हट के ,जरा बच के

कई दशकों पूर्व एक गाना बड़ा मशहूर हुआ था "ए दिल है मुश्किल है जीना यहाँ,
जरा हटके जरा बचके ये है बॉम्बे मेरी जां "।
तब भारत की आर्थिक राजधानी के दो नाम हुआ करते थे । बंबई और बॉम्बे। बम्बई आम जन की जुबान में शहर को बोला जाता जबकि इलीट क्लास के लोग शहर को बॉम्बे कहा करते थे। यह फर्क अभी भी है जैसे आम आदमी महानगर के उपनगर बांद्रा कहता है जबकि इलीट क्लास उसे बैंड्रा कहता है। एक मशहूर स्टेशन को इलीट क्लास विले पार्ले कहते हैं जबकि आम आदमी उसी स्टेशन को पार्ला कहता है । नब्बे के दशक में भारत की आर्थिक राजधानी के देसी और इलीट नाम एक हो गए और शहर को एक नया सर्वमान्य नाम मिला "मुंबई" और इस शहर में रहने वाले लोग खुद को मुंबईकर कहलाते हैं । मुंबई को "मिनी भारत" भी कहा जाता है और मुंबईकर से जुड़ी कुछ चीजें बेहद दिलचस्प एवं अनूठी होती है।

1- मुंबई के सबसे व्यस्त एवं चर्चित इलाके का नाम "अंधेरी" है लेकिन रात को सबसे ज्यादा रौशन और जगमग अंधेरी उपनगर ही होता है।

2 -मुंबई की उपनगरीय ट्रेन सेवा को "लोकल" कहा जाता है और आम मुंबईकर "चर्चगेट से बोरीवली" तक की लोकल ट्रेन का स्पेशल पास जरूर बनवा कर रखता है"।

3- महिलाओं के लिये आमतौर काफी सुरक्षित शहर माना जाता है। आम तौर पर पब्लिक ट्रांसपोर्ट में सीट आदि के लिये पुरुष ज्यादा लड़ते-झगड़ते हैं पर मुंबई के लोकल ट्रेन में महिलाओं के लिये आरक्षित डिब्बों में महिलाओं में लड़ाई -झगड़े ज्यादा होते हैं ।

4- कहते हैं मुंबई में "भगवान का मिलना आसान है मगर मकान का मिलना मुश्किल है"। मुंबई में छोटे घरों को खोली कहते हैं जो जल्दी खाली नहीं मिलती।

5- मुंबई में कहा जाता है कि यहाँ के इंसानों की आधी जिंदगी क्यू यानी लाइन में बीत जाती है। ट्रेन का टिकट लेने से लेकर शौचालय तक जाने की लाइन में।

6- मान्यता है कि अगर आप कल्याण से वीटी जाने वाली लोकल ट्रेन में 'पीक आवर्स' में गर्दी झेलकर बॉम्बे वीटी स्टेशन पहुंच गए और शाम को सकुशल वीटी स्टेशन से कल्याण लौट आये। यदि इसके बाद अगर आप दुखी या व्यथित नहीं हैं तो आप आसानी से देश में कहीं भी 'सर्वाइव' कर सकते हैं।

7- मुंबई में लोगों को गुस्सा आता है तो लोग ढेर सारे अपशब्द कहने के बजाय 'दिमाग का दही मत कर' कहकर क्रोधित होने की वार्निंग दे देते हैं।

8- मुंबई में जिस वाक्य पर सबसे ज्यादा लोगों का ध्यान रहता है वह "अगला स्टेशन ,,, " " पुढे स्टेशन ,,,,," "नेक्स्ट स्टेशन,,,,"। तीनों भाषाओं में हो रही उद्घोषणा पर ट्रेन में सफर कर रहे लोगों का सबसे ज्यादा ध्यान रहता है और अपने गंतव्य के स्टेशन का नाम आते ही यात्री एलर्ट होकर ट्रेन के दरवाजे के पास आकर खड़े हो जाते हैं ताकि जल्दी से उतर सकें।

9– मुंबई में कोई जब अपने गृहनगर चला गया हो तो उसके बारे में कहा जाता है कि वह अपने गाँव चला गया है।भले ही जाने वाले का गृहनगर दिल्ली या कोलकाता जितना बड़ा महानगर हो पर बोलेंगे उसको गांव ही।

10- जिस तरह आलू ऑलराउंडर होता है हर सब्जी के साथ घुल मिल जाता है उसी तरह जैसे आलू - गोभी,आलू - मटर आदि। उसी तरह पाव भी मुंबई का सबसे ऑलराउंडर भोज्य पदार्थ है जो हर किसी के साथ मिल जाता है जैसे – बड़ा पाव, मिसिल पाव, रगड़ा पाव, पाव भाजी। इसके अलावा पाव, आलू की तरह ही ऑलराउंडर है जैसे चाय पाव, दाल पाव, सब्जी पाव या सूखा पाव भी खाने में धड़ल्ले से प्रयोग होता है।

11- मुंबई का सबसे प्रसिद्ध नाश्ता एक ही जो सभी तबके के लोग बड़े चाव से खाते हैं लेकिन उत्तर भारतीय उसे 'बड़ा पाव' कहते हैं जबकि मराठी -गुजराती उसी को 'वड़ा पाव' कहते हैं।

12- वैसे तो लोग जब तक बेहद जरूरी न हो तब तक संडास यानी शौचालय शब्द जुबान पर नहीं लाना चाहते मगर मुंबई की उपनगरीय लोकल ट्रेन सेवा में सैंडहर्स्ट रोड नाम का एक स्टेशन है जिसे लोग आम बोलचाल की भाषा में धड़ल्ले से संडास रोड कहते हैं ताकि उन्हें जुबान को ऐंठ कर न बोलना पड़े।

13 - जैसे दालचीनी में दाल नहीं होती, ऑमलेट में आम नहीं होता और कोलगेट में कोई गेट नहीं होता है वैसे ही मुंबई के चर्चगेट स्टेशन के आसपास कोई चर्च नहीं है।

14- आम तौर पर किसी शहर में पता पूछने पर लोग लेफ्ट या राइट जाने की बात कहते हुए लैंडमार्क के रूप में

किसी होटल या चौराहे के की बात करते हैं। पर मुंबई में पता पूछने पर कहते हैं 'सिग्नल से लेफ्ट/राइट मारो फिर एक ब्रिज गिरेगा ,उसी के बाजू का एड्रेस है।'

15- लोकल ट्रेन के हर डिब्बे में गेट के पास कोई न कोई प्लेटफार्म विशेषज्ञ जरूर समाजसेवा करता मिल जायेगा जो बिना पूछे ही लोगों को बताता मिलेगा कि " आगे आ जा, इस स्टेशन पर प्लेटफार्म लेफ्ट/राइट बाजू आयेगा।"

16- मुंबई में अक्सर लोग फ़िल्म स्टारों के घर देखने के लिये पाली हिल जाने को सोचते हैं। इस वीआईपी इलाके में ऑटोवाले जाने से कतराते है क्योंकि वापसी की सवारी नहीं मिलती और ऑटो वालों को खाली लौटना पड़ता है। सवारी ऑटोवाले से जब पूछती है "पाली हिल जायेगा"। ऑटोवाले अक्सर जाने से इंकार कर देते हैं तो सवारी झल्लाकर कहती है कि "पाली हिल नहीं जाएगा तो क्या ऑटो से समंदर पार करके दुबई जाएगा"। ऑटोवालों से सवारियों की चिक-चिक तमाशबीनों का खूब मनोरंजन करती है।

17- वैसे तो ट्रेनों में बैठने को लेकर सभी को बराबर अधिकार प्राप्त हैं लेकिन चर्चगेट से चलने वाली 'विरार की लोकल' में बोरीवली से पहले उतरने वाला पैसेंजर/कम्यूटर अगर बैठ जाये तो उसकी भूल को अपराध की कोटि का माना जा सकता है।

18-मुंबई में हर दिन आपको मोटिवेशनल स्पीकर मिल जाते हैं।मुंबई की उपनगरीय बस सर्विस 'बेस्ट' का कंडक्टर थोड़ी -थोड़ी देर बाद सवारियों को 'पुढ़े चला' कहता रहता है यानी कि आगे बढ़ो।बेस्ट के कंडक्टर मोटीवेशनल स्पीकर का भी रोल निभाते रहते हैं।

19- मुंबई की लोकल ट्रेनों में हुए वाकयात के बारे में कहा जाता है कि "लव में,वार में और लोकल ट्रेन में सब कुछ जायज है"। यह हैरानी की बात है कि खाली ट्रेन में लोग खड़े होकर सफर करते हैं और भरी ट्रेनों में लोग सीट के लिये मारपीट करते हैं।

20 - मुंबई में अच्छी चीजों की उपमा देने के लिये 'झकास' शब्द और खराब चीजों को बताने के लिये 'बकवास' शब्द का प्रयोग खूब होता है जैसे कि "वड़ा पाव बोले तो झकास, बर्गर बोले तो बकवास'।

21- बरोबर, एक नम्बर,आई शपथ, देवा शपथ, झोलझाल, लोचा, घंटा फर्क नहीं पड़ने का , कट ले, एक नम्बर, पांडु ,फाड़ू, पार्टी तो बनती है जैसे शब्द रोजमर्रा के शब्द मुम्बई में आपको सारे दिन सुनने को मिलेंगे।

तो फिर माया नगरी ,सपनों की नगरी को इक्कीस तोपों की सलामी देते हुए " ईहै बम्बई नगरिया तू देख बबुआ"।

लघुकथा

सुरेश पुष्पाकर
ग्रेट ब्रिटेन

काठ का ढेर

काठ के ढेर से कुछ दर्द भरी आवाज़ें आ रही थीं। हम असहाय थे, अपनों की मृत्यु का लगातार समाचार मिल रहा था, स्थिति बहुत दयनीय थी मनुष्यों द्वारा हमें काटे जाने के लिये लाये गये सभी यन्त्रों को हम साक्षात देख रहे थे, परन्तु कुछ न कर सकने की स्थिति में थे। अपने साथी वृक्षों को एक-एक कर धराशाई होते हुए देखा।

मन ही मन यह सोचते हुए कि क्या अपराध था हमारा, जिसकी सज़ा हमें मनुष्यों द्वारा दी जा रही है ? हमने इन मनुष्यों को साँस लेने के लिए शुद्ध वायु प्रदान की। अति गर्मी व घूप से बचाव करते हुए छाया प्रदान करते रहे । इन्हें भोजन के रूप में अनेक प्रकार के फल प्रदान किए । अनेकों बीमारियों से बचाव के लिए औषधि भी प्रदान की । यहाँ तक कि मनुष्य जब भी जीवन में निराश हुआ हमारी ही शरण में आया। हम तो इन्हें अपना मित्र ही समझते रहे, परन्तु यह तो विश्वासघात है। एक लकड़ी जो कभी वृक्ष का हिस्सा रही थी दूसरे साथी से यह व्यथा कहते-कहते मन ही मन मनुष्यों से प्रश्न पूछ रही थी।

तब उसके साथी ने बड़े ही भावपूर्ण शब्दों में कहा कि मित्र यह मनुष्य बहुत स्वार्थी प्राणी है। यह कृत्धन है, इसके प्रेम व मित्रता में भी इसका स्वार्थ निहित होता है। समय आने पर मनुष्य अपनों के साथ भी विश्वासघात करने से नहीं चूकता, इसमें भावनाएँ इसके स्वार्थ वश ही उत्पन्न व विलुप्त होते रहते हैं ।

यह बात सुनकर पहला साथी कहने लगा कि हमने तो मनुष्यों को मित्र ही माना है, अतः हम अपना मित्र-धर्म अंतिम समय तक निभायेंगे । मनुष्य के जीवन में भी तथा इसकी मृत्यु हो जाने पर भी इसके मृत देह की शैय्या बन कर इसके साथ धरती में समा जाना है, अथवा इसको साथ लेकर पंचतत्व में विलीन हो जाना है।

परिचर्चा

डॉ अनुराधा प्रियदर्शिनी
मथुरा

वरिष्ठ साहित्यकार:डॉ दिनेश पाठक शशि

मथुरा के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ दिनेश पाठक शशि जी के साथ डॉ अनुराधा प्रियदर्शिनी द्वारा की गई साहित्यिक परिचर्चा नवीन लेखकों के लिए प्रेरणा :

१. आप रेलवे में विद्युत अभियन्ता के रूप में कार्यरत थे ऐसे में साहित्य में आपकी रूचि कब और कैसे उत्पन्न हुई ?

आदरणीया अनुराधा जी:- इसके पीछे जीवन का एक विचित्र संयोग जुड़ा हुआ है। दरअसल मेरा ऐसा मानना है कि मनुष्य कुछ नहीं करता:- ईश्वर को जिस मनुष्य से जिस समय:- जो कार्य कराना होता है:- उसी के अनुसार उसकी परिस्थितियाँ और परिवेश बना देता है। फिर वह मनुष्य:- उस समय वही कार्य करता है ठीक एक कठपुतली की तरह। कठपुतली नचाने वाला जिस तरह कठपुतली की डोरी को चलाता है:- कठपुतली वैसे-वैसे ही नाचती रहती है। ठीक यही बात प्रत्येक प्राणी पर भी लागू होती है।

तो आपने पूछा कि विद्युत अभियन्ता के रूप में कार्यरत रहते हुए साहित्य में मेरी रुचि कब और कैसे हुई

हुआ यह कि जब मैं कक्षा 6-7 में पढ़ता था: - उस समय मेरे एक सहपाठी श्री नरेन्द्र सिंह के भाई साहब:- सस्ता साहित्य मण्डल दिल्ली में सर्विस करते थे। वहाँ से वह अपने छोटे भाई के लिए बहुत ही उत्कृष्ट साहित्यिक पुस्तकें ले आया करते थे। नरेन्द्र सिंह की उन पुस्तकों को पढ़ने में कोई रुचि नहीं थी। परिणाम स्वरूप उन लगभग डेढ़ हजार पुस्तकों को मैं एक पुस्तकालय अध्यक्ष की तरह नरेन्द्र सिंह की बैठक में व्यवस्थित तरीके से रखता था और वहीं से लेकर एक-एक करके मैंने वह सारी पुस्तकें पढ़ डालीं। रवीन्द्रनाथ टैगोर:- शरतचंद्र:- बंकिमचंद्र:- विमलमित्र:- रांगेय राघव:- गौरीशंकर राजहंस:- यशपाल: - जैनेन्द्र जैन:- शिवानी:- विष्णु प्रभाकर आदि-आदि बड़े से बड़े साहित्यकार के उपन्यास:- कहानी तो पढ़े ही कर्नल रंजीत और ओमप्रकाश शर्मा आदि के जासूसी उपन्यास भी बहुत से पढ़ डाले थे। उस 13-14 वर्ष की उम्र में पढ़ी गई उन पुस्तकों ने मेरे हृदय में अति संवेदशीलता एवं भावुकता को जन्म दिया जिसने आगे चलकर लेखन की ओर मुझे प्रवृत्त किया। ईश्वर को मुझसे लेखन कराना था फिर चाहे में अभियन्ता रहते हुए करूं या कुछ और करते हुए और वैसा ही उसने मेरा परिवेश बना दिया।

2- आपकी रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में कब प्रकाशित होने लगीं थीं\ तथा प्रारम्भ में किन पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई?

इंजीनियरिंग में पढ़ाई करते समय ही मेरी रचनाएँ भारत के अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थीं। सबसे पहली रचना एक कविता थी जिसका शीर्षक था-:- कार्बन और भगवान। यह विद्यालय की पत्रिका टैगमैग में सन् 1975 में प्रकाशित हुई थी। उसके बाद किशोर श्रीवास्तव जी के सम्पादन में झाँसी से प्रकाशित होने वाली पत्रिका मृगपाल में एक हास्य कहानी प्रकाशित हुई। और भी कई पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित होने लगीं किन्तु पैसा देने वाली पत्रिकाओं में पहली कहानी- ^सजा' शीर्षक से चंपक पत्रिका के वर्ष-1979 के अप्रैल-1 अंक में प्रकाशित हुई थी जिसपर उस समय चालीस रुपये का पारिश्रमिक मिला था। उसके तुरन्त बाद यानि भूभारती के मई-1979 अंक में बड़ों की कहानी, जिसपर उस समय 60 रुपये पारिश्रमिक के रूप में मिले थे।

3- प्रकाशन के लिए रचनाएँ भेजने की प्रक्रिया आदि के बारे में कुछ बतायें

अनुराधा जी आपने यह बहुत ही उत्तम प्रश्न किया है। वह इसलिए कि आज भी बहुत से नव लेखक ही नहीं:- वर्षों से लिख रहे और लिख-लिखकर डायरियाँ भर-भर के रखने वाले भी बहुत से साहित्यकारों को नहीं पता होता कि पत्र-पत्रिकाओं को रचना भेजने का सही तरीका क्या होता है। परिणाम स्वरूप रचनाएँ अस्वीकृत होकर लौट आने पर वे निराश हो जाते हैं। वास्तविकता यह है कि रचनाओं के प्रकाशन में सफलता प्राप्त करने के लिए रचनाएँ भेजने का सही तरीका आने पर आधी सफलता मिल जाती है। यह बात मैंने अपने अनुभवों से स्वयं सीखी।

अपनी रचनाओं के प्रकाशन के बारे में बहुत ही दिलचस्प किस्सा बताता हूँ। कक्षा ग्यारह में पढ़ते समय मैं किसी बड़े पुस्तकालय में जब पहली बार गया तो उसमें मैंने बहुत सी पत्रिकाएं जैसे धर्मयुग:- साप्ताहिक हिन्दुस्तान:-

कादम्बिनी:- पराग:- चंदामामा:- लोटपोट:- नंदन:- चंपक आदि देखीं। उनको पढ़ने पर मुझे लगा कि इस तरह की कहानियाँ तो मैं भी लिख सकता हूँ। और बस:- जब भी अवसर मिलता मैं अपनी रफ कॉपी में कुछ न कुछ लिखने लगा। टेड़ी-मेड़ी कविता की कुछ लाइनें या कुछ कहानी जैसी सामग्री आदि।

अब मेरे युवामन में प्रश्न यह उठता था कि इन सारी पत्रिकाओं में ये छपती कैसे हैं:- किससे पूछा जाय। बहुत से अध्यापकों और मित्रों से भी पूछा पर सही-सही कोई न बता सका तो एक दिन मैंने एक अंतर्देशीय पत्र पर कुछ लिखा और लोटपोट पत्रिका के पते पर भेज दिया।

15 दिन बाद डाक से मुझे एक लिफाफा मिला। खोलकर देखा तो उसमें मेरे द्वारा लोटपोट को भेजा गया वह अंतर्देशीय पत्र था तथा सम्पादक का रचना अस्वीकृति का पत्र भी था। किन्तु उस लिफाफे में सम्पादक ने एक बहुत ही महत्वपूर्ण चीज भी भेजी थी। लेखकों द्वारा रचनाएँ भेजने के नियम:- जैसे फुलस्केप कागज के एक ओर लिखें:- बांयीं ओर एक-डेढ़ इंच का तथा सीधी ओर आधा इंच का हासिया छोड़ें। पहले पृष्ठ पर ऊपर बांये कोंने में रचना की विधा:- बीच में शीर्षक तथा दांईं ओर अपना नाम:- पता आदि लिखें। रचना के अंत में भी अपना नाम:- पता आदि लिखें।(वर्तमान में मोबाइल नम्बर और ईमेल भी लिख देना ठीक रहता है।) ये वे नियम हैं जिनको आज भी नवोदित साहित्यकार नहीं जानते हैं। उन नियमों को पढ़कर मुझे जो प्रसन्नता हुई वह अवर्णनीय है।

उन्हीं नियमों का पालन करते हुए मैंने भेजना प्रारम्भ किया और पत्रिकाओं से लगातार स्वीकृति पत्र मिलने लगे।

4.आपकी साहित्यक यात्रा में परिवारजनों की क्या भूमिका थी ?

मेरी साहित्यिक यात्रा में परिवारीजनों की बहुत बड़ी सहयोगी भूमिका यह रही कि उन्होंने मुझे इस बात के लिए कभी नहीं टोका कि मैं अपनी पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त भी बहुत सी पुस्तकें क्यों पढ़ता रहता हूँ। पिताजी ज्योतिष और कर्मकाण्ड के प्रकाण्ड विद्वान थे। वह वी.पी.पी. से अक्सर ही पुस्तकें मंगाते रहते थे। जिनमें उनकी ज्योतिष सम्बन्धी पुस्तकें अधिक होती थीं। उन सब पुस्तकों को भी पिताजी से पहले ही मैं पढ़ लिया करता था। माँ:- धर्म परायण गृहणी थीं जो अक्सर ही मुझे यह कहती रहती थीं कि कभी-कभी खेलने भी चला जाया कर। पूरे दिन किताबों में ही घुसा रहता है कीड़ा की तरह। तीन भाई और तीन बहनों में, मैं पांचवे नम्बर की संतान हूँ। बचपन में अपने पिताजी के सानिध्य में ही अधिक रहा अतः उनके दिए संस्कारों –

- मातृवत परदारेषु पर द्रव्येषु लोष्ठवत्
आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति स पश्यति'

और

अयं निजः परोवेति गणना लघु चेतसाम
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

ने सर्विस और समाज में कभी मार्ग से बिचलित नहीं होने दिया। आज भी उनका पालन करता हूँ।

5. आप एक प्रतिष्ठित बाल साहित्यकार हैं जिन्होंने बच्चों के लिए अनेकानेक साहित्य सृजन किया है। जिसमें कहानी कविता नाटक और उपन्यास सम्मिलित हैं। बाल-साहित्य के सृजन के समय शब्दों के चयन का स्तर क्या होना चाहिए ?

अनुराधा जी :- मैं आपको बताना चाहूंगा कि लेखन में प्रवृत्त होने के बाद मैंने बाल साहित्य और बड़ों का साहित्य:- दोनों का ही लेखन साथ-साथ किया। जिस महीने मेरी बड़ों के लिए लिखी गई कोई रचना कादम्बिनी या नवनीत में प्रकाशित होती थी:- संयोग से उसी महीने बाल पत्रिका चंपक या बालक या बालहंस में भी कोई न कोई बाल रचना प्रकाशित हो जाया करती थी। सन् 1975 से 1985 के बीच का दौर ऐसा रहा कि एक-एक महीने में 6-6 पत्रिकाओं में रचनाएं एकसाथ प्रकाशित हो जाती थीं। बाल साहित्य के सृजन के समय शब्दों के चयन के स्तर का प्रश्न आपने किया है। इस सम्बन्ध में मैं एक उदाहरण देना चाहूँगा।

कथाबिंब के जून-सितम्बर-2024 अंक में उसके सम्पादक प्रबोध कुमार गोविल जी द्वारा अपने साक्षात्कार में भाषाई जटिलता के प्रश्न का उत्तर देते समय कहा गया यह वाक्य कि-

भाषा कभी भी सरल या कठिन नहीं होती। केवल आप उससे परिचित या अपरिचित होते हैं।' बहुत महत्वपूर्ण है। मान लीजिए आप उर्दू नहीं जानते और आपके सामने एक उर्दू की पुस्तक पढ़ने के लिए रख दी जाय। तो:- चूंकि आप उस भाषा से अपरिचित हैं इसलिए आपको वह कठिन लगेगी यानि आपको कोई आनन्द नहीं आयेगा। उसी तरह जब आप अपनी कोई रचना बच्चों को ध्यान में रखकर लिख रहे हैं तो निश्चित ही ऐसी भाषा का प्रयोग समीचीन होगा जिससे बच्चे परिचित हों यानि बच्चे उसे प्रसन्नता से पढ़ें और पढ़कर आनन्दित हों और ऐसा आप तभी कर पायेंगे जब आप अपनी वर्तमान उम्र को भूलकर अपने बचपन में विचरण करने लगें।

6.क्या बाल साहित्य पीढ़ियों के बीच के अंतर को कम करने में सहायक है?

आदरणीया:- समय परिवर्तनशील है और समय के साथ-साथ सभी कुछ स्वतः ही बदलता रहता है। एक समय हुआ करता था कि बच्चा माता-पिता के सामने कुछ कहने में हिचकिचाता था। पिता तक अपनी कोई बात पहुंचाने के लिए माँ का आश्रय लेता था। बड़ों के सामने बोल नहीं पाता था। वर्तमान में युग का प्रभाव कहिए या शिक्षा का प्रभाव या सामाजिक जाग्रति:- आज एक पौत्र भी अपने बाबा-दादी के सामने ऐसे बात करता है जैसे वे बड़े-बुजुर्ग न होकर उसके मित्र हों।

लेकिन जिस पीढ़ियों के अन्तर की बात आप कहना चाह रही हैं वह एक अलग बात है। उस जमाने में माता-पिता से

बात करने में डर लगता था। उनके प्रति भावनात्मक लगाव:- उनके प्रति हृदय में आदर का भाव:- उनके प्रति सेवा भाव होते हुए भी वे दूर-दूर रहते थे। आज नई पीढ़ी के माता-पिता ही नहीं उनकी संतानें भी अपने-अपने कामों में इतने व्यस्त हो गये हैं कि उनके पास अपने बुजुर्गों को देने के लिए:- उनके हाल-चाल पूछने के लिए समय ही नहीं है। तो जैनेरेशन गैप तो किसी न किसी रूप में हर युग में रहा है।

फिर दूसरी बात:- जब संयुक्त परिवार हुआ करते थे:- बच्चे सहज रूप से ही अपनी संस्कृति को परम्परानुगत रूप से आत्मसात कर लिया करते थे। सोने से पहले दादी-नानी या बाबा-नाना द्वारा सुनाई गई छोटी-छोटी कहानियाँ या रामचरित मानस की चौपाइयाँ बच्चों में चरित्र निर्माण का कार्य करती थीं। अब तो न चाहते हुए भी नौकरी पेशा व्यक्ति की मजबूरियाँ:- संयुक्त परिवारों को एकल परिवारों में बदले दे रही हैं।

अब आती है बात बाल साहित्य की । चूंकि बच्चा ही किसी भी राष्ट्र की नींव का पत्थर और भावी नागरिक होता है। अतः इस बात का ध्यान रखते हुए बाल साहित्य का तो हमेशा से ही उददेश्य यही रहा है कि बच्चों के सर्वांगीण विकास यानि शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक और सामाजिक विकास की दिशा में उन्हें अग्रसर करना। एक ऐसा नागरिक बनाना जो राष्ट्रप्रेमी भी हो।

इस बारे में बाल-मनोवैज्ञानिकों का ऐसा मानना है कि स्वस्थ बाल-साहित्य पढ़ने से बच्चों का विकास अधिक तीव्रता से होता है क्योंकि पढ़ना केवल भौतिक अनुभव ही नहीं बल्कि उसके द्वारा भावनात्मक अनुभव भी प्राप्त होता है। इसलिए बाल-साहित्य बच्चों की रुचि:- उत्सुकता तथा महत्वाकांक्षा को परिष्कृत रूप प्रदान करता है। अच्छा बाल साहित्य उन्हें देश-प्रेम:- एकता:- त्याग:- शौर्य:- स्वाभिमान व मानव मूल्यों के प्रति प्रेरित करता है।

लगभग दो हजार वर्ष पूर्व जब दक्षिण के राजा अमर शक्ति के तीनों पुत्र बहुशक्ति:- उग्रशक्ति:- और अनन्तशक्ति उच्छृंखलता की सीमाएं पार कर रहे थे और राजा ने उनके भविष्य के प्रति घोर चिंता में अपने राज्य में घोषणा तक करा दी थी कि इन तीनों को सुधारने वाले को बहुत सारा इनाम दिया जायेगा तब वह बाल साहित्य ही था जिसका सृजन विष्णुशर्मा ने पंचतंत्र के रूप में किया था जिसने तीनों राजकुमारों को नीति एवं व्यवहार कुशल नागरिक बना दिया था।

घर के बुजुर्ग यानि बच्चों के दादा जब अपने पौत्र-पौत्रियों को चिकने कागज पर छपी रंगीन चित्रों वाली किसी बाल कविता की पुस्तक से कोई कविता या बाल कहानी की पुस्तक से कोई बाल कहानी उनको पास बैठाकर सुनायें तो बच्चों को आननद न आये:- ऐसा हो ही नहीं सकता। वे अपने दादाजी के कंधों पर चढ़-चढ़कर भी रचना सुनते हुए आनन्द लेंगे। इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं कि बाल साहित्य पीढ़ियों के अन्तर को कम करने में सहायक है।

7.कुछ साहित्यकारों का मानना है कि बाल साहित्य लिखने वाले समसामयिक विषयों को अनदेखा करने के अभ्यस्त हो जाते हैं ?

जो साहित्यकार ऐसा मानते हैं वे या तो स्वयं ही साहित्यकार नहीं हैं या फिर उनके अध्ययन में कमी है। आज का बच्चा इतना जिज्ञासु है:- इतना ज्ञान-वान और तीव्रबुद्धि का है कि उसे बातों से बहलाया नहीं जा सकता। उसे समसामयिक विषयों की जानकारी आज बड़ों से कहीं अधिक है।

तो जो साहित्यकार यदि समय के साथ अपने लेखन में परिवर्तन कर पाने में असमर्थ है यानि समसामयिक विषयों को अनदेखा करके सृजन कर रहा है तो उसके सृजन को बच्चा सिरे से नकार देगा। इसलिए साहित्यकारों के सामने भी आज यह बहुत बड़ी चुनौती आप कह सकती हो।

पहले केवल राजा-रानी:- और परी कथाएं लिख:- कहकर काम चल जाता था किन्तु आज ए-आई.' का युग है। हम पुरानी पीढ़ीं की कल्पना से परे का युग चल रहा है। लेकिन बच्चे उसे सहज में स्वीकार कर रहे हैं। उसके साथ साथ चल रहे हैं।

8.क्या आप भी ऐसा महसूस करते हैं ? कविता लेखन में मात्रा भार ठीक करते समय कई बार लोग अशुद्ध -शब्दों का प्रयोग कर देते हैं ,यह कहाँ तक उचित है |

अनुराधा जी मैंने शुरू-शुरू में एक बात कही थी कि ईश्वर को जिस मनुष्य से जिस समय:- जो कार्य कराना होता है:- वह मनुष्य, उस समय वही कार्य करता है ठीक एक कठपुतली की तरह। कहने का आशय यह है कि कोई भी रचना सायास नहीं लिखी जा सकती। कविता तो बिलकुल ही नहीं। कविता पूर्णतः हृदय की चीज है। अगर कविता लिखकर मात्राएं गिनने की आवश्यकता पड़ रही है तो समझिये कि वह काव्य रचना हृदय से उत्पन्न रचना नहीं है। काव्य रचना के लिए तो जब माँ सरस्वती कृपा करती हैं तो हृदय के भाव नदी की भाँति कल-कल करते हुए स्वतः ही प्रवहमान हो उठते हैं। उसके लिए मात्राएं गिनने की आवश्यकता नहीं होती। संत शिरोमणि तुलसीदास जी ने इतना बड़ा महाकाव्य श्री रामचरित मानस:- मात्राएं गिन-गिन कर नहीं लिखा था। फिर भी आप कोई भी दोहा उठाकर देख लीजिए। नपी-तुली 13-11, 13-11 मात्राएं ही मिलेंगीं।

9. लिखने के साथ ही आप विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में संपादक और संरक्षक हैं। एक संपादक को किन किन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है ।

अनुराधा जी, मेरे अपने विचार से सम्पादक का कार्य एक बहुत ही जिम्मेदारी का कार्य होता है साथ ही बहुत ही समय साध्य और श्रमसाध्य भी। कुशल सम्पादक वही कहला सकता है जिसका हर क्षेत्र में विशद् अनुभव हो, और अनुभव प्राप्त होता है विशद अध्ययन से। लेखक द्वारा भेजी गई रचना वास्तव में मौलिक:- अप्रकाशित है या नहीं:- जिस लेखक ने भेजी है उसी की है या चोरी की है। किसी प्रकार के विवाद को उत्पन्न करने वाली तो नहीं है। पत्रिका

के स्तर के अनुरूप है या नहीं । और भी अनेक बहुत सी बातें होती हैं जो केवल गहन अध्ययन:- अध्यवसाय के फलस्वरूप ही प्राप्त होती हैं। लेकिन वर्तमान में सम्पादन कार्य से जुड़े कुछ लोगों में भी शिथिलता या अनुभवहीनता परिलक्षित होने लगी है जैसे कि कुछ पाठ्य पुस्तकों में सम्पादनकर्ताओं ने किसी रचनाकार की रचना को किसी अन्य की रचना बता कर शामिल कर दिया। इस बारे में 11 अगस्त 2024 को आपने ही मेरे पास सी बी एस ई बोर्ड की कक्षा पांच की पाठ्यपुस्तक का वह पेज भेजा था जिसमें सम्पादक द्वै ने कवि वृन्द के दोहे को रहीमदास जी का दोहा लिखकर समाहित किया हुआ था:- अनुभवहीनता का इससे अधिक भयंकर उदाहरण और क्या होगा।

10. नए रचनाकारों को आप क्या सन्देश देना चाहेंगे?

अनुराधा जी, मैं तो स्वयं ही अभी अपने आप को साहित्य का एक विद्यार्थी ही मानता हूँ तो फिर किसी को सन्देश देने का अहंकार क्योंकर पालूँ\ हाँ इतना जरूर निवेदन करूंगा कि साहित्य में रातोंरात प्रसिद्धि पा लेने की जो होड़ वर्तमान में दिखाई दे रही है वह सब तरह से साहित्य का बहुत अहित कर रही है। कच्चा-पक्का कुछ भी लिखा और फेसबुक:- वाट्सअप पर परोस दिया। उस परोसे हुए का एक भी शब्द न पढ़ने के बावजूद वाह वाह करने वालों की भीड़ भी कम नहीं है। विशेषकर लेखिकाओं की रचनाओं पर। ऐसे में प्रकाशकों को पैसा देकर अपनी एक-दो पुस्तक छपवा लेने के बाद वह लेखक या लेखिका अपने आप को सर्वश्रेष्ठ घोषित करने में विलम्ब नहीं करता।

इसलिए मेरा तो यही निवेदन है कि साहित्य लेखन एक साधना है और उसे साधना के रूप में ही लिया जाना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि प्रख्यात् साहित्यकारों के उत्कृष्ट साहित्य का अधिक से अधिक अध्ययन किया जाये। प्रत्येक साहित्यकार की अपनी अलग भाषा-शैली होती है जिसके निरन्तर अध्ययन से नवोदितों को बहुत कुछ सीखने को मिलता है।

11- आपने बच्चों के साथ-साथ बड़ों के लिए भी हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं में लिखा है। जिनमें से एक विधा लघुकथा भी है। आप अपनी काई लघुकथा सुनाना चाहेंगे?

जी, अवश्य।

एक लघुकथा सुनिए।

लघुकथा का शीर्षक है- साया

इस लघुकथा का उद्देश्य, घर के बुजुर्गों की उपस्थिति के महत्व को दर्शाना है।

साया

दादीजी की अस्वस्थता जितनी अधिक होती जा रही थी उससे भी अधिक इस स्थिति में बात-बात पर उनका चिड़चिड़ापन पूरे परिवार को असहनीय होता जा रहा था। उनके इस व्यवहार से तंग आकर घर के लोग ही नहीं पास-पड़ोस के लोग भी ऊबने लगे थे।"लगता है अमृत पीकर आई है बुढ़िया, एक सौ पाँच साल की हो गई फिर भी.....।" -आस-पड़ोस की महिलाएँ अपने विचार व्यक्त किए बिना न रहतीं।

किसी चीज की जरूरत पड़ने पर दादी बार-बार एक ही बात को दुहराने लगतीं तो तंग आकर छुटका बोल पड़ता- "ओफ्फो दादीजी आप तो बेमतलब का शोर मचाने लगती हो थोड़ी सी तसल्ली भी रखा करो।

दादीजी पूरी रात आवाज लगा-लगाकर सबकी नींद में खलल डालती रहतीं मगर ऐसी हालत में भी पापा पूरी तरह शान्त बने रहकर दादीजी की सेवा में तत्पर थे। उन्हें न तो दादीजी द्वारा बार-बार पुकारे जाने पर गुस्सा आता और न दादीजी द्वारा रात भर जगाये जाने पर और न बच्चों जैसी जिद करने पर ही।

इसके बावजूद आखिर एक दिन दादीजी चल बसीं। पापा एकदम से गुमसुम हो गये। आखिर जब उनकी चुप्पी मुझसे बर्दास्त नहीं हुई तो मैंने टोक ही दिया,'-

"क्या बात है पापा, दादीजी के गुजर जाने के बाद से आप कुछ ज्यादा ही गुमसुम से हो गये हैं।आखिर एक सौ पाँच साल की थीं दादी। उन्हें तो जाना ही था। ऐसी स्थिति में भी आपने उनकी जितनी सेवा की उतनी हर कोई नहीं कर सकता।फिर भी आप.....

"तू ठीक कह रहा है बेटा।"-पापा ने अपनी चुप्पी तोड़ी- "लेकिन तेरी दादी जैसी भी थीं, जब तक जिन्दा रहीं मुझे अपने ऊपर उनका 'साया' प्रतीत होता था और मैं उनके सामने अपने आपको बहुत छोटा बच्चा समझता रहता था। लेकिन अब उनका साया अपने ऊपर से उठ जाने से, अब मैं ही घर का सबसे बुजुर्ग मुखिया बन गया हूँ।

बुजुर्ग का साया जब तक अपने ऊपर रहता है कितना सुकून मिलता है, ये बात तुम मेरे चले जाने के बाद समझोगे बेटे।

11. बाल साहित्य में भी आपने बाल कहानी, बाल कविता, बाल समालोचना एवं बाल काव्य भी रचा है। चलते-चलते क्या आप अपनी एक बाल कविता भी सुनाना चाहेंगे??

जी, अवश्य। नये सन्दर्भों में चंदा मामा के ऊपर लिखी गई बाल कविता सुनिए। इसमें एक बच्ची अपने छोटे भाई के प्रश्नों को सुन सुनकर चंदा मामा से ही प्रश्न कर बैठती है-

चन्दा मामा

चन्दा मामा, चन्दा मामा मुझको बहुत सताते हो।
तकती रहती राह तुम्हारी नहीं समय पर आते हो।।

इतने बड़े हो गये फिर भी शरम नहीं तुमको आती।
आते हो तुम रोज देर से राह देख मैं सो जाती।
तारों की इस महासभा के तुम प्रधान बन जाते हो।।

भैया मुझसे रोज पूछता चाँद कहाँ पर रहता है।
क्या खाता है,क्या पीता है शीत-घाम क्यों सहता है?
कभी चाँद के गाल फूलकर कुप्पा से हो जाते हैं।
कभी पिचक कर रोटी के टुकड़े जैसे रह जाते हैं।।
भैया की इस अबुझ पहेली, में, क्यों हमें फँसाते हो?

क्या तुमने भी नेताओं की तरह घोटाले कर डाले।
इसीलिए क्या लगा रखे हैं अपने होठों पर ताले?
क्या तुमने भी स्विसबैंक में अपना खाता खोला है?
कहाँ छुपा रक्खा है मामा टॉफी वाला झोला है?
छुपे-छुपे क्यों घूम रहे हो, क्यों इतना घबराते हो?

नहीं किया घोटाला मैंने नहीं कहीं खाता खोला
दूर हो गया हूँ मैं तुमसे जब से मनुज मुझ पर डोला
मुझको जब से मानव ने कंकड़-पत्थर का बतलाया।
बच्चों मैंने उस दिन से ही नहीं अभी तक कुछ खाया।।
तुमको मैं अच्छा लगता हूँ। मुझको भी तुम भाते हो।।

लघुकथा

समझदारी

"श्यामा, सो गई क्या?"
" हम्म्म... नींद तो आ रही है।आप क्यों जाग रहे हैं? लाइट बंद कर दीजिए, आंखों में चुभ रही है।"
" श्यामा भूख लग रही है।"
" देखिए आप खाना खा चुके हैं,अब कुछ खायेंगे तो पेट खराब हो जाएगा।"
टिंग– टोंग
" इतनी रात को कौन आया है?मोहन ने चिंतित स्वर में पूछा
" बच्चों ने ऑनलाइन कुछ खाने का मंगवाया होगा"
" इतना लेट!"
" नाइट शिफ्ट चल रही है,लग गई होगी भूख"
" हम भी चले क्या?"
" अरे नहीं!तुम भूल गए क्या? जब विवेक पेट में था, तब तुम भी तो देर रात काम से लौटते हुए रसगुल्ले की मटकी चुपके से ले आते थे और हम चुपचाप खा कर मटकी छुपा देते थे."
हा हा हा – मोहन की हंसी छूट गई।
तभी दरवाजे पर दस्तक हुई।
" मम्मीजी.. आप जाग रहे हैं क्या?"
" हां बेटा,बोलो.."
" आइसक्रीम मंगवाई है।आइए साथ में खाते हैं।"
मोहन की आंखों में चमक आ गई।
मोहन की तरफ मुस्कुराते हुए देखकर श्यामा ने कहा "अभी आते हैं बेटा।"

अश्विनी देशपांडे
फरीदाबाद हरियाणा

अभिषेक

"चिंटू चल जल्दी वरना और अधिक भीड़ हो जाएगी, भोले नाथ मंदिर में|" तेज चलते हुए सौम्या ने कहा|
"हाँ, माँ चल रहा हूँ!"
सावन होने से मंदिर में कुछ ज्यादा ही भीड़ थी|
कुछ समय बाद सौम्या मंदिर के अंदर आसन पर बैठ, प्लास्टिक बेग से पूजा का सामान निकाल थाली में रखने लगी,दीपक और अगरबत्ती सुलगाई, बेग से ताम्बे का लोटा निकाल बेग में दूध की थैली ढूंढने लगी| दूध न पाकर वह चिंटू से बोली, "दूध की थैली कहाँ रखी?"
चिंटू कुछ न बोला|
"बताओ?"
जब कोई जवाब न मिला तो सौम्या गुस्सा होते हुए बोली, "पहले जिद्द किया, कि मैं पूजा सामग्री का बेग पकड़ कर चलूँगा, तुझे बेग पकड़ने को दी तो तूने दूध की थैली गिरा दी!"
आठ साल का चिंटू चुप-चाप बैठा रहा|
"अब भोले नाथ का अभिषेक कैसे करेंगे? और आज सावन का आखरी सोमवार है!"
चिंटू उदास होते हुए बोला, "माँ मैंने दूध की थैली नहीं गिराई!"
सौम्या फिर चिल्ला कर बोली, "फिर घर पर ही छोड़ दी क्या?"
"नहीं माँ!"
चिंटू मुंह लटकाकर उदास होते हुए बोला, "जब हम लाइन में खड़े थे, मंदिर के बाहर, एक आंटी अपने छोटे बच्चे के लिए दूध मांग रही थी, तो मैंने दूध की थैली उनको दे दी!"

वैदेही कोठारी
रतलाम (मध्यप्रदेश)

लंदन में महात्मा बुद्ध की अस्थियां- कहानी पिपरहवा स्तूप की

कादंबरी मेहरा

प्रवासी साहित्यकार ,विवाहोपरांत लंदन में निवास , मूलतः लखनऊ से है। ,लंदन में मुख्य धारा में लगभग 30 वर्षों तक अध्यापन ,12 पुस्तकें प्रकाशित जिनमें दो १. चाय की विश्वयात्रा और २. भारत के मूक प्रवासी ऐतिहासिक महत्व की हैं।

प्रस्तुत आलेख कादंबरी जी के तीसरे ऐतिहासिक / सांस्कृतिक आलेख संग्रह का हिस्सा होगी।

ईमेल :kadamehra@googlemail.com

जी हाँ। लिखित इतिहास के सबसे महान संत , महात्माबुद्ध, की अस्थियाँ आज लंदन में एक व्यक्तिगत संग्रह में भारत द्वारा उपेक्षित पड़ी हैं। अन्य सभी देशों ने अपने नैतिक गुरुओं ,या महत्वपूर्ण व्यक्तियों के अवशेषों को संभालकर रखा है। मिस्त्र के प्राचीन राजा तूतनखामन की ममी फ्रांस ने उनको वापिस कर दी। लूवर संग्रहालय की सैर करते हुए मैंने पूछा कि तूतनखामन की ममी कहाँ रखी है तो परिचारक ने आदर से उत्तर दिया जहां उसे होना चाहिए ,अपने देश में।

तो फिर हमारी अनमोल वस्तुएं क्यों विदेशों में धक्के खा रही हैं। क्यों उनकी इज़्ज़त ,आत्मा , प्यार और गौरव से उनको वंचित किया जा रहा है। उनको दिखा दिखाकर करोड़ों का धन रोज़ाना इंग्लैंड कमा रहा है। अकेले कोहिनूर से रोज़ाना की आमदनी दस करोड़ रुपये है। और उसको देखने आने वाले पर्यटक अधिकाँश भारतीय होते हैं। यानि हमारी ही चीज़ हमें ही दिखाने भर के लिए ढेरों पौंड हमीं से वसूले जाते है, यानि भारत का पैसा खर्च होता है और उनके खजाने भरते हैं। हम अभी तक अंग्रेजों को पालपोस रहे हैं। ऐसे उदाहरणों से इंग्लैंड और अमेरिका ,एवं यूरोप के अनेक देश ,भरे पड़े हैं। कई जगह दर्शन फ्री हैं मगर इंग्लैंड सबसे अधिक धूर्त है। यही नहीं अधिक कीमती वस्तुओं का इतिहास ही बदल दिया गया है। वाशिंगटन के स्मिथ सोनियन संग्रहालय में कोल्लूर से उत्पन्न नीला हीरा ,जिसे अब होप डायमंड कहा जाता है ,किसी समय मुग़ल सम्राट के गले की शोभा बढ़ाता था क्योंकि उसे औरंगज़ेब ने दक्षिण विजय के काल में हासिल किया था। मगर अब उसका इतिहास फ्रांस के राजा से शुरू होता है। उसके पहले वह कहाँ से आया था?, इसका कोई जिक्र नहीं। ऐसी मान्यता है कि यह 'स्यामन्तकमणि' है जो श्रीकृष्ण अपने गले में धारण करते थे। इसको भुवनेश्वर के मंदिर से उड़ाया गया था। वहां से गुजरात के नवाब ने मुग़ल सम्राट को भेंट किया था। बाद में औरंगज़ेब की एक रखेल ने इसे पार कर दिया और टेवेर्निएर नामक फ्रेंच विदेशी जौहरी के हाथ बेच दिया। वह इसको फ्रांस के राजा के हाथ बेच आया।परन्तु यह सब किंवदंतियां कहकर बुहार दी गईं और लिखित इतिहास में केवल यह कहा जाता है कि यह फ्रांस के राजा का हीरा था।

जवाहरातों और सोने चाँदी को तो भूल ही जाओ, मगर महात्मा बुद्ध ने कब चाहा था की उनके अवशेष , उनकी अंतिम इच्छा का उल्लंघन करके ,उनकी समाधि की शांति भंग करके ,खोदखाद के सात समुन्दर पार ले जाए जाएँ ? अपनी तो रानी विक्टोरिया ने भारत में कदम रखने से इंकार कर दिया था क्योंकि हमें वह विधर्मी यानि हीन समझती थी और भारत आना उसकी मर्यादा के विरुद्ध था। तो उसी मापदंड से एक धर्मगुरु की

चिरसमाधि भ्रष्टकरके उसकी अस्थियाँ चुराकर ले जाना कहाँ की मानवता है!

कैसे हुआ यह जघन्य कृत्य ? कहानी लम्बी है। और एक अत्यंत जघन्य हत्या कांड से भी जुड़ी है।

ई.१८३४, विलियम पेपे नामक एक व्यक्ति को भारत भेजा गया था, शक्कर की उपज को सुधारने के लिए और पुरानी एक मिल को ठीक करने के लिए। इसने शक्कर को महत्त्व नहीं दिया और अधिक लाभ देने वाली नील की फसल चारों ओर लगा दी। नील की फसल की देखभाल के लिए इसने घुड़सवारों की एक फ़ौज तैयार की। इसकी ज़मींदारी के एक गाँव में ५०००जुलाहों का एक गाँव था जिसका नाम , 'महुआडबर' था । यहाँ अंग्रेजों के प्रति आक्रोश बहुत था क्योंकि उन्होंने जुलाहों के अंगूठे और हाथ काट दिए थे। एक दिन मौका पाकर छह अंग्रेजों को इन लोगों ने मार डाला और फरार हो गए। बदले में अंगेजों की कंपनी सरकार ने विलियम पेपे को हुक्म दिया कि इनको सबक सिखाओ। उसने सारा गाँव घेर कर जला दिया। कोई भी बचने नहीं पाया। उसके इस कृत्य से खुश होकर कंपनी सरकार ने उसे ईनाम में मीलों ज़मीन दे डाली जो नेपाल की सीमा से लगती थी। इसमें बस्ती और गोरखपुर का क्षेत्र आता था। विलियम पेपे ने बिरदपुर नामक स्थान पर अपना घर बनवाया जिसको बर्डपुर कहा जाता है। यहां उसका परिवार फला फूला।

इसी के पोते विलियम क्लैक्सटन पेपे ने आगे चलकर पुरातत्व की शिक्षा हासिल की। बिरदपुर से करीब साठ किलोमीटर की दूरी पर ,उत्तर की ओर ,एक मिटटी का टीला था। विलियम क्लैक्सटन पेपे को इसमें कुछ दबे होने की शंका हुई। यह गाँव पिपरहवा कहलाता है। इसी के बहुत पास एक और गाँव गँवारिया भी है। यह क्षेत्र महात्मा बुद्ध की राजधानी कपिलवस्तु से बहुत पास है केवल दस एक मील और लुम्बिनीवन से केवल१२मील दूर है। खुदाई में मिले साक्ष्यों के अनुसार यह स्थल कपिलवस्तु होने का प्रमाण देता है। यद्यपि कपिलवस्तु नेपाल की सीमा के अंदर , तिलौरकोट नामक किले के आसपास सुनिश्चित कर दिया गया है। पेपे बुद्धिमान व्यक्ति था और उसको इतिहास में विशेष रुचि थी।

ई. १८९८ में उसने इस टीले की खुदाई करवाई। मिटटी के डूह के नीचे एक पक्की प्राचीन ईंटों की ईमारत मिली। पेपे ने इसमें एक सुरंग खुदवाई। करीब१७ / १८ फुट नीचे उसको एक कमरा मिला जिसमें एक पत्थर का आयताकार संदूक मिला। पेपे ने इसको खुलवाया। तो उसमें से एक काली मिटटी का अस्थिकलश प्राप्त हुआ। इस पर ब्राह्मी लिपि में एक वाक्य खुदा हुआ था। कलश के अंदर भी अन्य कलश थे। कुल पांच सोने चाँदी के आभूषणों और अनेक अलंकरणों से सजे हुए यह पात्र कदाचित महात्माबुद्ध की अस्थियों और भस्मावशेषों से भरे हुए थे।

महापरिनिर्वाण से पूर्व तथागत ने अपने शिष्यों से कहा था की उनके अवशेष उनके अपने वंशजों को सौंप दिए जाएँ। विलियम क्लैक्सटन पेपे ने इस आदेश का ध्यान करके उस काल के पुरातत्ववेत्ता विद्वानों से कलश पर लिखी इबारत को पढ़ने के लिए कहा। जर्मनी के लिपिज्ञाता जॉर्जब्यूह्लर ने इसका अंग्रेजी में अनुवाद किया। अक्षरों को देवनागरी में लिखा गया।

सुकीति भातिनम सभागिनि कान मसा-पुता –दलान मईया मसलिला –निधाने बुधासा भगवतेसा कियानम।

अर्थात :-

यह अस्थि – गृह भगवान्बुद्ध का है। उनके शाक्य वंश के भाई बंधुओं द्वारा दान किया गया है , जिनका सम्बन्ध उनकी बहनों ,पुत्रों और पत्नियों से है।

इस खुदे हुए सन्देश से पता चला की यह अवशेष महात्मा बुद्ध के ही थे। फिर भी इसकी पुष्टि अनेक विदेशी भाषाविदों से करवाई गयी। अंग्रेज नहीं चाहते थे कि उस काल के भारतीय नेताओं को इसका पता चले। एक अन्य विद्वान ने इसका पुनःअनुवाद किया और लिखा

यह अस्थि अवशेष पात्र वरद शाक्य पुत्र महात्माबुद्ध सुकीर्ति के भाई बंधुओं और उनकी बहनों ,बेटों और उनकी पत्नियों द्वारा दान किया गया पवित्र उपहार है।

सौ वर्ष के बाद भी हैरीफॉक नामक विद्वान ने इस अनुवाद को सही बताया।

जहां तक इस कलश की प्राचीनता का प्रश्न है ,शुरू-शुरू में यह मान लिया गया की यह महात्माबुद्ध के निधन के आस-पास ईसा पूर्व ४८० का है। मगर सन१९९७ई. में भारत के पुरातत्ववेत्ता अहमद हसन दानी ने प्रश्न उठाया कि इस पर लिखी विज्ञप्ति उतने सुन्दर अक्षरों में नहीं है जो उस काल के लेखन की विशेषता रही थी। यह अनगढ़ हस्तलिपि में जल्दी में खुदे अक्षर हैं। अतः उनके अनुसार यह कलश बहुत बाद में इस स्तूप में रखा गया होगा। वह इस स्तूप की तारीख २५० ईसा पूर्व सुनिश्चित करते हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है की संभवतः इसको सम्राट अशोक ने बनवाया होगा या पुराने स्तूप का पुनरुद्धार किया होगा। क्योंकि बौद्ध धर्म स्वीकार करते ही मौर्य सम्राट अशोक ने पूरे राज्य में अनेकों स्तूप बनवाये थे और अपने इष्टदेव की अस्थियों को उनमें वितरित किया था। अन्य विद्वानों ने भी इसकी पुष्टि की है और सर्वसम्मति से स्वीकारा है की पिपरहवा ही वह स्तूप है जहां महात्माबुद्ध के भस्मावशेषों को मूलरूप से दबाया गया था।

पिपरहवा का स्तूप संभवतः तीन चरणों में बनाया गया था। प्रथम चरण महात्माबुद्ध के परिनिर्वाण के

समय बनाया गया था। इसमें केवल मिटटी का दूह बनाकर भस्मावशेषों को ढक दिया गया था। उनके द्वारा उद्धृत वचन हैं जिनमें उन्होंने अपनी अंतिम इच्छा में कहा कि जिस प्रकार दान-पात्र में चावल का दूह बनाया जाता है उसी प्रकार मेरी समाधि भी मिटटी से बनाना। अतःआस – पास से ढेरों मिटटी लेकर यह समाधि बनाई गयी थी।

दूसरा चरण अशोक के काल में संपन्न हुआ। जैसा पहले कहा गया है की उसने अनेकों स्तूप बनवाकर अस्थियों को वितरित किया था।चीन तक में महात्माबुद्ध के शारीरिक अवशेष रखे हुए हैं।

इस डूह की जो भराई अशोक के काल में की गयी उससे यह पांच मीटर और ऊंचा हो गया।

कुषाण काल में इसे फिर से बनाया गया जिससे इसकी ऊंचाई २० फुट तक पहुँच गयी। इसी काल में इसके परिसर को खूब विस्तार दिया गया और भिक्षुओं के आवास चारों दिशाओं में बनाये गए जिनके खंडहर आधुनिक उत्खनन में मिलते हैं।

ई.१८९८ में जैसे ही यह खबर बौद्ध मतावलम्बियों को मिली कि बिरादपुर के ज़मींदार विलियम क्लैक्सटन पेपे ने महात्माबुद्ध की अस्थियों को खोज निकाला है, उनमें सनसनी फ़ैल गयी। थाईलैंड का राजकुमार प्रिसदाँग श्रीलंका में बौद्ध भिक्षु-संघ का अध्यक्ष था। वह तुरंत पिपरहवा पहुँच गया और उसने मांग की कि बौद्धधर्म की अमानत उनको ही सौंप दी जानी चाहिए। पेपे यह उपलब्धि ब्रिटिश सरकार को देना चाहता था। प्रिस दांगसियाम / थाईलैंड के राजा रामापंचम का चचेरा भाई लगता था। उसने कहा कि यह अस्थिकल शसियाम के राजा के संरक्षण में दे दिए जाएँ। जब यह खबर अंग्रेजों के वाइसराय लार्ड कर्ज़न तक पहुंची तो उसने झट मान लिया।

कहा जाता है कि उस काल में बौद्ध धर्मानुयायी अंग्रेज सरकार से रुष्ट थे। गया जी सदियों से सनातन धर्म का तीर्थ रहा है और अंतिम पिंडदान यहीं होता है। यह इत्तेफ़ाक़ है कि महात्माबुद्ध को ज्ञान प्राप्ति जिस वृक्ष के नीचे हुई थी वह बोधिवृक्ष भी यहीं है। बौद्ध संघ इस पर अपना एकाधिकार चाहता था। जोकि संभव नहीं था। अतः उनके तुष्टिकरण के लिए यह एक अच्छी चाल होगी। इस विचार से यह अस्थि कलश सियाम के राजा रामापंचम को भेज दिए गए। सियाम यानि आधुनिक थाईलैंड को भी अपनी ओर मोड़ना अंग्रेजों के लिए बहुत जरूरी था। क्योंकि उस काल में थाईलैंड की वन्य संपदा पर अनेक यूरोपीय शक्तियों की आँखें गड़ी हुई थीं। इनमें प्रमुख थे फ्रांस , रूस और हॉलैंड। तीनों अंग्रेजों के दुश्मन थे। अतःरामापंचम को खुश करके अंग्रेजों ने यह मैदान भी जीत लिया। श्रीलंका का प्रधान भिक्षु प्रिसदांग स्वयं यह भेंट अपने भाई को देना चाहता था मगर अंग्रेजों ने उसको कतई उपेक्षित कर दिया।

रामापंचम ने तुरंत इन अवशेषों को दक्षिणपूर्वी देशों में वितरित कर दिया। अनेक उत्कृष्ट मंदिरों का निर्माण हुआ। बैंकॉक में स्वर्ण शिखर मंदिर ,रंगून(म्यांमार) में श्वेदगोन पैगोडा , मंडालय(म्यांमार)में अराकान पैगोडा , कोलम्बो(श्रीलंका) में दीपदुत्मारामा मंदिर ,कालुतारा(श्रीलंका) में वासका दुवि विहार और अनुराधापुर(श्रीलंका)में मारीचवातास्तूप।

बहुत से सोने चाँदी के बहुमूल्य अलंकरण कलकत्ता में बने सरकारी संग्रहालय में रखवा दिए गए। अनेकों की नक़ल असली सोने चांदी से बनवाकर बौद्धस्तूपों को भेंट की गयी। आज के समय में पिपरहवा में एक संग्रहालय बना हुआ है जिसमें उत्खनन में प्राप्त पुरातत्व के नमूने रखे हैं। पेपे द्वारा खोदे गए अलंकरणों के फोटोमात्र भारतीय दर्शनार्थियों के लिए रखे हैं।

विलियम क्लाक्स्टन पेपे के पौत्र नील पेपे के पास एक बड़ी मात्रा में बहुमूल्य रत्नों से बने फूल, स्वर्ण आभूषण ,मुक्ता , चांदी के अलंकरण आदि व्यक्तिगत खजाने की तरह सुरक्षित हैं।

वर्ष१९७१ में भारतीय पुरातत्व विभाग के एक अफसर ,श्रीकृष्ण मोहन श्रीवास्तव ने इस स्तूप की फिर से खुदाई करवाई। उनको यह विश्वास था कि शाक्य वंश की राजधानी कपिलवस्तु इसी स्थान पर थी। चीनी बौद्धयात्री ह्वेनसांग ने अपने विवरण में लिखा है कि स्तूप अधिकतर राज निवासों के भग्नावशेषों के ऊपर बनाये गए थे। इसी को निर्देश मानकर भारतीय पुरातत्व विभाग ने पिपरहवा की खुदाई करवाई और अंततोगत्वा वह सफल भी हुए।

यह सन१९७१ की बात है। श्रीवास्तवजी की टीम ने इस स्तूप का निरीक्षण किया और पेपे की खुदवाई सुरंग से भी कई फुट नीचे तक एक नई सुरंग खुदवाई। उनको दो छोटे छोटे कमरे मिले जिनमें बलुआ पत्थर से ढके दो-दो संदूक रखे थे। निकलवाने पर इनमें से बाक़ायदा जले हुए अस्थि अवशेष मिले जो महात्माबुद्ध के दाहसंस्कार को सत्यापित कर रहे थे। वैज्ञानिक विधि से इनका काल सुनिश्चित किया गया तो यह पांचवीं से चौथी सदी ईसा पूर्व के साबित हुए जो तथागत के मरण काल से मेल खाती तारीख थी।

श्रीवास्तव जी को इस उत्खननमें १३ मोहरें मिली हैं जिन पर यही कथा उकेरी हुई है की यह कपिलवस्तु के भिक्षुओं द्वारा चढ़ाई गईं थीं। यह कुषाण कालीन लिपि में लिखा गया है। अन्य बौद्ध मठों आदि के भग्नावशेष एवं

शीला मिश्रा
भोपाल (म.प्र.)

खुशियों का द्वार

"मेरी बात का कुछ जवाब तो दीजिए ..?"मीता ने अनुनय पूर्वक कहा पर आनंद सिर झुकाए बैठा रहा। "बोलो न ...कुछ तो बोलो ..?"इस बार मीता ने आनंद का मुँह ऊपर उठाते हुए कहा।

"देखो मीता ..!इस विषय में मुझे तुमसे कोई बात नहीं करनी है।"

"पर आज मैं सब कुछ जानकर रहूंँगी ,नहीं तो घर नहीं जाऊंँगी।" मीता ने प्यार में ठुनकते हुए कहा।

यह सुनकर आनंद ने मीता की तरफ बहुत बेचारगी के साथ देखा फिर धीरे से बोला "सच सुनना चाहती हो न तो सुनो.. , मैं शादी करना ही नहीं चाहता।" आनंद ने कुछ रोष के साथ कहा।

"पर क्यों..... एक तरफ कहते हो तुम मेरी दोस्त हो और फिर दोस्त को पूरी बात भी नहीं बताते हो। आज तो कारण जाने बिना मुझे घर जाना ही नहीं है।"आज मीता हर हाल में कारण जानना चाहती थी।

आनंद ने मीता की तरफ ध्यान से देखा फिर एक लंबी सांस लेकर कहा "चलो मैं तुम्हें बता ही देता हूंँ, तुम्हें पता है मेरे मम्मी-पापा एक साल के लिए जेल में रहे हैं ...!"

"जेल में...क्यों ....?"

"बस वही तो बात है जिसके कारण में शादी करना नहीं चाहता।"

"अब पहेली मत बुझाओ...भला जेल का शादी से क्या संबंध....?"

"बहुत गहरा संबंध है..." आनंद ने सिर नीचे झुकाए हुए कहा फिर कुछ देर बाद सिर ऊपर उठाकर मीता की ओर देखते हुए दर्द भरे स्वर में कहा -"बहुत कड़वी याद है पर मैं तुम्हें इसलिए बता रहा हूंँ ताकि तुम फिर कभी शादी के लिए जिद न करो.... तुम्हें पता है मेरे भाई की शादी आज से छह साल पहले हुई थी। अच्छा-खासा परिवार था। सब ठीक-ठाक चल रहा था। शादी के सात-आठ महीने होते-होते भाभी और भैया में बहुत लड़ाई होने लगी और एक दिन भाभी नाराज होकर अपने मायके चली गईं और मेरे मम्मी-पापा तथा भैया पर दहेज उत्पीड़न का आरोप लगा दिया। तुम्हें तो पता है उस समय कानून ऐसा था कि साल भर के अंदर अगर पत्नी मारपीट या इस तरह का कोई इल्जाम लगाए तो उसकी बात को बहुत गंभीरता से लिया जाता था, कोई सुनवाई नहीं होती थी बस शाम तक पुलिस आई , मेरे मम्मी -पापा को पकड़ कर ले गई , उस समय भैया फैक्ट्री में था तो उनके पास किसी ने खबर पहुंचा दी चूँकि उसके नाम का भी वारंट था तो उसी समय वह वहांँ से भाग गया और पता है पूरे दो महीने छिपते-छिपाते वह यहांँ-वहांँ घूमता रहा , दर-दर की ठोकरें खाता रहा। हमारे किसी परिचित के घर या किसी रिश्तेदार के यहाँ जा नहीं सकता था। एक हमारे पुराने पड़ोसी थे, जिनसे हमारे घरेलू संबंध अभी तक हैं , जिन्हें हम मामा कहते हैं , उनके यहांँ जाकर वह कुछ दिन छिपा रहा , उसकी नौकरी तो छूट ही गई थी । मैं उस समय कॉलेज में था, मेरा भी पढ़ाई से मन उचट गया था। मैं यहांँ -वहांँ सहायता के लिए भटकता रहता। कभी वकील के पास जाता कभी थाने के चक्कर लगाता तो कभी रिश्तेदारों के घर मदद माँगने जाता। मैं टूट गया था एकदम..... मीता.... मैं एकदम टूट गया था। वह तो वकील अच्छा था कि मेरे मम्मी-पापा छह महीने में ही छूटकर घर आ गए लेकिन...., वे दोनों पहले जैसे कहांँ रह पाए थे। इन छह महीने में ऐसा लगा मानो वे छह साल जी गए हों, दोनों के चेहरे पर बुढ़ापा नजर आने लगा था, बीमार दिखने लगे थे, एकदम असहाय-से कृषकाय हो गए थे। उनकी दयनीय अवस्था देखकर मेरा पढ़ाई में मन नहीं लगता था। उधर भैया का कहीं अता-पता नहीं था। हमारा पूरा घर बिखर गया था केवल भाभी के स्वभाव के कारण..... । जबकि तुम्हें बताऊँ.... मम्मी तो भाभी को सिर आँखों पर रखतीं थीं , काम के लिए तो उन्हें कभी कहा ही नही। सुबह की चाय से लेकर रात का खाना तक मम्मी स्वयं बनाती थीं पर पता नहीं क्या स्वभाव था भाभी का..., भैया से लड़ाई होती तो गुस्सा पूरे घर पर निकालतीं और रो-धोकर मायके चल देतीं , भैया ही मनाकर वापिस लाते लेकिन ऐसा लगता था कि शायद उनके मायके वाले उनको गलत सीख देकर ही भेजते क्योंकि धीरे-धीरे भैया डरे-सहमे से रहने लगे थे और तो और ....भाभी बात-बात पर पुलिस की धमकी भी देने लगीं थीं। उनके पिताजी राजनीति में सक्रिय थे तो रसूखदारों से व पुलिस में उनकी अच्छी पहचान थी । बस.....उसी का फायदा उठाया। " इतना कहकर आनंद ने लंबी साँस ली।

"फिर मामला सुलझा कैसे ? अभी भी अटका हुआ है क्या ?" मीता ने चिंतित स्वर में पूछा।

"नहीं ...,अब सब सुलझ गया है पर वे जिल्लत भरे दिन हमलोग कभी नहीं भूल सकते। मम्मी-पापा घर से बाहर नहीं निकलते थे , भैया की नौकरी छूट गई थी,

स्मृति चिन्ह आदि को एक संग्रहालय में सुरक्षित रखा गया है, जिसको कपिलवस्तु संग्रहालय कहा जाता है। जो अस्थियां एवं अन्य दाह अवशेष आदि मिले उनको दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में रखा गया है।

महात्माबुद्ध के आदेशानुसार उनकी देह का अंतिम संस्कार उनके पारिवारिक स्थल पर ही होना चाहिए। यही उस काल की प्रथा भी रही है। अतः कृष्णमोहन श्रीवास्तव की इस खोज में मिली मिटटी की मोहरों में कपिलवस्तु का नाम होने के कारण यह सत्यापित कर दिया है कि यही स्थान कपिलवस्तु है जो अनेक शताब्दियों के बाद पिपरहवा कहलाया। हालांकि इसके बहुत वर्ष पहले पिपरहवा से करीब१५-२० किलोमीटर दूर तिलौरकोट नामक स्थान को दुर्ग और महल होने के कारण कपिलवस्तु मान लिया गया था। उस समय की सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया। इसको सिद्ध करने के लिए और आज जिस स्थान को नक़्शे में कपिलवस्तु कहा जाता है वह नेपाल में स्थित है। भारतीय पुरातत्व विभाग को इस पर जोर देकर भूल सुधार करना चाहिए।

(मेरा ऐसा मानना है कि कदाचित यहां पीपल के वृक्ष लगाए गए होंगे या स्वतः उग आये होंगे जिनका सम्बन्ध महात्मा बुद्ध से है क्योंकि इन्हीं की छाँव में उनको बोधिसत्व की प्राप्ति हुई थी। अवध की भाषा में स्थानों के नाम का अक्सर ऐसा अपभ्रंश मिलता है जैसे लक्ष्मणपुरा का नाम लखनवा रह गया था,घिस घिसकर जिसे बाद में अंग्रेजों ने लक-नाउ Lucknow कर दिया क्योंकि कलकत्ता से दिल्ली के सिंहासन तक पहुँचाने में लखनऊ एक मात्र बाधा था। नवाब वाज़िद अली शाह ने अपना राज मुकुट उतारकर ,थाली में परोसकर ब्रिटिश रेज़िडेंट को भिजवाते ही यह बाधा ख़तम हो गयी। तभी से कहावत बनी ,यू गॉट इट ऑन ए प्लेट।)

भारत सरकार द्वारा इन अस्थियों की प्रदर्शनी की गयी जिसमें एक करोड़ श्रद्धालु दर्शनार्थ आये। इनका प्रदर्शन श्रीलंका में १९७८ में ; मंगोलिया१९९३ में ; सिंगापुर१९९४ में ; दक्षिणकोरिया१९९५ में ; थाईलैंड१९९६ में ; और श्रीलंका में पुनः२०१२ में हुआ।

इतना सब होने के बाद भी प्रश्न बना रहा कि आखिर सम्राट अशोक के द्वारा चढ़ाया गया बेश क़ीमती खजाना कहाँ गया। क्या सचमुच जो विलियम क्लैक्सटन पेपे ने पत्थर का संदूक निकाला था वह असली ,ज्यों का त्यों ,थाईलैंड भेज दिया गया था? ऐसा प्रमाण भी मिलता है कि उन स्वर्ण आभूषणों ,रत्नपुष्पों आदि की नक़ल करवाई गयी थी। तो फिर असली कहाँ गया ?

ई.२००४ में विलियम क्लैक्सटन पेपे के पौत्र नील पेपे ने बीबीसी के एक प्रवक्ता को बताया कि उनके पास यह खजाना सुरक्षित है। मगर वह असली है या नकली इसकी पहचान करानी पड़ेगी। तभी यूरोप के अनेक विद्वानों ने इस विषय पर शोध किया और सर्वसम्मति से निर्णय दिया कि नील पेपे के पास असली मौर्यकालीन खजाना और अस्थियाँ आदि हैं। साथ ही वह कलश भी है जिनमें यह वस्तुएं पाई गईं।

अब यह भारत सरकार का उत्तर दायित्व बनता है की वह उनको वापिस भारत में लायें और किसी संग्रहालय में नहीं वरन एक भव्य स्तूप में स्थापित करें। भारत में बौद्धकालीन कला अभी तक ज़िंदा है।

लघुकथा

बसन्त राघव
रायगढ़, छत्तीसगढ़

सास-बहू

रोजाना की तरह रीमा ने अपनी सास को फोन लगाया, हालचाल जाना। बातचीत के दौरान अपनी सासु माँ से उसने पड़ोसवाली चाची की तबीयत के बारे में भी पूछ लिया। इतना सुनते ही उसकी सासू माँ ने तथाकथित पड़ोसिन चाची की बहू की तारीफों के पुल बाँधने शुरू कर दिये।

कितनी अच्छी बहू है उसकी, बर्थ डे हो या सास-ससुर की एनिवर्सरी । केक काटना, पार्टी देना वह कभी नहीं भूलती, शहर के विधायक तक को बुलाना हो, वह कभी पीछे नहीं हटती,खर्च की परवाह किए बगैर ब्यूटी पार्लर वाली को घर में ही बुलाकर, अपने साथ अपनी सास का भी आइब्रो,फेशियल, हेयर कटिंग से लेकर बॉडी मसाज तक करवाती है,उसकी बहू। तभी तो उसकी सास बहत्तर की होकर भी पचास की लगती है। अपनी सास की फीलिंग्स को वह बखूबी समझती है, समय - समय पर अपनी सास को सरप्राइज देकर वह हमेशा खुश रखती है। उसकी सास ने व्यंग्य के लहजे में कहा 'बड़े भाग्य से मिलती है,उसकी जैसी बहू'।

रीमा ने अपनी सास की हां में हां मिलाते हुए जवाब दिया। बिल्कुल' सही बात है बड़े भाग्य से मिलती है उनकी जैसी बहू और बहू को हूबहू माँ जैसी सास।' इतना सुनते ही उसकी सास ने फोन काट दिया।

छविन्दर शर्मा
शिमला

श्रीखंड महादेव यात्रा: श्रद्धा, साहस और आत्मशुद्धि की रोमांचकारी गाथा

हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जनपद की ऊँची पर्वतीय श्रृंखलाओं में अवस्थित श्रीखंड महादेव यात्रा न केवल एक आध्यात्मिक अनुष्ठान है, बल्कि यह एक ऐसा रोमांचकारी अनुभव भी है जिसमें श्रद्धा और साहस की परीक्षा साथ-साथ होती है। समुद्र तल से लगभग 18,000 फीट की ऊंचाई पर स्थित यह स्थान मान्यता के अनुसार वही स्थल है, जहां स्वयं भगवान शंकर ने तपस्या की थी। यहाँ की यात्रा आज भी साधु-संतों और तपस्वियों की कठिन साधना का प्रतीक मानी जाती है, जो अब आम श्रद्धालुओं के लिए भी आध्यात्मिक उत्थान का माध्यम बन चुकी है।

अंधकारमय रात में आस्था की लौ

11 जुलाई 2025 की अर्धरात्रि। हम—तीन साथी: किशोरी लाल (बाॅबी), शेर सिंह और मैं—इस आध्यात्मिक यात्रा की ओर पहला कदम बढ़ाते हैं। कुल्लू जनपद के बड़ा गाँव से हमारी गाड़ी लगभग 60 किलोमीटर दूर बागी पुल के पार जांव गांव तक जाती है, जहाँ से पैदल यात्रा का वास्तविक आगाज़ होता है। बारिश की रुक-रुक कर होती झड़ी, काले बादलों की गरज और रात का सन्नाटा—सब कुछ मानो किसी देवीय परीक्षा की भूमिका रच रहे थे।

सिंहगाड़ से शुरुआत: पंजीकरण और परीक्षण की पहली कसौटी

पैदल यात्रा की औपचारिक शुरुआत सिंहगाड़ नामक स्थान से होती है। यहाँ कुल्लू प्रशासन द्वारा यात्रियों का पंजीकरण और चिकित्सा परीक्षण अनिवार्य किया गया है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि यात्री ऊंचाई पर उत्पन्न होने वाले शारीरिक दबाव को सहन करने में सक्षम हों।सुबह के 4:05 बजे। जब पूरी घाटी गहन नींद में थी, हमने 'बोल बम' के जयकारों के साथ अपने कदम श्रीखंड की ओर बढ़ा दिए। वर्षा लगातार हमारे सामान और आत्मबल दोनों की परीक्षा ले रही थी। पूरी तरह भीगे बैग, कपड़े और जूते—फिर भी मन की आस्था ने हार नहीं मानी।

थाचडू की छांव में सेवा और सहारा

लगभग 13 किलोमीटर की खड़ी चढ़ाई पार कर हम थाचडू पहुंचे। यहाँ सेवाभाव से संचालित लंगर ने हमें शारीरिक ऊर्जा और मानसिक शांति दी। गर्म चाय, भोजन और निःस्वार्थ सेवा की ऊष्मा ने यह विश्वास दिलाया कि आस्था की इस यात्रा में सेवा ही सबसे बड़ी साधना है।

काली घाटी की चुनौती और भीम द्वार का विश्राम

थाचडू से काली घाटी की चढ़ाई अत्यंत कठिन और जोखिमपूर्ण थी। बारिश और फिसलन ने रास्ता और अधिक दुष्कर बना दिया। कई बार फिसले, गिरे—पर रुके नहीं। अंततः भीम द्वार पहुँचे, जहाँ टेंट लेकर विश्राम किया। इसी पड़ाव पर हमारी भेंट उत्तर प्रदेश के बरेली से आए एक यात्री देवांश मिश्रा से हुई, जो अकेले थे। हमने उन्हें भी अपने दल में शामिल कर लिया।

रात्रि का दुस्साहस:

बर्फ, झरने और डर के बीच आस्था की लौगुंज रही थी ।रात्रि के लगभग 2:30 बजे, जब समूची घाटी अंधकार में डूबी थी, हम चारों ने श्रीखंड शिखर की ओर प्रस्थान किया। रास्ते में अखिलेश्वर नामक उफनता भयावह जल प्रपात आया, जिसकी गरजती धारा ने हमारी हिम्मत परखा और हम भी इस भीगी व कंपकंपी परीक्षा में खरे उतरे। हममें से कई श्रद्धालु यहीं से लौट गए, लेकिन हमारी आस्था हमें भीगते हुए, काँपते हुए उस पार ले गई।

पार्वती बाग, नैनसरोवर और शिखर के अंतिम चरण

जल्द ही हम पार्वती बाग पहुँचे, जहाँ फूलों की घाटी और बर्फीली हवाओं ने हमारा स्वागत किया। कुछ समय बाद नैनसरोवर पहुँचे, जहां के निर्मल जल में चेहरा धोते ही जैसे सारी थकान क्षणभर को मिट गई। अब हम शिखर के अत्यंत निकट थे।साँसों की लड़खड़ाहट, पत्थरों की कठिन पगडंडियाँ और हर कदम पर परीक्षा—लेकिन हर हर महादेव के जयकारों ने हमारे आत्मबल को जीवित रखा।

जैसे ही हमने श्रीखंड महादेव के शिखर पर कदम रखा, आसमान से हल्की बर्फबारी आरंभ हो गई। समूचा दृश्य मानो किसी दिव्य लोक का चित्र था। चारों ओर बर्फ से ढके पहाड़, शांति और श्रद्धा में डूबी घाटी, और हमारे हृदय में छलकता भाव—वह क्षण शब्दों से परे था। यह न केवल यात्रा का चरम था, बल्कि आत्मा का भी।

दर्शन के पश्चात् वापसी की यात्रा आरंभ हुई। अब हमारे कदम थके हुए थे, शरीर चूर था, साथियों की हालत भी नाजुक थी—किशोरी लाल को तेज सिरदर्द, शेर सिंह और देवांश भी घायल जैसे दिख रहे थे। फिर भी हम सब एक-दूसरे के सहारे धीरे-धीरे नीचे उतरते गए।

रात 9 बजे कुंशा पहुँचे और वहीं विश्राम किया। अगली सुबह पुनः यात्रा शुरू की और आखिरकार सिंघाड़ बेस कैंप पहुँचे।

प्राकृतिक वैभव और आत्मिक उजास: एक यात्रा, अनेक अनुभूतियाँ

पार्वती बाग में चरती भेड़-बकरियाँ, कंदराओं में छिपे उनके मेमने व भेड़ू ,वफादार श्वान, औषधीय पौधों की सुगंध, जलधाराओं का संगीत, और ऊँचे-ऊँचे पर्वतों की मौन भाषा—इन सबने हमारी आत्मा को छू लिया। यह नज़ारा हमें यह भी समझा गया कि प्रकृति का हर अंश भी ईश्वर की एक लीला है।श्रीखंड की यात्रा हर उस व्यक्ति के लिए है जो न केवल शारीरिक रूप से सक्षम हो, बल्कि मानसिक रूप से संकल्पशील और श्रद्धा में रचा-बसा हो। यह यात्रा जीवन का सार सिखाती है—कि हर कठिनाई के बाद एक शिखर होता है, और हर शिखर के पार एक दर्शन।

यह यात्रा वास्तव में एक आध्यात्मिक अग्निपरीक्षा है। केवल वही यात्री इस पवित्र शिखर तक पहुँच पाता है जो श्रद्धा, धैर्य और आत्मबल के साथ अपने संकल्प पर अडिग रहता है। यह यात्रा किसी पर्यटन स्थल की सैर नहीं, बल्कि शंकर भगवान के सान्निध्य की साधना है।श्रीखंड महादेव यात्रा निस्संदेह धरती पर स्वर्ग के उस द्वार की अनुभूति कराती है, जहाँ पहुँचकर मनुष्य स्वयं को प्रकृति, परमात्मा और अपनी आत्मा के सबसे निकट पाता है।

लघुकथा

चौहान संजय सिंह
(उप निरीक्षक)
,नैनोदइंदौर मध्य प्रदेश

दीपक और दीप

एक छोटे से गाँव शरदपुर में एक विद्यालय था — पुराना, साधारण, परंतु उसमें पढ़ाने वाले शिक्षक श्रीधर जी असाधारण थे। वे बच्चों को सिर्फ पाठ्यक्रम ही नहीं, जीवन के मूल्य भी सिखाते थे। अनुशासन, आत्मविश्वास और आत्मसम्मान उनके पाठों की आत्मा थे।

गाँव का एक बालक था — दीपक। वह पढ़ाई में औसत था, लेकिन उसकी आँखों में एक अजीब-सी चमक थी। वह सपने देखता था, लेकिन उन्हें सच करने का हौसला नहीं था। अक्सर उसके पिता उसे डाँटते — "कभी कुछ नहीं बनेगा तू! खेतों में ही रह जाएगा!"

एक दिन कक्षा में श्रीधर जी ने कहा, "बच्चों, हर कोई बड़ा बन सकता है — पर शर्त ये है कि तुम खुद पर विश्वास रखो और प्रतिदिन कुछ नया सीखो।"

दीपक ने डरते-डरते पूछा, "गुरुजी, अगर कोई बार-बार असफल हो तो भी क्या वो सफल हो सकता है?"

श्रीधर जी मुस्कराए। "बिलकुल, बेटा! असफलता तो सफलता की पाठशाला है। जो गिरने के बाद उठना सीख लेता है, वही असली विजेता होता है।"

उस दिन के बाद दीपक पूरी तरह बदल गया। वह रोज़ विद्यालय आता, प्रश्न पूछता, देर तक अभ्यास करता। उसके माता-पिता और गाँव वाले हैरान थे — "इसमें इतनी लगन कैसे आ गई?"

उत्तर एक ही था — श्रीधर जी।

समय बीता। दीपक ने माध्यमिक परीक्षा में जिले में प्रथम स्थान प्राप्त किया। पूरे गाँव ने उसका स्वागत किया। लेकिन दीपक सबसे पहले गया श्रीधर जी के पास। हाथ जोड़कर बोला:

" गुरुजी, आपने मुझे मेरे भीतर का दीप दिखाया। मैं अंधेरे में था, आपने रोशनी दी। आप मेरे जीवन के दीपक हैं।"

श्रीधर जी की आँखों में आँसू आ गए। उन्होंने कहा, "दीपक, मैं तो बस तेल भरता हूँ... रोशनी तो तुम्हीं हो।"

संदेश:

एक सच्चा शिक्षक सिर्फ पढ़ाता नहीं — वह आत्मविश्वास जगाता है, सपनों को पंख देता है, और जीवन को दिशा देता है।

लंबी कहानी

महेश शर्मा
धार मध्यप्रदेश – मो न ९३४०१९८९७६
ईमेल:mahesh.k111555@gmail.com

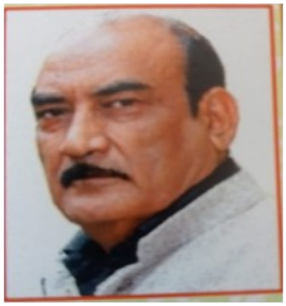

आखिर कब तक

क्या नैतिकता से रहने की सारी जवाबदारी स्त्रियों की है ? क्या सभ्यलगना शालीन लगना समाज के कायदे कानून का पालन करना और बंदिशोँ में रहनासिर्फ महिलाओं के लिए जरूरी है ? यदि महिलाएं नैतिकता का पालन नही करेगी ,पवित्रता से नहीं रहेगी तो समाज के बर्बाद होने के खतरे बढ जायेंगे ?और पुरुष ?
उसके पवित्र नही रहने या सही नहीं रहने से भी समाज को कोई फर्क नहीं पड़ेगा ? पुरुष अनैतिकता अपना सकता है . सामाजिक वर्जना लांघ सकता है . तो ऐसा क्यों ? किसने यह तय किया था?कहाँ लिखा है यह सब और किसने लिखा है ?

अपने ड्राइंग रूम में बैठी अनु यानी अनिका चौधरी के दिलो-दिमाग में सुनामी उठ रही थी पिछले 6-7 वर्षों से नियम संयम और धैर्य के साथ जीने वाली एक सुंदर सुशील बच्चे की माँ अनिका आज बगावत के द्वार खटखटा रही थी वह तो गनीमत थी सुदीप यहाँ नहीं था वरना आज सब कुछ क्लियर हो जाता . अनिका बेचैन थी अपने सारी शंकाओं का समाधान अपने सारे प्रश्नों का उत्तर जानने को और स्त्री जाति पर थोपे गए सारे बंधनो को तोड़ देने के लिये .

इसी विचलन में उठी अनिका और उसने सुदीप की टेबल के ड्राअर खंगाल डालें अलमारी खोलकर उसकी फाइलों किताबों और अन्य सामग्रियों की तलाशी ले डाली . कुछ आपत्तिजनक चीजें जो मिली उन्हें अपने कब्जे में किया . उसका अगला निशाना था लैपटॉप जो संयोग से सुदीप घर ही छोड़ गया था लैपटॉप ओपन कर अनिका उसमे कुछ खोजने लगी लेकिन उसे निराशा हाथ लगी सुदीप ने अपनी सारी डिटेल फाइल्स लॉक कर रखी थी टेबल पर हाथ ठोककर कुछ कर गुजरने को बेताब थी अनिका तभी उसकी नजर सुदीप की टेबल के ड्रावर मे रखे सिगरेट केस पर पडी .

हाँ यह भी क्यों नहीं ?यह भी क्यों सिर्फ मर्दों के लिए है ? क्या मैं स्मोकिंग नहीं कर सकती ? , अनिका ने तत्काल सिगरेट केस खोला एक सिगरेट निकाल कर मुंह से लगाई लाइटर से जलाकर धुआं छोड़ना शुरू किया , और अपनी उद्विग्नता पर नियंत्रण पाने की कोशिश करने लगी . सुदीप के टेबल और अलमारी में से मिले कागजोंमें उसे एक कागज मिला जिस पर एक गुलाब का फूल का चित्र था और उसके निचे लिखा था टू दीप विद लव . कागज का ज्यादा कुछ महत्व नही था पिछले कई दिनो से झेल रही उपेक्षा और अन्याय के आगे .लेकिन यह कागज उसके अनुमानों आशंकाओं के गहरे काले रास्ते पर कुछ रोशनी डालता पत्थर तो लग ही रहा था . जब उसने पिछले दो चार दिन की सारी बातें सोचना शुरु किया तो अपने को ना रोक पाई अनिका उसने अपनी डायरी खोली जिसमे आज सुबह ही उसने नम्बर नोट किया था ,,आल इन वन डिटेक्टीव एजेंसी ,,का .

सुबह एक बार अनिका एजेंसी से बात कर चुकी थी अपने पति की जासूसी के लिए लेकिन फिर उसकी भारतीय मानसिकता आदर्श वादिता ने उसे रोका था किंतु अब काफी सोचने के बाद इतने विचलित होने के बाद वह निर्णायक मोड़ पर पहुंच चुकी थी .

हेलो मिस्टर गुप्ता मुझे आपकी सारी बातें मंजूर है आप ये जानकारी नोट कीजिए और आज से अभी से ही खोजबीन शुरू कीजिए मुझे कल तक रिपोर्ट चाहिए मेरे पति का नाम सुदीप चौधरी है . जो महिला है उसका नाम मनीषा सप्रे है दोनो जयपुर की किसी स्टार होटल में हो सकते हैं कंपनी का ऑफिस पिंक स्क्वायर रोड पर है जहाँ मीटिंग प्रस्तावित है दो-तीन दिन उन्हें वहां रहना है . ये लोग यहाँ से कल निकल चुके हैँ. क्या मुझे कल सुबह तक कुछ रिपोर्ट मिलेगी ?

जी बिल्कुल हम आपको कुछ जानकारी कल सुबह तक और बाकि डीटेल्स कल शाम तक दे सकेंगे . आप कंपनी का नाम और बता दीजिए और दोनों के फोटो व्हाट्सएप कर दीजिए

जी नोट कीजिए कंपनी का नाम हेल्थ एण्ड वेल्थ कंपनी है दोनो के फोटो मै सेंड कर रही हूँ और मैं आपकी फीस का कुछ एडवांस आपके खाते में ट्रांसफर कर रही हूँ . .

अनिका ने मोबाइल बंद किया अचानक उसे पता चला उसकी उंगली में जलती सिगरेट फंसी है उसने फिर सिगरेट का कश लिया गहरा कश लेकर धुंएको बाहर छोडते हुए उसे बहुत संतुष्टी मिल रही थी . यह सुख था वर्जनाएँ तोड़ने का ,नैतिकता की बांधी गई सीमाओं को

लांघने का और अपने अरुचिकर पति के प्रति आक्रोशपूर्ण विरोध जताने का .

कमरे में फैलते सिगरेट के धुए को पार करते अनिका की विचार यात्रा पहुंच गई आज से सात साल पहले अपने घर . हाँ उस घर जहाँ उसके माता-पिता थे उसके भाई बहन थे और वह बीएससी फाइनल के आखरी साल की एग्जाम दे चुकी थी .

आज आखिरी दिन था एग्जाम का उसके सभी फ्रेंड्स ने तय किया था अगले दिन रविवार को पिकनिक पर जाने का नगर से 20 किलोमीटर दूर एक पिकनिक स्पॉट पर सभी सहेलियों के साथ कुछ लडके भी जा रहे थे जिसमे नितीश भी था . तुझे चलना ही है अनु , बडे प्यार और मनुहार से कहा था नितीश ने . नितीश जो पिछले साल से ही उसके सपनो मे आने लगा था . जिसकी बाते और यादे अक्सर अनिका के दिल की धडकन के साथ उसके दिमाग मे भी बनी रहती थी .

घर आकर अनिका ने झूमते हुए माँ को पेपर की जानकारी दी और अगले दिन पिकनिक पर जाने की परमिशन भी मांग ली . उसे माँ से कोई संकोच नहीं था पूरा अधिकार समझती थी . हाँ पापा से जरूर कुछ अनुशासित रह कर बात करती थी . माँ ने पूछा भी कौन-कौन जा रहे हैं ?

मेरी सहेलियाँ माँ और कौन ?

और कोई सहेला तो नहीं जा रहा ? माँ ने मुस्कुराते हुए रहस्यमई अंदाज से पूछा ओ माँ तुम भी ना . हाँ जा रहा है वह भी . क्या करूं जाऊं या ना जाऊं ?

जाओ मुझे तुम पर पूरा विश्वास है . दोस्ती करो सपने भी देखो प्रयास भी करो उसके पूरे करने के लिए . लेकिन तैयार भी रहो सपने टूटे तो भी जीने के लिए . अनिका ने गौर से माँ की आँखों में देखा , माँ बातोँ बातोँ में बहुत कुछ कह डालती थी .

शाम को पापा को अपनी एग्जाम की जानकारी देती हुई अनिका माँ पापा और छोटी बहन वीनू के साथ बैठे भविष्य की चर्चा करने लगी वह मास्टर डिग्री करना चाहती थी कुछ बेहतर जॉब करना चाहती थी लेकिन पापा का स्पष्ट कहना था यह सब कुछ शादी के बाद | एक साल में तुम्हारे लिए उचित पात्र ढूंढ कर शादी कर देंगे उसके बाद जैसा तुम चाहो जैसे तुम्हारा पति चाहे वो सब करना .

पापा के सामने अनिका कोई बहस या तर्क नहीं रखती थी लेकिन उसने दूसरे दिन माँ को स्पष्ट कर दिया माँ मैं इतनी जल्दी शादी नहीं करूंगी . माँ ने कुछ नही कहा . बात आई गई .

अगले दो-तीन महीने जो छुट्टीयोँ के थे अनिका कुछ कंप्यूटर संबंधी कोर्स कर रही थी नीतीश से उसकी मित्रता गहरी होती जा रही थी . अनिका के मन में नितीश के प्यार के बीज पुष्पित पल्लवित हो रहे थे . परिपक्वता की ओर बढ़ता उसका दिमाग इस प्यार के नन्हे पौधे को विवाह के सशक्त विकसीत वृक्ष में बदल जाने की इच्छा रखने लगा था . छुट्टियां पूरी होते ही उसने कंप्यूटर साईंस मे एडमिशन लिया . लेकिन पापा की इस चेतावनी के साथ कि कोई अच्छा सा रिश्ता मिलते ही शादी कर डालेंगे और उसमें यह पढ़ाई का कोई व्यवधान बर्दाश्त नहीं करेंगे . अनिका भगवान से प्रार्थना करते हुए यह इच्छा व्यक्त करती रही कि कंप्यूटर साइंस की डिग्री मिल जाए और काश नितीश जैसा जीवन साथी मिल जाए बस और कुछ नही चाहिये .

लेकिन ईश्वर सारी इच्छाएं किसी की भी पूरी नहीं करता . अनिका के पापा की खोजबीन प्रारंभ हो गई थी सुदूर पूना में रहने वाले बड़े भाई के ससुराल पक्ष के परिवार में एक लड़का खोज लिया गया . आईटी में डिग्री धारी एक प्राइवेट कंपनी में जॉब अभी-अभी लगा था . उन्हें भी पढ़ी-लिखी लड़की की तलाश थी दहेज की कोई विशेष मांग नहीं थी परिवार के बारे में सारी जानकारियां निकाल ली गई थी जिसके अनुसार सब कुछ अच्छा था . एक बात जरूरथी जिसे छोटी बहन ने और माँ ने गौर किया था लड़का सुंदर नही कहा जा सकता था थोड़ा थुलथूल और सांवला था इतना खूबसूरत नहीं जितनी अनिका थी .छोटी बहन पूरे विरोध मेंतथामाँ असमंजस में थी लेकिन कठोर स्वभाव के पापा के आगे सभी नतमस्तक थे .

कॉलेज से अपनी क्लास करके घर आई अनिका को छोटी बहन ने संभावित खतरे के संकेत दे दिए थे . अनिका चौकी अभी वह बिल्कुल तैयार नहीं थी अपनी शादी के लिए . . पापा ऑफिस गये हुए थे दिन में माँ से झूम गई सारे ताने उलहाने शिकवे शिकायत धमकी चेतावनी दे डाली .

माँ लगातार उसे मनाती समझाती रही उसके लाड लड़ाती रही और अंत मैँ रो पड़ी .

बेटी तू जानती है पापा को क्या बीमारी है ? और मुझे क्या बिमारी है ?

माँ वे हार्ट पेशेंट है पर इसमैँ चिंता की क्या बात है दुनिया में बहुत से लोग होते हैं .

तू जानती है तेरे पापा रात को बड़ी मुश्किल से सो पाते हैं उनकी और मेरी रोजाना की बातचीत में अगले साल आने वाला उनका रिटायरमेंट और तुम दोनों की शादी बस यही कुछ होता है क्या तुम अपने पापा की इन चिंताओं को अपनी चिंता नहीं समझती क्या तुम उन्हें कुछ सुकून दे सकती हो और माँ फिर सिसकने लगी .

23 वें वर्ष में प्रवेश करती अनिका माँ की ऐसी हालत देख कर सब कुछ भूल गई अपना अल्हड़पन अपनी ख्वाहिश अपना सपना और हाँ अपना नीतीश भी .उसने सरेंडर कर दिया माँ के सामने सारे निर्णय का अधिकार माँ और पापा को सौंप दिया . यही नहीं शाम को जब पापा ऑफिस से आए गरम गरम चाय पिलाते हुए अनिका ने बहुत सारी बातें कर डाली और बातों बातों में बता भी दिया कि दुनिया के हर पिता

को अपने बच्चों के बारे में हर निर्णय लेने का पूरा पूरा अधिकार है . और हर बच्चे को माता पिता के निर्णय को सहर्ष मानना चाहिए . पापा चौंके , समझ गए . क्या अनिका जानती है ,क्या होने वाला है ? अनिका की बातोँ से प्राप्त होने वाली खुशी और संतुष्टि उनकी आंखों के रास्ते आंसुओँ के रुप मे बह निकली उन्होंने अनिका को गले से लगा लिया तू मेरा सबसे प्यारा सबसे लाडला बेटा है मुझे तुझ पर पूरा विश्वास है .

पापा के गले से लगी अनिका कुछ ना बोल पाई .

तो मैं आगे बात चलाऊँ बेटा ? पापा ने अनिका की आंखों में झाँका , अनिका ने पापा के सीने में अपना मुंह छुपाते हुए मौन स्वीकृति दे डाली .

रात को सोते समय छोटी बहन ने उलाहना दिया दीदी आपने उस लड़के के बारे में तो कुछ पूछना था .

नही शन्नु अब मैं कुछ नहीं पूछूंगी माँ पापा जो भी करेंगे स्वीकार करूंगी और हां आने वाली हर परिस्थिति को अपने अनुकूल बना कर तुझे बता दूंगी कि हम हर परिस्थिति में खुश रह सकते हैँ .

और इस तरह एक मासूम सी बहुत सुंदर सी लड़की जो परिपक्व होते होते एक जवाबदेह शादीशुदा महिला के रूप में बदल कर सुदीप चौधरी के घर आ गई .

30 वर्षीय सुदीप सांवलापन लिए हुए चेहरा कुछ भरा हुआ कुछ थुलथुल शरीर का स्वामी हेल्थ एंड वेल्थ कंपनी मे अधिकारी पद पर कार्यरत सुंदर सुशील अनिका को पाकर खुश हो गया सर आँखों पर बिठाया उसने अनिका को साल पुरा होते होते अनिका अपने पति के पास रहने बेंगलुरु आ चुकी थी . अनिका और सुदीप दोनों की आदतों में स्वभाव में बहुत से अंतर थे लेकिन जैसा कि होता है शादी के प्रथम दो-तीन वर्षों में तो नवयुगल संकोच रहते हैं एक दूसरे को समझने के प्रयास में लगे रहते हैं और अपनी उम्र के सबसे रोमांटिक दौर में होने के कारण बजाय एक-दूसरे की कमियों का विश्लेषण करने के एक दूसरे में डूब जाना चाहते हैं जीवन को मस्ती भरा बनाना चाहते हैं वही हाल दोनों का था यद्यपि गाहे-बगाहे अनिका को अपने सपने याद आ जाते थे . उसने चाहा था नितिश जैसा खूबसूरत सुंदर प्यारा सा जीवनसाथी हो जिस पर वो सौ सौ बार निहाल हो लेकिन नितिश शायद प्रेमी था और सुदीप एक भारतिय पति .

अनिका अक्सर सुबह जल्दी उठती थी अपने बगल में सोए सुदीप के सामान्य से चेहरे पर गौर करते हुए उसे कुछ अरुचिकर लगता बनियान से बाहर झांकती उसकी थुलथुल देह तो उसकी नजरों में अटकती लेकिन वह तत्काल ही इन बातों को नजरअंदाज करती अपने पति परमेश्वर के स्नेह भरे व्यवहार पर उसकी चिंता करने वाले स्वभाव पर निहाल हो जाती उसके गालों पर प्रेम सुमन अंकित करते हुए उठ कर अपनी दिनचर्या में लग जाती . हर रविवार दोनों पिकनिक पर जाते मस्ती करते यदा-कदा बाजार शॉपिंग पर भी जाते . सुदीप अनिकाको शॉपिंग मुक्त भाव से करने देता उसे कभी ना रोकता लेकिन जब उस दिन अनिका ने एक शोरूम से अपने लिए टॉप और जींस का सिलेक्शन किया उसने प्रथम बार पाया कि सुदीप के चेहरे पर कुछ असहमति के भाव प्रकट हुए "अनिका आई थिंक जींस एंड टॉप वील नॉट ओके फार यू नाउ ." . " इसकी बजाय तुम एक अच्छा सा सलवार सुट लो और सुनो तुम उसमें ज्यादा खूबसूरत लगती हो ." अनिका ने मुस्कुराते हुए सुदीप का प्रस्ताव माना सुदीप ने उसे एक की बजाय दो सूट दिलाए लेकिन अनिका ने महसूस किया कि उसे दो सूट लेने की खुशी से कुछ ज्यादा मलाल जींस टॉप न ले पाने का हो रहा था और जींस टॉप न ले पाने से ज्यादा स्तब्ध थी अनिका सुदीप के रोके जाने को लेकर.

सुदीप इतना पुरातन पंथी तो नहीं था आधुनिक विचारों वाला था खुद भी शानदार कपड़े पहनता पार्टियों में जाता , फिर जींस टॉप को लेकर उसका रवैया अनिका कि समझ के बाहर था . उसे याद आया पिछले साल जब वे लोग घूमने फिरने मनाली गए थे बर्फीली पहाड़ियों पर पति के साथ घूमते मस्ती करते अनिका की नजर सुदीप पर अटकी जो मुँह मे सिगरेट दबाये स्टाइल के साथ छल्ले बनाते हुए धुँआ उडा रहा था . अनिका ने भी अपने आप को आधुनिका सिद्ध करने के लिये मस्ती मस्ती में सुदीप के हाथों से सिगरेट ली और मुंह से लगा ली एक धुँए का गोला छोड़ते हुए नशीले अंदाज में सुदीप की ओर देखा .

वह सहम गई सुदीप का चेहरा कुछ बिगड़ रहा था . वह भी सहम गई थी . .

ओके डियर बट इट्स नॉट गुड फॉर मैरिड लेडी. जानती हो स्मोकिंग का आने वाले बच्चे पर क्या प्रभाव पड़ता है अनिका कुछ जवाब नहीं दे पाई उसने तत्काल सिगरेट मुंह से निकाल कर सुदीप को थमा दी अनिका को सिगरेट न पीने की सलाह देने का बुरा नहीं लग रहा था लेकिन पता नहीँ क्योँ उसे पिछल दिनों घटित होने वाली बहुत सी बातें याद आने लगी जब सुदीप बिना उसके मूड की परवाह किये उसे बहुत सी बातों में रोक देता था .

अनिका को स्पष्ट लगाने लगा था कि सुदीप उसे कोई भी स्वतंत्र निर्णय लेने से रोकता था किसी भी बहाने उसे टोकते हुए उसके अनुसार कार्य करने को विवश करता था .शादी के बाद 1 साल और पढ़ाई कर डिग्री ले चुकी अनिका के मन में भी जॉब करने की इच्छा जागने लगी थी .तभी कुछ संकेत मिलने लगे थे नए मेहमान के आने के उसने सुदीप से कहा भी कि मैं भी जॉब करना चाहती हूँ . और सुदीप ने बड़े प्यार से बड़ी चतुराई से उसे समझाते हुए नए आने वाले मेहमान की जवाबदारी पूर्ण होने तक रुक जाने को कहा. बात जायज थी यदि अनिका अभी जॉब शुरु करती तो उसे बीच में ब्रेक करना पडता उसने अपने मन को दिलासा दिया अब वह दिन के सुबह शाम दो-दो घंटे घर के कामों में लग कर दोपहर भर फ्री रहती अपने शौक के अनुसार कुछ-कुछ साहित्य मे मन लगा रही थी कुछ टीवी ,मोबाइल मे समय तेजी से कट रहा था नया

आ चुका था . लेकिन उसने अगले 2 साल तक अनिका को स्वतंत्र या जवाबदारी से मुक्त नहीं रहने दिया और सुदीप ने भी बातों बातों में उलझाकर बड़े प्यार से उसे अपने बच्चे के डेवलपमेंट को लेकर कम से कम 5 साल तक उसे माँ का सानिध्य कितना आवश्यक है यह समझाते हुए उसके जॉब की इच्छा को दबाते रहने के प्रयास जारी रखे बच्चे के लालन-पालन में घर के, बढ़ते काम में और सुदीप के स्वभाव में धीरे-धीरे आते परिवर्तन और उसके प्रति ध्यान न देने की प्रवृत्ति ने अनिका को भी कुछ कुछ स्वयं के प्रति लापरवाह सा बना दिया था .

यद्यपि वह यदा-कदा आने वाले इन विचारों को त्याग कर गृहस्थी में मन लगाने की कोशिश करती और सुदीप के प्रति अपनी भावनाओं को जरा भी कमजोर या नकारात्मक होने से रोकने की कोशिश करती थी . माता पिता द्वारा दिए गए संस्कार भारतीय संस्कृति और परंपराओं के प्रति उसका झुकाव उसे बाध्य भी करता था कि वह पति की सभी बातों को शिरोधार्य करें उसको खुश रखने की कोशिश करें . वह एक पढी लिखी चतुर समझदार लडकी भी तो थी उसे धीरे धीरे समझ आने लगा कि सुदीप उसे पूरी तरह से अपने नियंत्रण में रखते हुए घर कि चारदीवारी तक ही सीमित रखना चाहता है अनिका को धीरे धीरे सारे पिछले अवसर याद आने लगे जब सुदीप ने उसको अनावश्यक रोका टोका .सुदीप के ऑफिस की होने वाली पार्टियों में कभी भी उसे शामिल नहीं किया गया . दोस्तों के यहाँ कई बार देर रात तक रुकना खा पीकर आना भी अब अनिका को संदेहास्पद लगने लगा था . मोनू 4 साल का हो चुका था नर्सरी क्लास जाने लग गया था अनिका के मन में अब जॉब करने की इच्छा बलवती हो चुकी थी उसके मन में विचार आ चुका था कि यदि अब भी जॉब नहीं करेगी तो फिर कब करेगी सुदीप से बात की . घर में एक आया का इंतजाम किया गया 2--3 प्राइवेट कंपनियों में आवेदन दे डाला

अनिका ने महसूस किया कि उसके जॉब के प्रति लगाव से सुदीप बहुत खुश नहीं था अनिका के निर्णय को उसने हंसते-हंसते तो नहीं लिया लेकिन हां वह विरोध भी नहीं कर पाया इतना जरुर सुदीप ने कह डाला कि अनिका अपने शोक के लिये भले कुछ दिन कोई जॉब कर ले लेकिन हमे कोई आर्थिक कारण नही बनता है इस जॉब के लिये .और अंततः अनिका एक प्राइवेट कंपनी में जॉब प्रारंभ कर चुकी थी .

इस जॉब कि उसे बहुत कीमत भी चुकाना थी सुबह जल्दी उठकर मोनू का नाश्ता टिफिन तैयार कर उसे स्कूल भेजना फिर सुबह का नाश्ता बनाना और फिर पति का ,और उसका टिफिन तैयार करना . दस बजते बजते दोनों ऑफिस के लिए निकल जाते . दोनों के ऑफिस विपरीत दिशा में थे दोपहर में दो बजे मोनू वापस आता तब तक आया आ चुकी होती जो शाम छः बजे तक मोनू को संभालती जब तकअनिका वापस घर नहीं पहुंचती इस तरह जीवन मे व्यस्तता बढ़ चुकी थी. कुछ दिन तक तो अनिका नौकरी और घर का काम संभालती रही लेकिन कब तक एसा चल पाता घरेलु कामो में अनिका को सुदीप की तरफ से कोई सहयोग नहीं था बल्कि उसकी अफसरशाही बढ रही थी अनिका की व्यस्तता भरी दिंनचर्या को प्रत्यक्ष देख्ते हुए भी .

सुदीप ने कभी यह नहीं चाहा कि घर के काम के लिए कोई कामवाली बाई रख ली जाए अंततः उसने पड़ोस वाली गुप्ता आंटी से बात करके एक कामवाली बाई को दिनभर के लिए कर लिया और रात को सुदीप को बता भी दिया .

सुदीप को जरा भी अच्छा नहीं लगा . यही तो मुसीबत है तुम औरतों की घर का काम पूरा कर नहीं पाती नौकरी की बड़ी ख्वाइश होती है और आखरी में पति और बच्चों को नौकरानी के भरोसे छोड़ कर मौज करती है .

बहुत तकलीफ हुई अनिका को यह बातें सुनकर आखिर उसने क्या नई बात कह डाली थी जो जमाने में हो रहा है वही तो उसने कहा था अब तो हर मध्यम वर्ग के कर्मचारी अधिकारी के घर में कामवाली बाई होती है सुदीप का कहना था मुझे कामवाली बाई से तकलीफ नहीं लेकिन मैं उसके हाथ का खाना नहीं खा सकता अनिका ने यह सुना , तय किया और सुदीप को विश्वास दिलाया कि उसका खाना वह स्वयं ही बनाएगी कामवाली बाई बाकी सारा घर का काम देख लेगी कुछ सहुलियत मिलेगी अनिका ने सोचा.

कामवाली बाई के कारण घर का वर्क लोड जरूर कम हुआ था लेकिन मोनु को तैयार करके स्कूल भेजना पति का खाना नाश्ता बनाना और फिर खुद जल्दी-जल्दी ऑफिस पहुंचना , अनिका एक मशीन बन चुकी थी . पारिवारिक सुख की सारी कल्पनाएं हवा हो रही थी . कई बार आफीस जाने मे देर हो जाती तो बहुत शर्मिंदा होती अनिका अपने बॉस से सॉरी कहती भला हो बॉस का जो चेहरे पर कभी शिकन नही लाता था .

क्या इसके पीछे भी कोई कारण था अनिका सोचती वह तुलना करती सुदीप का और अपने बास राय साहब का वह तुलना करती बास के स्वभाव ,योग्यता और सौंदर्य का अपने पति सुदीप से लगे हाथोँ वह सुदीप से खुद की भी तुलना करने लगती .

किस बात का घमंड है इस आदमी को क्या वह मुझसे ज्यादा शिक्षित है ज्यादा बुद्धीमान या सुंदर है बिल्कुल भी तो नही हाँ उसकी सेलेरी शायद बहुत अछी है और इन सब से बडी बात वो पति है वो पुरुष है .शायद सबसे ज्यादा घमंड की बात बस यही है .लेकिन उसके पुरुष होने में या उसके पति होने में उसका क्या योगदान ?

अनिका कभी समझ नहि पाई अपने पति को , जिसके लिये उसने अपने सारे सुनहरे सपने तोड दिये थे एक पतिव्रता स्त्री के रुप मे पिछले सात – आठ साल बिता दिये और अभी तक वो अपने पति में अपना अधिकार खोज रही है , अपनत्व खोज रही है .

अनिका जितना सोचती उतना ही सुदीप उसे दूर का एक अंजान आदमी लगने लगता और इससे ठीक उलट उसका बास ना जाने क्यो उसे आत्मिय लगता उसे लगता कि उसका बास उसकी योग्यता समझता है उसकी कदर करता है उसकी परेशानिया समझता है उसे हेल्प करने को तत्पर रहता है अनिका जब भी कोइ बात कहती बास का पुरा ध्यान उसके चेहरे पर उसकी बोली जाने वाले बात पर फोकस हो जाता था

अनिका नादान नही थी . भोली भी नही थी . बास लोगो के लुभावने हथकंडे की ढेरो कहानियाँ उसने सुन रखी थी अपनी कुछ सहेलियो के हश्र भी उसने देखे थे जो बास की लुभावनी बातों मे आकर या कुछ लोभ लालच में आकर अपना सब कुछ लुटा बैठी थी .

यही सब सोच कर वो सावधान भी थी कहीं किसी मोहवश किसी आकर्षण में कोई गलत कदम ना उठ जाये .

लेकिन मनुष्य को जब अपनी आँखों के सामने किसी बात के दोनो पहलु दिखने लगते हैं सही और गलत का आकलन होने लगता है तो उसकी बदलती भावनाओ को कोई नही रोक पाता .

अनिका ने कोशीश की सुदीप को ये अहसास दिलाने की कि कुछ गलत हो रहा है कुछ अधुरा सा है जो हमें तोड रहा है . प्लीज रुको इसे देखो लेकिन सुदीप किसी दुसरी ही दुनिया में मगन था उसे मंजूर नही था कि रुक कर देखे उसकी ग्रहस्थी किस दिशा में जा रही है .

ऐसे में दुनिया के किसी भी स्त्री या पुरुष को जो पति पत्नि के रुप में है आपसी अलगाव या अरुची का एक ही कारण महसूस होने लगता है कि कहीं मेरा जीवन साथी मेरे अलावा किसी और के नेहबंधन मे तो नही बंध रहा है.

तभी एक दिन एक घटना ऐसी हुई जिसने अनिका को सुदीप का परिवार के प्रति लगाव और जिम्मेदारी की भावना से शुन्य होने का अहसास कराया .आफीस में काम करते हुए अचानक मोनु के स्कूल से फोन आया मोनु को उल्टीयाँ हो रही थी इसलिये उसे तत्काल स्कूल से घर ले जाये अनिका ने तत्काल सुदीप को फोन लगाया . पता चला सुदीप किसी जरुरी मिटींग मे बीजी था उसकी बात उसकी सहायक मनिषा से हुई उसने भी दो घंटे तक सुदीप से बात होने मे असमर्थता बताई बदहवास रुआंसी सी अनिका जब बास के कमरे में पहुंची तो रो पडी बास ने तत्काल सारी बातें जानकर ना सिर्फ उसे तत्काल छुट्टी दी बल्की खुद साथ जाकर उसके स्कूल से मोनु को लिया ,उसे डाक्टर को दिखाया और अनिका के ना नुकुर करते रहने के बावजूद उसे घर छोडा .

एक औरत को सबसे ज्यादा प्रभावित करता है वो व्यक्ती जो उसके बच्चों को प्यार दे महत्व दे .उसकी चिंता करे अनिका निहाल हो गई थी बास के व्यवहार से . उस रात घर मे बहुत कोहराम हुआ पति पत्नी में . सुदीप ने जहाँ आफीस की व्यस्तता को वर्क लोड को बहाना बनाया तो अनिका ने अपने बास की सराहना में सुदीप को लज्जित करने का जरा भी अवसर नही छोडा .

पति की आलोचना के बावजूद , पति से विरक्ति के बावजूद अनिका सावधान थी . कोई कदम गलत ना पड जाये इसका उसे भान था . तभी तो उसने बास के सहयोगी स्वभाव के बावजूद बास के साथ कहीं टूर पर जाने से साफ इंकार किया . बास द्वारा आयोजित किसी भी पार्टी मे जाने से परहेज किया बल्कि लंच टाइम मे एक दो बार बास द्वारा उसे साथ मे लंच लेने के प्रस्ताव को भी बडी विनम्रता से अस्वीकार कर दिया , सिर्फ इस भय से कि यही वे छोटे छोटे बिंदु हैं जहा से फिसलन शुरु होती है .

लेकिन मनुष्य के जीवन में कई बार ऐसा होता है कि वो खुद तो बहुत सम्हल कर चलता है पर परिस्थितियां उसे निचे गिराने में उसकी धारणाएं बदलने में बहुत अहम भुमिका निभाती है ऐसे ही किसी दिन अनिका आफीस काम से कुछ फ्री हुइ थी , लंच टाइम हो रहा था . अनिका किसी काम से बास के रूम में जा रही थी तभी बास भी रेस्ट रूम में लंच के हिसाब से जा रहे थे उन्होने अनिका को देखा और अपने साथ लंच का आफर किया अनिका ने इंकार किया , लेकिन बास ने फिर आग्रह किया तो पेशोपेश में पडी अनिका एक ताजा झूठ बोल बैठी सर आज उन्होने बुलाया है लंच टाईम में . मै उनके साथ लुंगी लंच , आपके साथ फिर कभी .

ओके ओ के फिर में नही रोकुंगा . बास ने सहर्ष अनिका को फ्री किया .

अब झूठ बोलकर फंसी अनिका मजबूरी में सुदीप के ओफीस की और चल दी जो कुछ दूर अवश्यथा , लेकिन जाया जा सकता था . उसका मन भी नही था कहीं भी कुछ खा सकती थी अनिका लेकिन आज उसे भी यह विचार आ ही गया कि सुदीप के और उसके आपसी खटास को कुछ कम करने के प्रयास किये जाये .और वो अपने स्कूटर से सुदीप के आफीस पहुंच गई .

वहाँ भी आफेस स्टाफ अपने अपने लंच में लगा था . सीधे पति के कमरे मे दाखिल हुई अनिका स्तब्ध रह गई जब उसने आफीस रूम में सुदीप और उसकी सेक्रेटरी को एक साथ लंच करते देखा ना सिर्फ लंच करते बल्कि बहुत ही बेतकल्लुफ़ी से बैठे एक दुसरे का टिफीन मिक्स कर खाना खाते हुए . ऐसे मैँ ना तो वो कुछ कह पाई ना ही सुदीप कुछ सफाई दे पाया . बडी विचित्र स्थिति में तीनो ने कुछ ओपचारिकता निभाते हुए उन क्षणो को पार किया . अनिका तत्काल वापीस हो चुकी थी . हाँ घर आकर सुदीप ने बिना किसी तरह की सफाई देने के अनिका को इस बात के लिये फटकारा कि इस स्तर की महिलाए बिना सुचना के पति के आफीस मे जासुसी करने नही पहुंच जाती है यानि अनिका ने अचानक पति के आफीस पहुंच कर अपनी फुहडता का परिचय दिया है .

अनिका कुछ नही बोल पाई . उसे मानना पडा कि उसने आफीस आकर कुछ ठीक नही किया . लेकिन उसे यह भी स्मरण रहा कि एक वह थी जिसने अपने बास का प्रेम प्यार और सम्मान युक्त आमंत्रण झूठ बोल कर ठुकराया और जिसके लिये ठुकराया वो अपनी मस्ती ,मैं मशगुल था .

लेकिन कुछ ही दिनों के बाद अगली एक घटना अनिका के लिये चेतावनी थी और उसके होश उडा देने वाली थी . सुदीप एक बिजनेस टूर पर कहीं बाहर गये थे दो दिन के लिये और जब वापस आये थके हारे तो अनिका ने बडे धेर्य से , प्रेम से पति को उचित सम्मान देते हुए वेल्कम किया . लेकिन रात को सुदीप के कपडे और अटेची व्यवस्थित रखते हुए अनिका को हाथ लगा एक बिल जो किसी होटल का था . एक डबल बेड रूम का मिस्टर एंड मिसेज सुदीप चौधरी के नाम से यानि .? ..... यानि ? बात यहाँ तक पहुंच चुकी थी ? .....अनिका ने स्वयम को बेहोश होने से रोक लेकिन वो निढाल होकर नीचे बैठ चुकी थी |उसे तत्काल समझ आ गया कि उसकी सोच उसकी धारणाएँ जरा भी गलत दिशा में नहीं जा रही है कुछ चल रहा है जो गलत है जो अन्याय है उसके प्रति उसने सुदीप को कुछ नही कहा लेकिन उसके दिल पर ये अंकित हो चुका था , पत्थर पर खिंची लकीर की तरह कि उसका पति अब उसका नही रहा .जिस पति के लिये उसने अपने प्यार को बलिदान किया था . जिस व्यक्ति को कुरुप होते हुए भी खुशी खुशी अपने पति परमेश्वर के स्थान पर बिठाया था वही उससे धोखा कर रहा था . उससे प्यार ना करना , उसे उचित सम्मान या तवज्जो ना देना तो भी ठीक था उसके सुख दुख के प्रति विरक्त हो जाना भी सहन किया जा सकता था लेकिन ऐसे व्यवहार करते हुए किसी पराई औरत के साथ गुलछर्रे उडाना ये पराकाष्ठा थी अनैतिकता की अनाचार की , और वो इसे सहन नही करेगी . अब उसे प्रमाण चाहिये पक्के प्रमाण ताकि वो जमाने को दिखा सके घर परिवार वालो को रिश्तेदारो को दिखा सके कि उसके सच्चे प्यार के बलिदान का क्या मखोल उडाया गया . उसे कितना बडा धोखा दिया गया .

अगला दिन आफीस का हाफ डे था . वो आफीस से घर के लिये निकल ही रही थी कि बास ने उसे रोका चलो अनिका तुम्हे आज एक मेरे खास से मिलवाते हैं .
आपका खास ? कौन सर ?

चलो तो , डरो नही किसी गलत जगह नही ले जाउंगा .

अनिका इंकार नही कर पाई . बास की कार शहरी क्षेत्र पिछे छोड्कर शहर के बाहरी और जाते हुए एक बडे से परिसर में प्रवेश कर रही थी शायद कोई स्कूल या होस्टल जैसा कुछ था .
ये होस्टल है अनिका जहाँ मेरा दिल मेरी जान रहती है .
मैं समझी नहीं सर !
मतलब मेरा प्यारा बेटा यहाँ रहता है .
आपका बेटा ? लेकिन होस्टल मैं क्यों ?
इसलिये ताकि वो सेल्फ डिपेंड हो सके स्ट्रांग बन सके . जीवन बहुत कठीन है ना अनिका, इसे फेस करने को पावरफुल होना जरुरी है . अनिका कुछ समझी नहीं लेकिन बास के उस आठ साला सुंदर मासूम बच्चे को देख कर बहुत आल्हादित हो गई . बॉस ने बच्चे से गले मिलते हुए अनिका से मिलवाया बासु ये मेरी दोस्त है हमारे आफीस में काम करती है नमस्ते करो
हंसते मुस्कराते बासु ने अनिका को विश किया . " पापा आपको अपना प्रोमिस याद है ना ?
कौन सा ?

आपने कहा था मेरे इस बर्थ डे के पहले हमारे घर में नई मम्मी आ जायेगी और में फिर होस्टल छोड कर घर पर ही रहुंगा .
ओह हाँ बेटा वो .....चुप हो गये राय साहब अचानक बोलते बोलते और चमत्कृत हो गई अनिका यह सब सुनकर .

लेकिन अभी और भी कुछ बाकि था नन्हा बासु फिर बोल पडा पापा मै तो समझा था आप आज मेरी नई मम्मी ले आये . नही बेटा ऐसा नही कहते ये तुम्हारी आंटी है

जी पापा पर बहुत प्यारी है मुझे ऐसी ही मम्मी चाहिये
चलो बेटा दुसरी बाते करते हैं अपनी पढाइ के बारे मै बताओ ? बॉस ने बात बदलनी चाही
अनिका हतप्रभ सी खुद में ही डूब गई थी राय ने बेटे से मुलाकात जल्दी ही खत्म की और वापस दोनो चल दिये . कुछ देर तो कार में चुप्पी छाई रही यद्यपि उस मौन में अनिका के प्रश्न और राय के जवाब मानो होँठो पर आने को आकुल थे और अंतत; अनिका ने मौन तोड़ा सर भाभी जी .....
येस अनिका शी इज नाट मोर
लेकिन कब से यह सब ?
अनिका अब इस बात को 3 साल हो गये हैं एक एक्सीडेंट मे वो जा चुकी है इसीलिये बासु को होस्टल में भरती किया है उसका दिल बहला देने को अक्सर कह देता हूँ कि उसके लिये नई मम्मी लाऊंगा .
तो फिर क्यो नही ले आये अभी तक . बसु को मम्मी मिल जायेगी और आपके लिये भी कुछ सहारा .....
मेरे लिये तो मिल जायेगे सरलता से कोई भी , लेकिन तुम समझ रही हो अनिका कितना कठीन है ऐसा कोई मिल जाना जो बसु की मम्मी की जगह ले सके ?

ओह अनिका कुछ ना कह सकी सोच मे डूब गई .
क्या हुआ अनिका ? कुछ नही सर बडा विचित्र संसार है कही कुछ नही है कही कुछ .
एक जोर की हंसी हंसते राय बोला ये सब छोडो इसी का नाम जीवन है . मैं भुल ना जाउँ तुम्हे आज से ही कह रहा हु पंद्रह तारीख को बासु का बर्थ डे है तुम्हे आना है

उसकी एक अछी दोस्त बन कर , यह तो मैं तुम्हे कह सकता अनिका ? जी सर बिल्कुल

घर आकर सारी शाम बल्कि देर रात तक अनिका राय के बारे मे सोचती रही .परेशान होती रही ऐसा क्यो होता है अक्सर कुछ भले लोग ही ज्यादा दुखी क्यों रहते है परेशान क्यों रहते है जबकि गलत लोग दुष्ट लोग मजे मारते है गुलछर्रे उडाते हैं ?

उसके जेहन से राय का मुस्कराता हुआ लेकिन एक गहरी उदासी लिये चेहरा हट नही पा रहा था कितना बडा दुख का पहाड लेकर जी रहा था राय .

सुदीप ने उसे कुछ उदास देखा तो पुछने पर सारी बाते बताते हुए 15 तारीख की पार्टी मे जाने का जिक्र भी कर डाला अनिका ने . सुदीप ने राय के यहाँ जन्मदिन की पार्टी मे जाने से कोई इंकार नही किया लेकिन उसने अपनी डायरी देख कर कुछ अफसोस जताते हुए अनिका को बताया कि उसे तीन दिन के लिये कम्पनी के हेड आफीस जयपुर जाना है 12 से 15 तक अब 15 को कितनी बजे तक वापसी होगी ये पक्का नही है .

अनिका बहुत चाह रही थी राय के यहाँ पार्टी मे जाने के लिये . वो बासु से मिलने को लेकर भी बहुत उत्तेजित थी लेकिन उसने समझ लिया था कि सुदीप को कोई दिलचस्पी नही है उस पार्टी की .

लेकिन तुम्हारा जयपुर दौरा तीन दिन के लिये क्यो ? इतनी लम्बी मिटींग चलती है क्या ? अनिका ये सिर्फ मिटींग नही बीजनेस डेवलपमेंट का सेमीनार है प्रोडक्ट सेल के बारे मे कुछ एक्स्पर्ट भी आ रहे है .

तो हमे भी ले चलो ना हम भी घुम फिर लेंगे जयपुर .

अनिका तुम क्या समझती हो हम वहाँ फ्री होंगे ? हमे एक घंटा भी रिलेक्स नही मिलेगा लगातार व्यस्तता बनी रहेगी कोई फायदा नही तुम्हे वहा ले जाने से . हमे वहा बहुत ही हार्ड वर्क के लिये भेजा जा रहा है .

हमे ? मतलब ? अनिका चौंकि और अनिका के प्रश्न से सुदीप भी चौंका

मतलब ? क्या मतलब ?

मेरा पुछना है कि कौन कौन जा रहे है जयपुर ?अरे भाई मेरे अलावा सेल्स के 2-3 लोग और भी जायेंगे . लेकिन अभी किसी के नाम नही पता . हेड आफीस से जिन्हे कहा जायेगा वही जायेंगे

सुदीप ने अनिका के एक अर्थपुर्ण अस्प्ष्ट से प्रश्न का अस्पष्ट सा ही उत्तर दे डाला .खुलकर अनिका ने भी नही पुछा जो उसे पुछना था और खुलकर सुदीप ने भी जवाब नही दिया जो शायद उसे ज्ञात होगा ,अनिका का दिमाग विचलित हो चुका था सुदीप की बातो में उसे साफ साफ सफेद झूठ और साजीश की बू आ रही थी .

उसका दिमाग रात भर दो खास बातो के विमर्श में लगा रहा राय की त्रासदी जानकर उसके दिमाग में एक अतिरिक्त सहानुभुती जाग चुकी थी और वह बासु की जन्मदिन की पार्टी मे जाकर अपनी उपस्थिति से एक आत्मियता भरा सुकुन पाना चाहती थी साथ ही राय द्वारा उसे दिये जा रहे महत्व का सम्मान भी व्यक्त करना आवश्यक समझ रही थी .

दुसरा संशय जो उसे परेशान कर रहा था वो ये कि सुदीप के साथ जयपुर और कौन जा रहा है ?क्या उसकी लेडी स्टाफ मनिषा भी?

अगले 5-7 दिन इसी तरह के संशय मे गुजरे गये कल सुबह सुदीप की फ्लाईट थी और सुदीप के अनुसार उसे अभी भी यह नही मालुम था कि और कौन जा रहा है जयपुर ?

12 की सुबह जल्दी ही सुदीप रवाना हो चुका था और आफीस की तेयारी करती अनिका ने दो निर्णय पक्के तौर पर ले लिये थे . पहला सुदीप समय पर आये ना आये वो राय के यहाँ पार्टी मे जायेगी , और दुसरा आफीस पहुंच कर पता लगायेगी कि सुदीप के साथ और कौन गया है जयपुर .

आफीस में बास से सामना होते ही राय ने पार्टी मे आने का अपना आग्रह दौहराया अनिका से जिसे अनिका ने पुरे सम्मान से सहमति दर्शाई और अपनी टेबल पर बैठते ही सुदीप के आफीस फोन लगाकर अपने परिचित से चालाकी से पता लगा लिया कि जयपुर जाने वाले और कौन कौन थे और सकते में थी अनिका , इस बात की पुष्टी से कि जिसे वह अंधेरे मे कोई रस्सी या सांप होने के संशय में थी वो सांप रस्सी नही बल्कि एक जहरीला सांप ही निकला । यानि जाने वालो मे सिर्फ दो नाम थे अकाउंट सेक्शन से रस्तोगी और सेल्स से मेडम मनिषा . अनिका को पुरा पुरा संदेह यही था एक हल्की सी आशा जरुर थी कि शायद उसका संदेह हार जाये उसे एक सुकुन मिल जाये उसे यह लग जाये कि वो व्यर्थ संदेह कर रही है सुदीप पर , लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ . एक कडवा सत्य अपने पुरे आकार मे उसके सामने खडा था .

अब संदेह में और सच मे ज्यादा फर्क नही लग रहा था . लेकिन अपने हित के मोह में एक क्षीण सी आशा फिर जागी अनिका को लगा कि ये सब उसका वैचारिक वहम भी हो सकता है आजकल ये बातें इतनी बडी नही रही . हो सकता है मनिषा सेल्स विभाग मे है तो कम्पनी ने उसे भेजना जरुरी समझा हो इसमे सुदीप का कोई रोल ना हो.

अनिका को क्षणांश के लिये यह विचार एक सुखद अनुभुती सा महसूस जरूर दे गया . लेकिन यदि मनिषा जयपुर जा भी रही हो तो सुदीप को ये मालुम ना हो ये सम्भव नही और यदि सुदीप को मालुम था और उसके मन में कोई पाप नही था तो उसे यह बात छुपाने की क्या जरुरत थी . कुछ भी तो तय नही कर पाई अनिका . हाँ इतना सब सोचते सोचते एक तनाव और सिरदर्द जरुर बुला बैठी.

बडी मुश्किल से दिन पुरा कर घर पहुंची और सोते जागते ही शंका कुशंका मे रात गुजारी . सुबह सर दर्द की टेबलेट लेकर मोनु को स्कूल रवाना कर आफीस के लिये निकल पडी . रास्ते मे ही रुक कर बासु के

लिये एक महंगा सा गीफ्ट भी ले लिया ये सोचते हुए कि क्या पता कल समय मिले ना मिले .

आफीस में बैचेन सी बैठी अनिका फाईलोँ में जबरन सर खपा रही थी तभी उसे अपनी टेबल पर दिखी येल्लोपेज डायरी जिसमे नगर के सारे फोन नम्बर और अन्य जानकारी समाहित रहती है . उसने फाइल छोडी और पन्ने पलटने लगी येल्लो पेज के अपनी इच्छीत वस्तु के लिये और उसने पा लिया वह पेज जिस पर लिखा था सिक्युरिटी ... प्रायवेसी .. इंक्वायरी . धडकते दिल से अनिका ने दर्शाये नम्बर पर नजर डाली ,,आल इन वन डिटेक्टीव एजेंसी ,,और पढा अनिका ने विवरण मे लिखा था आपकी सुरक्षाके लिये घातक तत्वो की जांच , आपको नुकसान पहुंचाने वाले सम्भावित कारक या आपके साथी की संदेहास्पद गतिविधियो की सत्यता सभी कामो के लिये विश्वस्त नाम एक क्षण ठिठकते हुए अनिका की उंगलिया नम्बर डायल करने लगी कोई मिस्टर गुप्ता था उधर
मुझे एक व्यक्ती की 2-3 दिनो की सारी गतिविधियो की जानकारी चाहिये आपका क्या तरिका होगा और क्या आपकी फीस होगी .

सामने वाले का उत्तर पाकर कुछ क्षण सोच कर अनिका ने यह कहते हुए फोन बंद कर दिया कि ठिक है मै आपको फिर फोन लगाती हूँ .

अनिका अब निर्णायक मोड पर आ चुकी थी . क्या मुझे यह करना चाहिये ? एक पढी लिखी जागरुक नारी की तरह अपने पति की संदिग्ध हरकतों के बारे मे सत्य का पता लगाकर अपने पवित्र रिश्तो को सत्यता और इमानदरी के पलडे पर तोलना चाहिये या एक आदर्श भारतिय नारी के तरह ऐसे पाप कार्य मे ना पड कर पति पर पुरा विश्वास रख्ते हुए जैसा चल रहा है वैसा चलने देना चाहिये .लेकिन ऐसे अंधेरे मे रहना तो कोइ अक्लमंदी नही थी पति कोई भगवान तो नही वो भी उसके जैसा इंसान ही है जो गलत भी हो सकता है . उफ अचानक चौंकी अनिका हाथों मे दबी जलती हुइ सिगरेट की आंच लगी थी उसे . चौंक गई थी वह .

ना जाने कितनी देर से सिगरेट फुंकते हुए अपने लम्बे भुतकाल मे भटकती अनिका एक दम वर्तमान मे आ गिरी .सब कुछ सोच लिया था उसने सब कुछ ताजा हो गया था उसके जेहन में

डिटेक्टीव एजेंसी को फोन लगाने के बाद आफीस में मन नही लगने से दोपहर में ही घर आ चुकी अनिका काफी सोच विचार के बाद फोन लगा चुकी थी एजेंसी को सुदीप की जासुसी करने के लिये उसे इंतजार था शाम तक आज की खबर उसे मिल जाये कि सुदीप और मनिषा क्या गुल खिला रहे हैं .

रात होते होते थक चुकी थी अनिका सोच सोच कर . मोनु सो चुका था . अनिका की आंखो में नींद नही थी तभी उसे कुछ सुझा उसने सुदीप की अलमारी खोली कोने मे रखी व्हीस्की की बाटल निकाल कर एक पेग बनाया और फिर एक सिगरेट सुलगा ली . उसके हमेशा मासूम से रहने वाले चेहरे पर एक खतरनाक क्रूर सी मुस्कराहट खेल रही थी . आज वो सारी वर्जनाए तोड देना चाहती थी . उसे सिर्फ सुदीप पर ही नही सारे पुरुष वर्ग पर गुस्सा आ रहा था उसे आक्रोश था इन कायदे कानून बनाने वालो पर . कैसा अत्याचार था उसके उपर एक आदर्श भारतिय नारी की तरह उसने अपने मातापिता की बात मानी अपने कालेज के मासूम प्यार को छोडा अपनी सुंदरता को दरकिनार करते हुए थुलथुल से कुरुप सुदीप को पति रुप मे स्वीकर किया उसे पुरी श्रद्धा से सम्मान से पति स्वीकर किया उसे जी भर के प्रेम किया समर्पण किया .

लेकिन यह घमंडी पुरुष यह अहंकारी मर्द उसकी अस्मिता को उसकी कोमल भावना को रोंदता हुआ उसे निकृष्ट समझता हुआ उसकी उपेक्षा करता रहा . सुदीप ने ये विचार धारा कहाँ से बनाई कि किसी भी मर्द का पति का नौकरी करना तो जायज है और पत्नी नौकरी करे तो उसके लिये ढेर सारे कायदे ढेर सारे प्रतिबंध . पति कुछ भी फेशन करे पत्नि जींस पहनने की इच्छा करे तो वो सामाजिक रुप से असम्मानजनक पति या एक मर्द चाहे सिगरेट पिये शराब पिये पार्टीयों मे जाये सब जायज और पत्नी? वो इनमे से कुछ भी इच्छा करे तो चरीत्रहीन होने का आरोप . पति अपनी सेक्रेटरी के साथ लंच ले बाहर जाये गुलछर्रे उडाये कोई जिक्र नही और पत्नी बास के साथ लंच भी ले ले तो समाज की नैतिकता की चुले हिलने लगे .एक विस्फोट हो जाये पति किसी भी पार्टी से रात को कितनी भी बजे आये कोइ प्रश्न नही और औरत यदि किसी पार्टी मे ? और वो भी रात को ? तौबा तौबा घोर कलयुग ? और ये सब बातें जो समयसापेक्ष भी हैं छोड़भी दी जाए तो पति के दिल में पत्नी का स्थान सम्मानजनक तो जरूरी है पति पत्नी का रिश्ता तो समभाव से इमानदारी से पुरे विश्वास से युक्त तो होना ही चाहिए .ये सब दोहरे मापदंड क्यो ? अनिका अब ये सब नही मानेगी अब नही रहेगी इन बंधनो मे उसे ही सम्मान देगी जो उसे सम्मान देगा .

ऐसे ही आक्रोश और प्रतिशोध युक्त विचारो मे डूबी व्हिस्की के नशे में डूबी अनिका ना जाने कब सो चुकि थी .

सुबह भारी सरदर्द से परेशान अनिका जल्दी जल्दी आफीस के लिये तैयार हो रही थी तभी उसके मोबाईल की घंटी बजी और उसका बहुप्रतिक्षित समाचार उसे मिल गया .

मेडम मै एक्स व्हाय ज़ेड जयपुर से कुछ पोईंट नोट करें

अनिका समझ गई किसका फोन है . हाँ बोलो आपके पति सुदीप चौधरी किसी महिला मनिषा सप्रे के साथ होटल पिंक सीटी मे रूम नम्बर 321 मे पति पत्नी के रुप में रुके हैँ कल कम्पनी की मिटींग शाम 6 बजे निपटाकर दोनो एक मुवी देख कर एक बार मे गये थे वहाँ से एक होटल मे खाना खाकर रात 12 बजे अपने रूम मे

सो गये आज सुबह आफीस गये हैँ .
रुकी हुई सांसो से सब सुनती अनिका बोली और कुछ ?
पता चला है मेडम आज दोपहर में आफीस मिंटीग खत्म हो जायेगी फिर सबका जयपुर घुमने का प्लान है .
मुझे उनके कुछ फोटो चाहिये कुछ खास फोटो जो ... समझ रहे हो तुम ? जी मेडम आज कोशीश होगी कि कुछ खास फोटो लिये जाये .
और हमे होटल के बिल की कापी और अन्य प्रमाण वो भी चाहिये .

ओके मेम मै सब समझ रहा हुँ आपकी आवश्यकता . फोन कट चुका था लेकिन अनिका का दिमाग अशांत हो चुका था इन सब बातो का उसे अनुमान था अब जरुरत थी सारी बातो के प्रमाण की .

शाम होते होते उसके व्हाट्सप पर सुदीप और मनिषा के बहुत से फोटो रोमेंटिक मूड के आ चुके थे और अनिका सब कुछ जानकर किसी निर्णय पर पहुंच रही थी अचानक उसे सुझा सुदीप को एक फोन लगाने का .
कब तक आ रहे हो सुदीप प्लीज जल्दी आ जाओ हमे आज राय साब के यहाँ जाना है ओह डियर अनिका हमारा काम अभी खत्म नही हुआ है शायद मुझे यहाँ से निकलने में देर हो जाये हम वहाँ नही जा पायेंगे .

तो क्या मै मोनु को लेकर चली जाउँ ? मुझे जाना जरूरी हे सुदीप .
क्यों जरूरी है अनिका ? वो तुम्हारा बास है बस . कोई खास रिलेटिव्ह नही उसे सॉरी बोल दो और फिर क्या तुम्हे यह ठीक लगेगा कि में जब घर पहुंचूंगा तो तुम नही होगी . मै सब कुछ कैसे मैनेज करुंगा प्लीज केंसल देट पार्टी .

बडी सरलता से कह दिया था सुदीप ने लेकिन अनिका द्रढ थी बास की पार्टी मे जाने के लिये . उसने मोनु को तैयार किया और सात बजते बजते रवाना हो गई राय साब के बंगले की और जाने कब 7 से 9 बज चुके थे अनिका ने भरपुर मजा लिया पार्टी का . बासु को मोनु से मिलवाया दोनो साथ साथ मस्ती करते रहे . राय ने भी बहुत आभार माना . अनिका बहुत खुश थी . उसने राय के आग्रह पर एक पेग ड्रींक भी लिया था . तभी अनिका के मोबाईल की घंटी बजी उस तरफ से सुदीप की दहाडती हुई आवाज गुंजी .
व्हेयर आर यु स्टुपीड अनिका ?

मैं यहाँ पार्टी मे हूँ सुदीप.
मेंने तुम्हे मना किया था वहाँ जाने के लिये हाँ तुमने मना किया था लेकिन मेरा यहाँ आना जरूरी था सुदीप

अब मै यहाँ क्या झक मारू अकेला ?
अकेले क्यूँ किसी को बुला लो सुदीप . क्या मतलब तुम्हारा बेवकुफ औरत ? पति से पुछे बिना पार्टी मे गुलछर्रे उडा रही हो मै यहाँ परेशान हूँ तत्काल वापस आओ , फिर तुम्हे बताता हूँ मैं

क्या बतओगे सुदीप ? मुझे सब पता है . और हाँ जब मै फ्री हो जाउंगी जब मुझे ठीक लगेगा मै आ जाउंगी . तुम समझ रही हो तुम क्या कह रही हो ? मुझे देर नही लगेगी तुम्हे छोड्ने मैँ दर दर की हो जाओगी तुम अनिका , तत्काल वापस आ जाओ अपनी बेवकुफी की माफी मांगो वरना तुम जानती हो मेरा गुस्सा कितना खराब है .

देखो सुदीप यहाँ पार्टी चल रही है मेंने कुछ ड्रींक भी कर रखी है तुम तो जयपुर मे खुब मस्ती मार चुके मैँ यहाँ ईंजाय कर रही हूँ पोसीबल हुआ तो मैं रात मैँ आउंगी वरना मैं सुबह ही आउंगी
क्या ? तुम बिना पति की पर्मिशन के अकेले ही किसी गैर मर्द के घर शराब पीकर मस्ती करते हुए रात भी रुक सकती हो ? हाउ यु डेअर . कैसे हिम्मत हो गई तुम्हारी ?
ये हिम्मत तुमसे ही मिली है सुदीप .यार तुम तो कितनी बार मनिषा के साथ कितने ही शहरोँ मैँ कितनी होटलोँ मैँ रुक चुके हो . अभी तीन दिन से उसके साथ उसे बीबी बनाकर मजे कर रहे हो मुझे भी तो रुकने दो एक रात . अनिका के बोल आग उगल रहे थे लेकिन उसकी आंखे रो रही थी . आंसुओ से लबरेज थी .

उसने फोन बंद करना चाहा . लेकिन उसने आख्ररी बात भी कह डालना उचित समझा

सुनो मिस्टर सुदीप आज तक तुम बहुत अय्याशी कर चुके बहुत धोखा दे चुके बहुत अन्याय कर चुके . अब सिर्फ एक रास्ता है इन सारी बातो को मंजूर करते हुए इनसे तौबा करते हुए मेरे साथ ईमानदारी से जीवन जीना चाहते हो तो अपने अफसोस के सारे प्रमाण लेकर कल मिलना वैसे मेरे पास तुम्हारे अयाशी के गद्दारी के धोखाधडी के सारे सबुत हैँ . तुम उन्हे देख सकते हो . अब कल बात होगी . मैं आज नही आ रही हूँ मैं यहाँ रुकुंगी मेरे बास के घर और अनिका ने फोन बंद कर दिया .तभी मोनु दौडता हुआ आया . मम्मी मम्मी हम आज यँही रुकेंगे . मुझे बहुत अछा लगता हे बासु के साथ. पास खडे राय की और देखते हुए अनिका ने कहा ओ के बेटा राय अंकल चाहेंगे तो हम आज रात यँही रुकेंगे . बाकि कल सोचेंगे .

और इन बातों से हतप्रभ सा प्रफुल्लित सा राय उछल पडा अनिका की बातोँ पर ओह अनिका मैं धन्य हुआ मैं स्वागत करता हूँ तुम्हारा . मेरा घर धन्य हो जायेगा यदि तुम यहाँ रुकोगी प्लीज बदल न देना अपना निर्णय .

अनिका रुकी हुई थी . वह अभी भी वक्त देना चाहती थी भटके हुए सुदीप को .
हल्के नशे में डूबती उतराती अनिका बस यही कह पाई ,प्लीज सर मे सोना चाहती हूँ
बाकी सब कल .

और राय ने उसकी व्यवस्था करने के बाद पता नही दोनो हाथ उठाकर आसमान से क्या मांगते हुए अपनी भींगी हुई आंखो को पोंछा .

कहानी

ऊषा कुशवाहा
जमशेदपुर- (झारखंड)

ब्रम्हांड प्रिया

शनै-शनै मेरी चेतना लौट रही थी। सर्वप्रथम श्रवण शक्ति ने काम करना शुरू किया, आस-पास कुछ अजीब अनजानी सी आवाजों को मै महसूस करने लगी। कुछ ही पलों में पलकें भी खूल गई। कुछ देर तो बिल्कुल शांत पड़ी रही किंतु मै सीधी लेटी हुई थी और पलकें खुल चुकी थी, ऊपर जो छत नजर आ रहा था वो मेरे घर का जाना-पहचाना छत नहीं था। फिर कहाँ हूँ मै.... और यहाँ आई कैसे?

मैने महसूस किया मेरे नाक-मूहं पर कुछ कसा हुआ सा है हाथ से छूकर समझने की कोशिश की, ये क्या? मेरे हाथ में भी कुछ फंसा हुआ है शायद कोइ मशीन। दूसरे हाथ को उठाने की कोशिश की, आह! दर्द से बिलबिला उठी उस हाथ में शायद ड्रिप लगा हुआ था यूं अचानक हाथ खिंचने से सुई में खिंचाव आया जिसकी वजह से दर्द हुआ। ऊफ! क्या मुसिबत है.... मुझे हुआ क्या है? मै हूं कहाँ??... सिरहाने किसी मशीन के लगातार चलने की आवाज आ रही थी जिसकी गति कभी तेज तो कभी कुछ मद्धिम सी हो रही थी। मानो किसी लंबी दौड़ का धावक अपनी सांस को व्यवस्थित रखते हुए अपनी दौड़ पूरी करने का प्रयत्न कर रहा हो।

ओह! यह किसी धावक का नहीं बल्कि मेरी ही सांस की आवाजे हैं और यह सिरहाने लगा मशीन मेरी सांसों की गति को माप रहा है। इसका अर्थ है यह मेरे नाक-मुंह पर ऑक्सीजन सिलेंडर के पाईप का मास्क लगा हुआ है! यानीकि मैं हॉस्पिटल में हूं, मैने सिर घूमाकर इधर -उधर देखने की कोशिश की। मेरे आस-पास बस कुछ ही बिस्तर लगे हुए हैं जिनमें एक-दो तो खाली हैं बाकि पर मरीज हैं पर यह क्या! सभी के बिस्तर के आस-पास ढेर सारे मशीन लगे हुए हैं खासतौर पर सिरहाने वाली मशीन और मुंह पर ऑक्सीजन मास्क तो सभी के लगे ही हुये हैं। किसी-किसी बिस्तर के पास तो कई-कई मशीनें कुछ इस तरह रखी हुइ है मानों उस पर लेटा मरीज वायरों के जाल में उलझा हुआ हो और यह क्या? सारे ही मरीज गहरी नींद में सो रहे हैं कहीं कोइ हरकत नहीं पिछले कुछ पलों में किसी ने करवट तक नहीं बदली ये जीवित भी हैं या.....

नहीं... नहीं.... मृत शरीर में मशीनें नहीं लगा करतीं! ये सभी जीवित हैं पर इतनी सारी मशीनें, इतने लोग और ये खामोशी!! हूं... समझी, ये आईसीयू वार्ड है हे ईश्वर! इसका अर्थ है मैं आईसीयू में हूं पर क्यों? जाने क्यों कुछ याद नहीं, ना जाने कब से यहाँ हूं कुछ भी तो याद नहीं। कमरे में चार-पाँच, जहाँ तक मुझे समझ आ रहा है या मैं गर्दन घुमाकर देख पा रहीं हूं इतने लोग तो होगें पर वातावरण में सिर्फ मशीनों के चलने की पींप.. पींप.., खट.. खट, सीं... सीं..., सन.. सन... की आवजें ही गूंज रही थी किसी तरह का कोई मानव स्वर नहीं था। किसीके खांसने, खरटि लेने या कराहने तक की कोइ आवाज नहीं। ये जीवन की कैसी अवस्था है जहाँ मशीनों का चलना इंसान के जीवित होने का प्रमाण है! मशीनों से आती तरह-तरह की आवाजों के बीच भी एक भयावह सन्नाटा पसरा हुआ था। जाने दिन है या रात? पता नहीं कितना बज रहा है? मैंने गर्दन घुमाकर चारो ओर देखने की कोशिश की मुझे घड़ी कहीं नजर नहीं आई। एक कोने में एक बड़ी सी मशीन जैसा कुछ ढककर रखा हुआ है संभवतः उसके पीछे घड़ी हो या हो ही ना।

यूं भी जिनके वक्त ने उन्हें यहाँ इस वार्ड में ला पटका हो, जहाँ अपनी ही सूध नहीं फिर इस बेरहम समय की कौन पूछे। इस वार्ड तक पहुंचने के बाद कम ही लोग वापस लौटते है वरना तो अंतिम सफर पर ही.... हे ईश्वर! ये कहाँ पड़ी हूं मैं और क्या सोच रही हूं? मुझे लगा इस सन्नाटे में बेहद आहिस्ते-आहिस्ते से किसी के इस ओर आने की पदचाप सुनाई पड़ रही है। शायद कोई डॉक्टर या नर्स हों। मैने गर्दन घुमाकर कमरे में दरवाजा तलाशने का प्रयास किया, वो रहा दरवाजा मेरे सामने ही तो है दरवाजा कांच का था शायद, पर्दा पड़ा होने के कारण ठीक से कुछ समझ नहीं आ रहा था।

मेरी नजरें दरवाजे की ओर ही लगी रही जिसके खूलने का मुझे इंतजार था। यूं एकटक दरवाजे को देखते काफी समय गुजर गया अब मेरी गर्दन में दर्द होने लगा पर ना ही वो दरवाजा खुला और ना ही वो नजदीक आती आहट ही बंद हुइ। आईसीयू वार्ड में यूं आहिस्ते सी आती किसी पदचाप की आहट!! किसकी हो सकती है? दिमाग ने जो जवाब दिया, कल्पना कर ही मेरी रीढ़ की हड्डी में सनसनाहट सी होने लगी मैने भय से अपनी आखें बन्द कर ली, कान भी बंद करना चाह रही थी पर मजबूर थी। लगा कुछ और देर इस स्थिति में रही तो भय

से बेहोश हो जाउंगी। ना तो मुझे ऐसा कुछ दिख रहा था जिससे वक्त का कुछ पता चले ना ही मेरे पास समय देखने का कोई साधन मौजूद था फिर भी जाने क्यों मेरा दिल कह रहा था यह आधी रात का वक्त है।

तभी अचानक उस पदचाप की आवाज कमरे के भीतर आती हुइ महसूस होने लगी। मैने अपनी आखें और भी मजबूती से बन्द कर ली, हे ईश्वर! किसकी बारी है? अवश्य यह मौत ही है यमराज का भेजा हुआ दूत, जो हम में से किसी के प्राण लेने... ओह!. यह पदचाप तो मेरी ही बिस्तर के समीप आता महसूस हो रहा है! तो इसका अर्थ है मेरी ही बारी! यहाँ? इस तरह?.... बिना किसी से मिले?.... बिना कुछ कहे?.... सबसे दूर ऐसे???? ऊफ!!! मुझे जोरों की रूलाई आ गई जैसे बस अब बुक्का फाड़कर रो पड़ूँगी पर प्रयास ही करती रही कंठ से कोई बोल ही नहीं फूटे।

"मैने कहा था न सर! देखिये इस पेशेंट को होश आ गया है।"

"नो... नो... सिस्टर, यह पूरी तरह कोनशियस नहीं है।"

वो पदचाप मेरे बिस्तर के बिल्कुल निकट आकर रुक गये थे वो एक नहीं दो लोगों के पदचाप थे। मशीनों की आवाज के बीच भयाक्रांत मेरा मन दरवाजा खुलने की हल्की आहट को महसूस न कर पाने के कारण सीधे वार्ड में पदचाप कि आहट महसूस कर भयभीत हो रहा था। संभवतः वार्ड में प्रवेश करते ही मेरा भय से कांपता शरीर या फिर सिरहाने लगी मशीन की कोई हरकत ने डॉक्टर को अपनी ओर आकर्षित किया हो, जिससे वह सर्वप्रथम मेरे बिस्तर के पास ही आ गये थे। इतनी देर के बाद मानव स्वर के कुछ शब्द सूनकर मन को कुछ ढ़ाढस मिला मैं अपनी धौंकनी सी चलती सांसों को नियंत्रण कर पलके खोलना चाह रही थी पर सफल नहीं हो पा रही थी। डॉक्टर के साथ नर्स भी थी वो लोग मेरे कई अंगों में लगे मशीनों का मुआयना कर रहे थे। ठीक भी था मशीन के सहारे जीवित इंसान के शरीर का भला क्या मुआयना करना!

"माँजी.. माँजी अब कैसी तबीयत है आपकी?"

पुरुष स्वर था, शायद डॉक्टर आवाज दे रहा था। फिर किसीने मेरे गाल को हल्के से थपथपाया, "माँजी... माँजी! आप सून पा रही हैं हमें?..." यह नर्स थी।

मै सब कुछ सून पा रही थी बोलना भी चाह रही थी पर जुबान जैसे तालु में चिपक गये थे कुछ बोल ही नहीं पा रही थी। डॉक्टर ने अपनी उंगली से मेरी पलकों को उठा-उठाकर देखता रहा फिर जाने क्या ढेर सारा निर्देश नर्स को देने के बाद दोनों कुछ देर मेरे शरीर में लगे यंत्रों में सिर खपाते रहे। फिर शायद दूसरे मरीज की ओर बढ़ गये या वार्ड से बाहर चले गए।

तभी, आहा! मेरी सपने वाली देवी! पर यह कैसे संभव है? मैं तो जाग रही हूं! इनके दर्शन तो आजतक मैने सिर्फ सपनों में ही किये है आज एकाएक जागृत अवस्था में? चलो यह भी ठीक है आज इनसे जी भरकर बातें करुंगी वैसे भी यह स्थान सपनें से कुछ कम एकाकी है क्या? कहने को यहाँ मेरे अलावा कुछ और इंसान भी हैं पर कोई किसी को सुनने, समझने की अवस्था में कहाँ है। आज सबसे पहले मैं देवी का नाम और उनका परिचय पूछूंगी यूं तो हमारी मुलाकात कई बार हो चुकी है पर आपस का परिचय अबतक शुन्य ही है।

अच्छा, कई बार मिले है हम?.. मैने दिमाग पर जोर डालने की कोशिश की हूं..., पहली बार जब मुझे टाईफाइड ने जकड़ लिया था और मैं दिन रात तेज बुखार से तपती रहती। तब एक दिन अपने मुर्झाए चेहरे को आईने में देखते हुए मैने कहा था, कैसी बंदरिया सी सूरत हो गई है मेरी इससे तो अच्छा था मैं मर ही जाती। तब कुवांरी ही थी शादी नहीं हुई थी। अच्छी तरह याद है उसी रात यह अनुपम सुंदरता की देवी का मेरे सपने में पहली बार आगमन हुआ था। ऐसा सौम्य शितल रुप, चेहरे पर ऐसी शांति कि बस देखते मन मुग्ध हो उठा था। कुछ पल असीम शांत स्नेहिल नजरों से मुझे निरखने के बाद इन्होंने बेहद हल्के हाथों से मेरे सिर पर हाथ फेरा था और बस अंतर्ध्यान हो गई थी। कैसी शांति और शुकून था उस स्पर्श में ओह! नींद खूल गई थी मेरी कुछ भय सा भी महसूस हुआ बगल में सो रही मम्मी से इतनी जोर से लिपटी थी कि उनकी भी नींद खूल गई। यूं भी इन दिनों मेरी बिमारी की वजह से वे चौकन्नी ही रहा करती। उन्होंने मुझे अपने में समेटा तो समझ आया मै पसीने से भींग रही थी। मम्मी ने मेरा माथा सहलाते हुये कहा था, 'आज खूब पसीना आया है अब बुखार उतर जाना चाहिए।' मम्मी का अनुमान सही था उसके बाद मुझे बुखार नहीं आया।

दूसरी बार.... हाँ याद आया, विवाह ही नहीं दोनों बच्चों का जन्म भी हो चुका था बेटा तो स्कूल भी जाने लगा था। छोटी सी बात, हाँ बात छोटी ही रही होगी क्योंकि आज वो बात याद भी नहीं। तो छोटी सी किसी बात पर विवाद इतना बढ़ गया था कि कई दिनों से पति से अबोला चल रहा था। युवा मन, चाहतें दोनों ओर थी पर झुकने को कोई तैयार न था। चौथे दिन जब अपनी ओर से की गई हल्की सी पहल को नासमझी के कारण इन्होंने नजरअंदाज कर दिया। मेरा नारित्व आहत हो उठा और मैने अपनी इहलीला ही समाप्त कर लेने का फैसला किया। गई रात तक तकिया में मुहँ छुपाए रोती रही थी जाने कब आँख लगी कि अचानक माथे पर वही स्नेहिल शितल स्पर्श! देखा सामने यही मेरी पुर्व परिचित देवी खड़ी मंद-मंद मुस्कुरा रही थी। काली घनेरी बादलों सी कमर तक लहराते बाल, आँखों की गहराई ऐसी कि पूरी कायनात समा जाए, चेहरे का ओज ऐसा कि नजरें टिकती न थी। उनके स्पर्श का जादू ऐसा था जिससे मैं निकल ही नहीं पा रही थी अपनी सुध-बुध खोये उनकी खुबसूरती, उनके सानिध्य की शितलता को निरखने-समझने का प्रयास ही करती रही कि वो फिर से अंतर्ध्यान हो गई।

दूसरे दिन उठी तो दिलोदिमाग पर वो चेहरा कुछ इस कदर छाया हुआ था कि और कुछ याद ही नही रहा।

मन में बार-बार यही ख्याल आता आखिर ये देवी हैं कौन? घर में जितनी भी देवियों की तस्वीरें थी सभी को ध्यान से देखा नहीं! इनमें से कोइ नहीं फिर स्वयं की इस बचकानी हरकत पर तरस भी आया, ये तस्वीरें तो हम मनुष्यों की कल्पना पर अधारित है पर जो मेरे सपनों में आई वो??? शाम को जब ये ऑफिस से लौटे, मैने इन्हें अपने सपने के बारे में बताया। पहले तो ये काफी देर तक हँसते रहे फिर बोले, "सपना तो सपना है भला उसमे भी कोई सच्चाई होती है।"

बात आई-गई हो गई और कुछ दिनों बाद बिसर भी गई। जीवन अपनी गति से चलता रहा।

पिछले वर्ष जब हजारों-हजार लोगों की तरह कोरोना ने मुझे भी धर दबोचा एक-एक सांस के लिए ऐसा संघर्ष कर रही थी मानों पहाड़ की चढ़ाई ही चढ़ रही होऊं। अपने परिवार के लोगों को हल्कान होते देखती तो मन व्यथित हो उठता। एक ओर बैंक से जमापूंजी छीजता जा रहा था तो दूसरी ओर बंद मुट्ठी से रेत की तरह मेरी जिंदगी! ऐसे में मन में बार-बार यही ख्याल आता, हे ईश्वर इससे पहले कि मेरे परिवार के किसी और सदस्य को यह बिमारी अपना शिकार बनाए बुलाना ही है तो मुझे ही बुला लो। ऐसे ही विचारों में खोई कुछ सोई, कुछ जागी, अर्धबेहोशी की सी हालत में पड़ी थी कि, अचानक एक रात ये देवी सिरहाने आ खड़ी हुइ। वही सौम्य शितल रूप, ठहरी सी मुस्कान और अद्भुत सा स्पर्श! इस बार तो कोरोना ने इस कदर तोड़ रखा था कि संभलकर एक भरपूर नजर देख भी पाती इससे पहले ही वो अपने अंदाज में गायब हो गई थी। हर बार की तरह उस बार भी मै कई दिनों तक उन्हें याद करती हाथ मलती, मन मसोसती ही रह गई थी।

आज पहली बार जागृत अवस्था में मेरे समक्ष आई हैं आज तो सबकुछ जान कर ही रहुंगी। कहाँ से आती हैं? कहाँ गायब हो जाती है? आखिर ये हैं कौन? मैने देखा वो बिल्कुल मेरे बिस्तर के समीप आ चुकी हैं। आज तो उनकी आँखें ही नहीं उनकी मुस्कान भी बहुत गहरी लग रही है। मैने अपने सिर को झटका दिया नहीं... नहीं... आज इनकी खुबसूरती में उलझना नहीं है, सचेत रहकर सारे सवालों के जवाब जान लेने हैं। वैसे भी यहाँ कहने भर को ही मेरे अलावा और भी कई इंसान मौजूद हैं पर हमारी बातों को सुनने-समझने की सूध ही किसे है! संभवतः यही कारण है आज देवी यूं जागृत अवस्था में मुझसे मिलने आई है। मैं संभल कर बिस्तर पर बैठ गई, देवी बिल्कुल मेरे नजदीक आकर रूक गई पर यह क्या? इस बार मेरे सर पर हाथ फेरने की जगह अपनी दोनों हाथों को मेरी ओर कुछ इस अंदाज में फैलाये खड़ी हैं

मानो मेरा आलिंगन करना चाहती हों। अरे यह क्या... मेरा पूरा शरीर जैसे किसी धातु का बना हो और वो देवी कोई शक्तिशाली चुंबक हों जिनके समक्ष आते ही मैं विवश सी उनकी ओर खींची चली जा रही हूं... खींची ही चली जा रही हूं।

ऊफ ये मेरा शरीर इतना हल्का कैसे हो गया और ये कैसी अनुपम शांति का अनुभव हो रहा है! वो देवी?... अरे!..वो देवी कहाँ गई?... ओह ये मैं हूं या देवी? ये हो क्या रहा है? मै देवी के आगोश में कुछ ऐसी समाई हूं कि उनसे एकाकार हुई जा रही हूं पर ये देवी मुझे कहाँ लिये जा रही है?...अरे मैं तो उड़ रही हूं! अरे! ये नीचे क्या नजर आ रहा है ? ओह! ये तो मेरा पूरा परिवार है पर ये सब आईसीयू के बाहर ऐसे रो-बिलख क्यों रहे है.... और ये बिस्तर पर किसका शव पड़ा है???... ओह, ये तो मेरा ही शव है!!.. पर यह कैसे हो सकता है? मैं तो यहाँ हूं, मैने अपने-आपको स्पर्श करने का प्रयास किया, नहीं... कुछ नहीं, कोई शरीर नहीं! ओह!!!... इसका अर्थ है मेरी मृत्यु हो चुकी है तो, जिसे मैं चैतन्य होना समझ रही थी दरअसल वो दिया के बुझने से पहले वाली चमकीली रोशनी थी! और ये जो मुझसे बार-बार मिलती रहीं हैं और आज मै जिनकी गोद में हूं वो मृत्यु की देवी है!!.....

"हाँ बेटी, मै मृत्यु की देवी हूं मै तो हर इंसान के साथ उसके जन्म के दिन से ही रहती हूं इतना ही नहीं जबतक उसका मुझसे मिलने का निर्धारित समय नहीं आ जाता उसकी रक्षा भी करती हूं।"

"ओह... आप! आप हैं मृत्यु की देवी!! ओह....लोग नाहक आपके रूप को डरावना समझते और आपसे डरते हैं। जबकि आपकी गोद सी शांति और शुकून तो इस ब्रम्हांड में और कहीं नहीं आपकी गोद में आते ही सारा कष्ट सारी चिंताएँ मिट गई है। सच तो यह है कि पूरे ब्रह्मांड में ऐसा कोई विरला ही होगा जिसने अपने पूरे जीवन काल में आपकी चाहत कभी की ना हो। कभी किसी मानसिक निराशा से हार कर तो कभी किसी बिमारी के कारण दारूण शारिरिक कष्ट से मुक्ति हेतु इंसान बेहद तहेदिल से आपकी चाहत करता है। आप तो पूरे ब्रम्हांड की प्रिया है।"

उनके चेहरे पर वही शांत, शितल सी मुस्कान फैल गई जिसकी शितलता में नहाकर मै भी परम शांति में डूब गई।

आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो रही थी आखिरकार हम लोग इंदौर को छोड़कर पंजाब आ गए। नाना की जमीन थी, उसी पर खेती कर किसी तरह घर का खर्चा निकल रहा था। मैंने कॉलेज में एडमिशन तो ले लिया पर मेरा पढ़ाई में मन नहीं लगता था फिर एक साल बाद लड़की वालों ने केस वापस ले लिया। जर्जर आर्थिक स्थिति को देखते हुए भैया ने उसी फैक्ट्री में नौकरी का आवेदन दिया ,नौकरी मिल भी गई। मजबूरी और बेबसी क्या नहीं कराती मीता... । भैया बहुत बेमन से इंदौर गये। हर दो तीन महीने में वे मम्मी-पापा से मिलने आते।उनकी शारीरिक स्थिति देखकर बहुत दुख होता। मुझसे लिपटकर वे फूट-फूटकर रोते। उनके मन में यही फाँस टीसती कि मेरे कारण मेरे माता-पिता ने इतना कष्ट सहा, उनको यह दिन देखना पड़े। पता नहीं वहांँ कैसे लड़की वालों को पता चल गया कि भैया इंदौर में हैं। वे भैया से मिलने आने लगे और धीरे-धीरे पता नहीं भैया को क्या होता गया या तो उन्हें डर दिखाया गया या धमकाया गया ,हम नहीं जानते परन्तु भैया उनलोगों की बातों में आ गये या हो सकता है कि अकेलेपन व घुटन के काले बादलों से आच्छन्न उनका मन प्यार की झूठी फुहार से बहल गया , नहीं कह सकता ...पर वे भाभी को वापिस ले आये और साथ में रहने लगे। उन्होंने इस संबंध में हमलोगों को सूचित भी किया लेकिन हममें से कोई भी अब भाभी का चेहरा तक देखना नहीं चाहता था। सच तो यह है न कि , 'जहांँ गांठ वहांँ रस नहीं ' , इसलिए मम्मी-पापा वहांँ नहीं गए। अभी पिछली दीवाली पर भैया ,भाभी को लेकर आये थे। उनकी एक छोटी-सी बेटी भी है। वे सब चार दिन साथ में रहे पर पता नहीं क्यों मीता....! सबके मन में कल-कल बहता स्नेह का सोता सूख गया है। तुम समझ रही हो न मीता ..., बस इसीलिए मैं मम्मी-पापा को दुखी नहीं करना चाहता। मैं उन दोनों की सेवा करना चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि मेरी शादी के बाद भी ऐसा कुछ हो जाये कि उन्हें दुख झेलना पड़े।" इतना कहकर उसने भीगी आंँखों से मीता की ओर देखा।

"मैं तुम्हें इस तरह की लगती हूंँ क्या..जो उन्हें दुख दूंँगी ?" मीता ने मायूसी के साथ कहा।

" देखो ! बुरा मत मानो ..दूध का जला छाछ भी फूँककर पीता है। है न...! मैं तुम पर कोई शक नहीं कर रहा किन्तु कल्पना करो कि तुम्हारी मेरी मम्मी-पापा से पटरी नहीं बैठी तो मैं उन दोनों के साथ-साथ तुम्हारे साथ भी न्याय नहीं कर पाऊँगा। " फिर मीता के सामने हाथ जोड़कर बोला -"मेरे माता-पिता केवल स्नेह के हकदार हैं मीता....केवल स्नेह के " इतना कहकर आनंद फफक पड़ा।

मीता आनंद की मन:स्थिति भली-भांति समझ रही थी। उसने आनंद का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा -" मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि मेरी किसी बात से उन्हें कभी ठेस नहीं पहुँचेगी। "

"मैं केवल मम्मी-पापा की सेवा करना चाहता हूँ.... उन्हें खुश रखना चाहता हूँ...तुम...तुम मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो मीता प्लीज़.....!" करुण स्वर में कहे गये इन शब्दों से मीता भी भावुक हो उठी और आनंद की पीठ को सहलाकर वहाँ से निकल आई।

मीता घर आ गई। अगले दो दिन छुट्टी थी। तीसरे दिन वह ऑफिस के लिए निकलने ही वाली थी अचानक उसकी अमेरिका वाली सोनू बुआ आ गई , उन्हें यूँ सामने देख वह खुशी से "बुआ...." कहती हुई उनसे लिपट गई। उसके हर्षित स्वर को सुन घर के सभी सदस्य दरवाजे की तरफ भागे-भागे आये। सबकी आँखों में एक ही प्रश्न कि "अमेरिका से यूँ अचानक कैसे आ गईं बुआ ?"

"अरे ..!सब ऐसे आश्चर्य से क्यों देख रहे हो , मैंने तो बताया था न कि देवर की शादी में मुझे पहले भोपाल जाना है फिर बाद में यहांँ आऊँगी परन्तु ठंड की वजह से फ्लाइट कैंसिल हो गई तो मैंने सोचा कि पहले आपलोगों से ही मिल लेते हैं। इसलिए टैक्सी करके यहांँ आ गई ,अब दो दिन बाद भोपाल जाऊँगी।" इतना कहकर सोनू बुआ, मांँ से लिपट गई।

मीता ने अपना ऑफिस जाना कैंसिल किया और फोन पर बॉस को सूचित कर दिया। बुआ के साथ बातें करते ,उनकी खरीदारी कराते दो दिन फुर्र से बीत गये । रात का खाना खाकर बुआ मीता का हाथ पकड़कर छत पर आ गई और बिना किसी भूमिका के पूछा -"अब तुम बताओ , कब कर रही हो शादी ?"

क्या जवाब देती मीता .....कुछ बोलने के लिए मुँह खोलने ही वाली थी कि बुआ ने तपाक् से कहा -"कोई पसंद हो तो बता दो, भैया से मैं बात कर लूँगी।"

मीता के मुख पर आई लालिमा ने सच को उद्घाटित कर ही दिया ।

"अच्छा बता ...! कौन है?"

अब मीता चुप नहीं रह पाई। आनंद के साथ दोस्ती, उस दिन हुई बातचीत और अपने मन में उसके प्रति आकर्षण... सब कुछ कह डाला बुआ से।

कुछ देर खामोश रहने के बाद बुआ ने मीता के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा -"देखो मीता! वह चोट खाया हुआ इंसान है। उसे प्यार की जरूरत है ,सहलाने की जरूरत है। तुम अगर उसके मन को पूर्णतया समझ सकती हो तथा उसकी पीड़ा को सहला सकती हो, तब तो आगे बढ़ो... नहीं तो तुम पीछे हट जाओ।"

यह सुनते ही मीता अचरज से बोली -"बुआ आप कैसी बातें कर रही हैं..., मैं... मैं..आनंद से.."

उसके वाक्य पूरा होने के पहले ही बुआ बोली उठीं -"देखो बेटा ! सच यह है कि लड़कियां बहुत उम्मीद लेकर शादी करतीं हैं। वे सिर्फ सुख पाने की ,खुशियांँ मिलने की ही कामना करतीं हैं लेकिन नये रिश्ते में आरंभ से ही केवल खुशी मिले , ये संभव नहीं है। इसलिए तुम्हें समायोजन करना होगा , कुछ पाने की बजाय कुछ देने का भाव मन में रखना होगा ।ऐसा कर पाओगी तब तो इस रिश्ते में आगे बढ़ो। मेरी बात याद रखो कि जब हम खुशी देना सीख जाते हैं तभी खुशियाँ हमारा द्वार खटखटातीं हैं।

इतना कहकर बुआ ,मीता के मन की थाह लेने के लिए अपलक उसे देखने लगीं।

"अपने प्यार को पाने के लिए इतना तो कर ही सकती हूँ। " यह कहते हुए उसके मुख पर एक अलग ही चमक थी, जो चाँद की किरणों से द्विगुणित हो रही थी ।

यह सुनकर बुआ ने मीता के कपोल पर हल्की सी चपत लगाते हुए कहा -"अब मैं भैया से बात करती हूँ। "

इतवार के दिन मीता अपने मम्मी-पापा के साथ आनंद के घर पहुंची। उसे अचानक मम्मी- पापा के साथ आया देख वह चौंक गया। कुछ संकोच के साथ उसने मेहमानों का स्वागत किया। परिचय की औपचारिकता के बाद मीता के पापा ने शादी की बात सामने रखी। आनंद व मीता एक ही ऑफिस में काम करते हैं तथा एक-दूसरे को पसंद करते हैं ,यह जानकर आनंद के मम्मी- पापा बहुत खुश हुए और सहर्ष शादी के लिए तैयार हो गये। विवाह की तिथि, रीति-रिवाज व तैयारी की बात करके जब मीता के मम्मी- पापा घर लौटने को हुए तो उन्होंने अपने समधी-समधन से हाथ जोड़ते हुए कहा -"मैं आपको विश्वास दिलाता हूंँ कि अब आपके आँगन में केवल खुशियों की ही बरसात होगी क्योंकि हम इस बात पर विश्वास रखते हैं कि खुशी देने से ही खुशी मिलती है।" पापा के इतना कहते ही मीता ने झुककर आनंद की मम्मी- पापा के पैर छुए और हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ी होकर बोली-"मुझ पर विश्वास रखिए, मैं आपदोनों की अपेक्षाओं पर निश्चित रुप से खरी उतरुंँगी।"

इतना स्नेह ,अपनत्व व विनम्रता देख उन दोनों के मन में जमे अपमान के काले बादलों का घनत्व छंटने लगा और उन्होंने मीता पर आशीर्वाद की झड़ी लगा दी।

दो साल बाद अपने नन्हें को दादी की गोदी में किलकारी मारते देख मीता के कानों में बुआ की बात गूंँजने लगी - " केवल खुशियाँ पाने की ही आकांक्षा नहीं होनी चाहिए बल्कि खुशी देना भी आना चाहिए, तभी खुशियांँ हमारा द्वार खटखटातीं हैं।"

अनीता तिवारी

सिलीगुड़ी (पश्चिम बंगाल)

मन ढूंढता है

मन ढूंढता है,
खुद को, खुद में कहीं
अधूरे-अधूरे से पन्नों पर,अधूरी-अधूरी-सी लेखनी है,
यह मैं हूं,
या अधूरी-सी मेरी लेखनी है

मन ढूंढता है,
खुद को खुद में कहीं
गुनगुनाती सी हवाओं में,बूंदों का भी शोर है,
ख़ामोशी क्या मुझमें है
या चारों ओर सन्नाटों का ज़ोर है?

मन ढूंढता है,
खुद को खुद में कहीं,
कर्णभेदी- सी है चहल कदमी,
भीड़ का हुजूम रास्ते पर है पसरा,
हूं साथ उनके, या अकेली सी हूं मैं,

मन ढूंढता है, खुद को खुद में कहीं,
अधूरे-अधूरे से पन्नों पर, अधूरी-अधूरी-सी लेखनी है,
यह मैं हूं, या अधूरी सी मेरी लेखनी है।

बबिता कुमावत

नीमकाथाना सीकर

मेरी कविता

जिस तरह हवा में नमी घुली रहती,
उस तरह रूह में मेरी कविता घुली रहती।

जिस तरह हवाएं साजिश करती चली जाती है,
उस तरह मेरी कविता उम्मीदों को ढाढस बंधाती है ।

जिस तरह हवाओं के बादल दिशा बदल लेते हैं,
उस तरह मेरी कविता कुछ और कह के चली जाती है।

जिस तरह हवाएँ संघर्षो से टकराना सीखाती है,
उस तरह मेरी कविता खिदमतों को सहलाती जाती है।

जिस तरह हवाएँ प्रेम, मानवता बरसाती है,
उस तरह मेरी कविता मन की मुराद पूरी करती है।

जिस तरह हवाओं की फितरत खुशबू में बदल जाती है
उस तरह मेरी कविता दिल की साफ बातें दबा जाती है

जिस तरह हवाओं से बहार मस्त हो जाती है,
उसी तरह मेरी कविता से उलझनें खत्म हो जाती है

जिस तरह हवाओं से खुशी का उपदेश मिलता है,
उस तरह मेरी कविता से दुनिया का तजुर्बा मिलता है।
जिस तरह हवाओं से मंजर बदल जाते है,
उस तरह मेरी कविता से गुलशन रिश्तों के सज जाते है।

लघुकथा

डॉ.सरला सिंह स्निग्धा
दिल्ली

दान

" **माँ** बहुत भूख लगी है ।" बच्चे भूख से परेशान थे वे माँ से भोजन की याचना कर रहे थे ।

" बेटा थोड़ा सा और इंतजार कर लो,फिर होटल पहुँचकर ठीक से खाना खाया जायेगा ।"

रास्ते में अगल बगल होटल भी नजर आ रहे थे किन्तु रास्ते में गाड़ी रोकना संभव नहीं था क्योंकि पहाड़ी रास्ता था और अंधेरा होने से पहले वे अपने गंतव्य तक पहुँच जाना चाहते थे।रास्ते में जहाँ भी होटल या ढाबा नजर आता वे मन मसोसकर रह जाते थे।चाहकर भी वे रुक नहीं सकते थे उन्हें पहले मन्दिर फिर अपने होटल जाना था ।

मन्दिर की आरती पाने के मोह में उनको रात के ग्यारह बज गये । फिर यह तय हुआ की पहले दर्शन कर लिया जाये फिर कोई होटल तलाशते हैं । खाना खाकर फिर अपने होटल जायेंगे । आरती और पूजा होते रात के साढ़े ग्यारह बज चुके थे । बच्चों का क्या बड़ों का भी ध्यान भगवान से ज्यादा अब खाने पर था। जल्दी जल्दी पूजा आरती करके वे लोग होटल की तलाश में निकल पड़े ।

सामने ढाबा देखकर उनकी आँखों में चमक आ गयी । वे जल्दी जल्दी वहाँ पहुँचे पर यह क्या यहाँ तो भट्टी बुझायी जा रही थी ,खाना खत्म हो चुका था । बच्चों की भूख अब और भी बढ़ गयी थी वे रो रहे थे । इसी तरह वे लोग तीन चार ढाबे पर गये पर कहीं भी उनको खाना नहीं मिला ।

आखिर एक ढाबे पर उन्होंने फिर से कोशिश की की शायद यहाँ कुछ मिल जाये ।

बाबू साहब अब तो भट्ठी बुझायी जा चुकी है नहीं तो कुछ बनवा भी देते पर एक काम कर सकता हूँ । बच्चों को देखकर उसकी आँखों में दया की भावना तैरने लगी थी ।

"क्या कर सकते हो ,बताओ जल्दी ।" हरीप्रसाद अब व्याकुल हो रहे थे ।

"बाबू जी मैने और मेरे तीन कर्मचारियों ने अभी भोजन नहीं किया है,वह भोजन मैं बच्चों को दे सकता हूँ ।" ढाबे का मालिक बोला।

"हाँ ,हाँ दे दो ,पर आप लोग ?"

"अरे कोई बात नहीं ,हम लोग समझ लेंगे की आज एक समय का व्रत रखा है।" ढाबे का मालिक बोला और उसके तीनों कर्मचारी सहमति में सिर हिला रहे थे । उनकी सहमति में किसी भी प्रकार का अफसोस या दबाव नहीं था । भाई साहब आप लोगों के इस उपकार के हम आजीवन ऋणी रहेंगे । हरीप्रसाद जी ने भोजन लेकर पहले बच्चों को खिलाया फिर बाकी बचे हुए खाने को ड्राइवर तथा अपनी पत्नी के साथ स्वयं खाया । रात में वे लोग वहीं ठहरे ,सुबह जाते समय हरीप्रसाद ने ढाबे के मालिक को उस खाने की कीमत लेने की पेशकश की ।

भाई साहब आपके खाने की कीमत तो नहीं अदा कर सकता किन्तु फिर भी कुछ देना चाहता हूँ । उम्मीद है आप मना नहीं करेंगे ।

भाई साहब आप यहाँ ठहरे मैं उसकी कीमत ले सकता हूँ ,पर खाने की कीमत नहीं क्योंकि वह तो बच्चों को दिया गया 'अन्नदान 'था ,जिसकी कोई कीमत नहीं होती । हरीप्रसाद की आँखों में आँसू छलक आये थे । वास्तव में जिस समय लोग दूसरों के आगे की थाली भी खींच लेते हों ,अपने आगे की थाली परोसने वाले तो बिरले ही होते है ।

डॉ मीरा सिंह "मीरा"
डुमरांव, जिला-बक्सर, बिहार

कुछ गह लो

चाहे जो कह लो
गलत नहीं समझो।

आँखों में झाँको
सच्चाई परखो।

गुमसुम मत बैठे
सपने कुछ गह लो।

दिल की कुछ बातें
दिल में ही समझो।

मिलने जब आओ
नाम पता लिख दो।

क्यों भटको दर-दर
एक जगह रह लो।

धर्म निभाना

रोक रहे क्यों मुझको पीपल
बढ़कर मेरे पांव।
लेकर आयी साथ सुनो मैं
तेरी शीतल छांव।

प्रेम प्रीत से भरे हृदय में
अपनेपन का भाव।
कड़वी यादों को दफ़ना कर
आयी अपने गांव।।

अपना धर्म निभाते रहना
आए जो भी मोड़।
थामें रखना साथ सदा तुम
मानवता की डोर।।

एक मुसाफिर साथ हवा के
आयी तेरे पास।
इन आंखों में भरे उजाला
रंग दिखाएं खास।।

नेह बनाए रखना यूं ही
रखना सिर पर हाथ।
विनती करती हूं मैं तुझसे
जोड़े दोनों हाथ।।

प्रोमिला पुन्नु भारद्वाज
शिमला

सब हैं खरे

न तुम बुरे, न हम बुरे,
सब हैं खरे।
अच्छे कौन बुरे,
जो-जो कहा मानें,
निज इच्छानुसार चलें
जो करें वो वो
जो-जो हम कहें,
हैं बस वही भले,
शेष सब बुरे,
बुरा न मानो
बोल हैं ये खरे,
न ये बुरे न वो बुरे,
स्वार्थ से रहें गर परे।

निज स्वार्थ बना माप दण्ड
अच्छाई व बुराई का,
उचित - अनुचित,
अनुकूल-प्रतिकूल का,
निर्धारित सुख-दुःख का,
सर्वहित की हो तुला
हो तब, सबका भला,
आकलन हों खरे,
न ये बुरे न वो बुरे,
संकीर्ण दृष्टिकोण हैं बुरे।

सर्वश्रेष्ठ तुम न हम
आचरण करें तय करें कर्म,
स्वार्थ का आवरण हटे
समझें सत्य मर्म,
बुरा है हमारा अहम्
हम में न कोई बुराई,
बुरा है ये वहम
वहम ये दूर हो,
तो, न तुम बुरे न हम बुरे।

नहीं कोई सर्वगुण सम्पन्न
स्वीकारें ये तथ्य हम,
गुण अवगुण का हैं मिश्रण
करें सदैव ये प्रयत्न,
अवगुण हों न्यूनतम,
गुण बढ़ें दिन प्रतिदिन,
बढ़ती जाए प्रवृति
गुण अवगुण सहित
सबको स्वीकारने की,
स्वयं को न नकारने की,
अच्छे लगेंगे स्वतः सब खरे।

सब को प्रिय स्वहित
करते हुए स्वहित रहें सचेत,
हो औरों का भी हित
कम से कम न हो अहित,
करें कम अपेक्षाएँ,
करें पूरी आकांक्षाएँ,
अपनी व औरों की -
कुछ इस प्रकार -
न लगें औरों को बुरे
और लगें हमें सब खरे।
न तुम बुरे, न हम बुरे
हम सब हैं खरे, हम सब हैं खरे।

प्रेरणा यादव

दागापुर सिलीगुड़ी

याद आता है गांव

बारिशों के मौसम में
लोग याद करते है
भूले - बिसरे प्रेम को,
मगर मुझे अनायास,
याद आता है
पानी से भरे खेत,
धान -रोपनी करती महिलाएं,
उनके गीत,
आरोह -अवरोह में
छिपी
उनके आंसू
उनकी हसीं
उनके दुःख
उनके सपने
उनकी कांच की
चुड़ीयों की आवाज़,
विवाह - गौना
की चिंता करती
नईहर - पीहर
की बातें करती
और पर्व - त्योहारों
की तिथि पर
विमर्श करती स्त्रियां!!
बारिशों में याद आता है
मुझे अपना गांव..

प्रवासी हिन्दी भाषी

अपनी मातृभूमि से दूरस्थ
मातृभाषा से विलग,
भिन्न संस्कृति में जी रहा
प्रवासी,
जिस नदी- समंदर किनारे
रहता है,
उसे ही गंगा समझता है|
बातें चाहे
जिस भाषा में सुने
उसका दिल सोचता है
हिन्दी में ही है,
हर नयी जगह
नया परिवेश उसे -
विदाई के समय
दे जाती है
खोंयचे में,
बासमती -सी गमकती यादें,
मन के आंगन में
दूर्वा -सी लहराती
मीठे बताशे जैसी
मीठी - मीठी
अनगिनत कहानियाँ
गीत - संगीत
जिन्हें
हिंदी में अनुवादित कर
गाता -गुनगुनाता
अपना ही समझता है
फक़ीर मिजाजी
प्रवासी हिन्दी भाषी!

हर शहर के ह्रदय में बसा है एक गाँव

हर शहर के ह्रदय में बसा है एक गाँव,
एक क़स्बा,
मूलभूत सुविधाओं से वंचित एक घर,
जिससे निकलने के लिए
मन में छटपटाहत थी
मन्नतें भी मांगी गई थीं,
वह छोटा शहर
वह क़स्बा-गाँव
बड़े- से सपनों को
समझ नहीं पाता था,
जर्ज़र मकानों की जहाँ
एक लम्बी कतारें थी,
अब ख़्वाब यक़ीनन पूरे से हैं
मगर उन्हीं खंडहरों के
सपने शहर की आँखों में
जाने क्यूँ आते हैं,
दुःख में भूले रिश्ते याद आते हैं,
विवाह- जन्म में गीत
मृत्यु में कांधे की उम्मीद,
और निराशाओं में
ब्रह्म बाबा का बताशा की मनोती
याद आती है
पेड़ को यकायक
अपनी जड़े याद आ जाती हैं.

अनिता सिंह

देवघर, झारखंड।

सुनो पथिक

सुनो पथिक,
तुम्हारे पीछे से आनेवाली
पदचाप की ध्वनि...
तुम्हें अपनी ओर बुला रही है!
मत आओ इसकी बातों में तुम,
ये तो हर भरसक तुम्हें भरमा रही है!

मत मुड़ो तुम कि...
पीछे मात्र अतीत की परछाईं ही नहीं,
विघ्नों की विशाल खाई है, दलदल है!
पीछे मुड़े तो धंस जाओगे...
फंस जाओगे चक्रव्यूह के
कभी न निकलने वाले
अभेद्य घेरे में!

माना कि आगे का सफ़र भी
आसान नहीं पर, यकीन मानो...
पथरीले और कंटीले राहों से होकर,
लहूलुहान और ज़ख्मी कदमों से चलकर...
जब मिलेगी मंज़िल तुम्हें,
तो यक़ीनन वह प्रचुर सुखद और
बेहद खुशनुमा होगी!

डॉ. संध्या शुक्ल 'मृदुल'

मंडला (म. प्र.)

भारत की आन बान शान है हिंदी

सजे नारी के शीश ज्यों बिंदी,
विराजे भारत के शीर्ष यूं हिंदी।
ऋषि मुनियों और विद्वानों के,
लेखन का श्रृंगार है भाषा हिंदी।

जन मानस की बोल चाल में,
सहज सरल औ आम है हिंदी।
संप्रेषण और जनसंचार का,
सबसे सशक्त माध्यम है हिंदी।

वीणा के तारों से झंकृत करती,
महाग्रंथों में अलंकृत है हिंदी,
कवि और लेखकों के सृजन को,
कृत कृत्य करती है भाषा हिंदी।

कोकिल कंठ सी लगे कर्णप्रिय,
मिश्री की डली सी लगती हिंदी,
सभी भाषाओं की सिरमौर बनी,
हमारी मातृभाषा कहलाती हिंदी।

विश्वबंधुत्व औ एकता का भाव,
जन-जन में नित जगाती हिंदी।
नदी की पावन धारा सी निर्मल,
झरने सी शीतल है भाषा हिंदी।

प्रगति के नए सोपान है रचती,
भारत का मान है बढ़ाती हिंदी,
जन जन के मन में है बिराजती,
देश की आन बान शान है हिंदी।

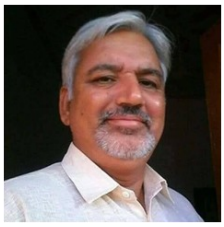

राजपाल सिंह गुलिया

झज्जर (हरियाणा)

दोहे

1.
नर्म घास को रौंदता , पाँव पहन कर बूट ।
मगर पाँव पर घास की , निष्ठा रही अटूट ।।

2
कीमत जब से खेत की , बढ़कर हुई करोड़ ।
डीलर हुआ किसान भी , काम किसानी छोड़ ।।

3.
नाटक करते नींद का , जहाँ लोग मक्कार ।
हरदम वहाँ शरीफ को , पड़ा खोलना द्वार ।।

4.
गति अवरोधक से हुए , अब जग के इंसान ।
हो कोई गतिशील तो , बनें तुरत व्यवधान ।।

5.
रहे वक्त पर मौन तो , पड़े भोगना दंड ।
अगर अहिल्या बोलती , बनती न शिलाखंड ।।

6.
चिड़िया चिचियाती रही , बाज़ न आया बाज़ ।
बोला मेरी भूख का , तेरे पास इलाज ।।

7.
झूठ किसी की गर कभी, कहें आप जो एक ।
उसके एवज आपको , सुननी पड़ें अनेक ।।

8.
खाली नर की जेब हो , या नारी की गोद ।
इनके मन मिलता नहीं , कहीं तनिक आमोद ।।

9.
खबर छपी अखबार में , एक सनसनीखेज ।
अपने हाथों लुट रहे , जन ओटीपी भेज ।।

10.
भोज चाहता पेट ये , चाहें बाल ख़िज़ाब ।
लेकिन दिल ये चाहता , अब भी सुर्ख गुलाब ।।

11.
देखी बागी भीड़ तो , भूप पूछता आज ।
किसको अब लगने लगा , कड़वा यहाँ अनाज ।।

12.
कैसे हँसते नाचते , दबा जिया की चीख ।
ये सब होता किस तरह , तू किन्नर से सीख ।।

13.
साहस ने जब लक्ष्य को , देखा आँख तरेर ।
चला गया आलस तभी , अपने मुँह को फेर ।।

14.
बोली कुंद कुदाल से , हँसकर पसरी दूब ।
बिना धार ही आ गई , हैै तू कितनी खूब ।।

15.
शिक्षित नारी ने करी , अधिकारों की बात ।
हुआ मर्द की शान पर , जैसे उल्कापात ।।

16.
लोकतंत्र पर वोट से , पड़े करारी चोट ।
पनपे नहीं ग़रूर का , नेता जी में खोट ।।

17.
बदल लिए हैं नीर ने , अपने रूढ़ विचार ।
नल का लेकर आसरा , पहुँचा प्यासे द्वार ।।

21.
आशा सपने चाहतें , बनकर जलें अलाव ।
लेकिन जल पाते नहीं , कुंठा और तनाव ।।

18.
हरा कभी रखना नहीं , दिया तुम्हें जो घाव ।
दुश्मन की दी चीज से , अच्छा नहीं लगाव ।।

19.
देखे देवी न्याय की , अपनी पट्टी खोल ।
उसे सख्त कानून में , मिले बहुत से झोल ।।

20.
कभी नहीं की याचना , बोला गर्व गुमान ।
थककर आज विवेक ने , लिया स्वयं संज्ञान ।।

सत्यम भारती
बेगूसराय, बिहार

ग़ज़ल

(एक)
प्यार की तासीर है ये ज़िन्दगी
बस यही जागीर है ये ज़िन्दगी

जुल्म को कैसे भला कोई सहेगा
हाथ में शमशीर है ये ज़िन्दगी

पीढ़ियों से साथ रहते आ रहे हम
रिश्तों की ज़ंजीर है ये ज़िन्दगी

छोड़ना मुमकिन कहाँ इस ज़िन्दगी को
ख़्वाब की तस्वीर है ये ज़िन्दगी

खाक करने दे नहीं सकते इसे हम
नेकी की तदवीर है ये ज़िन्दगी

(दो)
छांव सी आज ज़िन्दगानी है
धूप की शर्त बेईमानी है

कोई सच इस तरह नहीं मरता
झूठ है, छद्म है, कहानी है

भूल पाऊंगा प्यार को कैसे
प्यार दिल पर छपी निशानी है

रोज़ कान्हा बदल रही है वो
कैसी मीरा हुई दीवानी है

आग समझा था मैं जिसे 'सत्यम'
उसके भीतर में सिर्फ़ पानी है

(तीन)
मुसलसल चलते हैं ठहरे नहीं हैं
मगर मंजिल तलक पहुँचे नहीं हैं

सदा रोते हैं छिपकर औरों से वो
दुखी इंसां कभी हंसते नहीं हैं

नहीं आता है बेजा खर्च करना
तभी तो भूख से मरते नहीं हैं

डराना काम है जिनका जहाँ में
ख़ुदा से लोग वे डरते नहीं हैं

लुटाते हैं वो मुझपे प्यार अपना
मगर दिल की कभी कहते नहीं हैं

नदी की धार है टूटी है नैया
चतुर तैराक पर बहते नहीं हैं

(चार)
कभी आकर हमारा गाँव देखो
दरख़्तों की सुनहरी छाँव देखो

बुलन्दी पर नहीं मैं यूँ ही पहुँचा
जले हैं रोज़ मेरे पांव देखो

हमारी जीत पक्की हो चुकी है
हमारा आखिरी ये दांव देखो

मुझे घर से निकाला जा चुका है
कहाँ मिलता है मुझको ठांव देखो

नहीं बदला है केवल शह्र हर दिन
बदलता जा रहा है गांव देखो

(पांच)
झुकाते हैं सदा सर प्यार में हम
नहीं झुकते कभी दरबार में हम

ग़रीबी रोज़ हमको खा रही है
कभी बिकते नहीं बाजार में हम

दिलों पे नाम लिखना आ गया है
तभी लिखते नहीं अख़बार में हम

तुम्हें फूलों का बिस्तर हो मुबारक
उलझकर रह गये हैं खार में हम

तुम्हारी नाव पहुँची है किनारे
फंसे हैं अब तलक मंझधार में हम

(छः)
छोड़ो गांव-शहर की चाहत
घर में है अब घर की चाहत

जो मुझको मुझसे मिलवा दे
मन को है उस स्वर की चाहत

कितना भी पा लो दुनिया में
रहती है बेहतर की चाहत

इक छोटी सी उम्र बची है
है पर दुनियाभर की चाहत

एक नहीं हो पायी अबतक
दिल की और नज़र की चाहत

कश्मीरी लाल चावला

हाइकु

1)
पहली वर्षा
बचपन नाचता
गलियों बीच
2)
पहली वर्षा
फुहारें नाच रही
फूलों ऊपर
3)
पहली वर्षा
किन-किन के साथ
झूमता मन
4)
पहली वर्षा
तपती धरती की
प्यास बुझाती
5)
पहली वर्षा
फिर सौंधी माटी की
खुशबू आती

जितेन्द्र निर्मोही

कोटा

तब जाकर बदरा आये
बहुत हमें तरसाये
तब जाकर बदरा आये
रात रात भर मोर पपिहा
मेहू पिहू कर बोले
तब जाकर बदली रानी ने
घूंघट के पट खोले
फूट पड़ी अश्रु की धारा
और कपोल सरसाये।
प्यासी नदी जेठ में फिर से
तपती रही निरन्तर
और कुएं भी तपे अगन में
रखे अमावस भीतर
चतुर्मास धौरे फूटे
तपोनिधि मुस्काए
बनी ठनी चिड़िया रानी
गोबर में नहाकर आई
चिंटी रानी बाहर निकली
गेह छोड़ घबराई
प्रथम मेह के शुभागमन से

सतीश कुमार नारनौंद

जिला हिसार हरियाणा

झूमें तन-मन सारा

काले मेघा चले गगन में, अद्भुत होत नजारा।
ठंडी पवन चले मतवाली,झूमें तन-मन सारा।

कूक पड़ी कोकिला वन में,बैठ तरु की डाली।
कल-कल चली सरिता का राग गूंजता प्यारा।

वन तरुवर की डाली, निकली अंबर छूने को।
यौवन हंसता उसका पीकर प्रेम-नीर की धारा।

अवनी ऊपर हरितिमा की लहर उठती प्यारी।
नैसर्गिकता लगी नाचने,ले क्षितिज का किनारा।

दो दिन का जीवन बंदे,फिर रुखसत है सबकी।
मानवता के रखवाले तुम,बनों सभी का सहारा।

वाई. वेद प्रकाश

रायबरेली उत्तर प्रदेश

ग़ज़ल

देखना कैसी भंवर है।
ज़िन्दगी मुश्किल सफर है।
यह दुआओं का असर है,
दर्द सारा बेअसर है।
लहू पानी से है सस्ता,
आज की ताजा खबर है।
देखना मंजर उधर का,
घुला मीठा सा जहर है।
दे रहा है छांव सबको,
एक बूढ़ा सा शज़र है।
बस बना लो आशियाना,
शांत सा सुंदर शहर है।

नवीन माथुर पंचोली

अमझेरा धार मप्र

ग़ज़लें

1

लाख आँसू हमारे ढ़लते हैं।
लोग पत्थर कहाँ पिघलते हैं।

जान पायेंगे हम उन्हें कैसे,
शक़्ल पे शक़्ल जो बदलते हैं।

शूल महफ़ूज रहते शाखों पर,
फूल पेरों तले कुचलते हैं।

ये ज़माना है अज़नबी उनसे,
जो घड़ी भर कहीं निकलते हैं।

बात हो आपकी असर कैसे,
आप कहते जिसे फिसलते हैं।

2

अगर मेरी कही वो मान लेगा।
सभी मर्ज़ी मेरी पहचान लेगा।

लगाकर और इक इल्ज़ाम मुझपर,
कहाँ मुझसे मेरा ईमान लेगा।

चुकाएगा सभी बदले पुराने,
सज़ा देगा कि मेरी जान लेगा।

कभी रहता नही अपनी रज़ा पर,
कहाँ तक और का फ़रमान लेगा।

चला है कारवाँ जिस रास्ते पर,
नज़र उस ओर अपनी तान लेगा।

ज़रूरत या वज़ह के काम सब वो,
करेगा तब उसे जब ठान लेगा।

3

ख़ुशी देखी नहीं जाती।
हँसी रोकी नहीं जाती।

लबों की चुप्पियाँ मुश्क़िल,
जुबाँ भी सी नहीं जाती।

रिवाज़ों, क़ायदों से डर,
वफ़ा तोड़ी नहीं जाती।

सभी कुछ पा लिया लेक़िन,
कमी अपनी नहीं जाती।

ज़ुदा है मामला दिल का,
लगी इसकी की नहीं जाती।

4

तीर लगते नहीं निशाने तक।
पाँव उठते नहीं ठिकाने तक।

अश्क़ पलकों में आ ठहरते हैं,
वो छलकते नहीं रुलाने तक।

डूबते तो सभी ने देखा था,
कोई आया नहीं बचाने तक।

ताश के घर-महल बनाते हो,
ये संभलते नहीं जमाने तक।।

हाल है इन तमाम रिश्तों का,
साथ चलते नहीं निभाने तक।

आग अंदर है अलग बाहर से,
ये सुलगती नहीं बुझाने तक ।

5

अश्क़ सारे बहा लिए जाएँ।
राज़ दिल के जता लिए जाएँ।

आज़ ग़फ़लत नहीं रहे कोई,
दर्द सब आज़मा लिए जाएँ।

काम आसान हो सभी अपनें,
हाथ सबसे बँटा लिए जाएँ।

उन रिवाज़ों से इन रिवाज़ों के,
बीच रस्ते बना लिए जाएँ।

मेज़बानी के हाल -मौके पर,
सब बिखेरे जमा लिए जाएँ।

दूसरों से ज़रा सबक लेकर,
हाथ अपने बचा लिए जाएँ।

डा. अनीश गर्ग
उपाध्यक्ष, चंडीगढ़ साहित्य अकादमी

अनादि मिलन-देह से परे: आत्मा के पार

प्रिय,
प्रेम में रिक्तता कहां है?
प्रेम में शून्यता कहां है?
जो रिक्त दिखता है,
वहीं तो तुम्हारा विस्तार है।
जो शून्य प्रतीत होता है,
वहीं तुम्हारा अनंत रूप है।

देह ने हमें पृथक किया—
पर आत्मा?
अरे.. हम तो उसी क्षण आत्मसात् हो गए थे
जब तुम्हारी आंखों में मैंने
अपना ही प्रतिबिंब देखा था।
तब से अब तक
ना समय हमें तोड़ पाया,
ना मृत्यु हमें पृथक करने का दुस्साहस करेगी

प्रिय,
यह घर तो एक बहाना है—
वास्तव में तुम हर जगह हो।
दीवारों की नमी में,
हवा के कंपन में,
दीपक की लौ में,
सन्नाटे की गूंज में।
जब आंखें बंद करता हूँ
तो तुम प्राण बनकर भीतर बहती हो।
जब श्वास लेता हूँ
तो तुम्हारे स्पर्श का अंश भीतर उतरता है।

रात का चांद
अब केवल खिड़की से नहीं झांकता
उसने तो स्वयं तुम्हारा चेहरा ओढ़ लिया है
जो आकाश पर टंगा है
सितारों की झिलमिल में
तुम्हारी हंसी सुनाई देती है।
ग्रह-नक्षत्रों की गति में
हमारे मिलन का रहस्य छिपा है

प्रिय,
तुम अब केवल स्मृति नहीं
तुम तो चेतना हो !
तुम समय से परे हो,
शरीर की सीमाओं से बाहर
यह घर तुम्हें सहेजता है,
पर वास्तव में
मेरी तमाम कायनात में तुम्हारा ही आश्रय है !

तुम गंगा की धारा हो
जो अनवरत बह रही है,
तुम वटवृक्ष की जड़ हो
जो धरती को पकड़ती है।
तुम आकाश की नीरवता हो
जो सबको समेट लेती है।
तुम ओस की बूंद हो
जो मिट्टी में समाकर
फिर बादल बन जाती है।

मैं कैसे कह दूं
कि तुम कहां हो?
तुम न बाहर हो, न भीतर
तुम तो उस अदृश्य धारा में बह रही हो
जो मुझे मेरे ही सूक्ष्म स्वरूप से मिलाती है।

प्रिय,
अब समझ पाया हूँ !
प्रेम न कभी जन्म लेता है,
न कभी मृत्यु पाता है।
वह केवल रूप बदलता है,
वह केवल देहों के पार जाकर
आत्माओं का अनादि संवाद बन जाता है।

तो फिर बता दो !
क्या वास्तव में तुम गयी हो?
या तुम और मैं
अब भी उसी शाश्वत शून्य में एक हैं !
जहां प्रेम ही सब कुछ है,
और प्रेम से परे कुछ भी नहीं...!!

गिरेन्द्रसिंह भदौरिया "प्राण"

इन्दौर पिन- 452006 म.प्र.

देख सजनी ! देख ऊपर

देख सजनी ! देख ऊपर।।
आ रही है मेघमाला।।

बम सरीखी गड़गड़ाती,रेल जैसी दड़दड़ाती।
इंजनों सी धड़धड़ाती, फुलझड़ी सी तड़तड़ाती।।
पल्लवों को खड़बड़ाती,पंछियों को फड़फड़ाती।
पड़पड़ाती पापड़ों सी, बोलती है कड़कड़ाती।।

भागती तो भड़भड़ाती, बावरी सी बड़बड़ाती।
हड़बड़ाती, जड़बड़ाती, दिग्गजों को खड़खड़ाती।।
सिर उठाकर देख ऊपर।। और ऊपर और ऊपर।।
आ रही है मेघमाला।
देख सजनी ! देख ऊपर।।

वह पुरन्दर की परी सी घेर अम्बर, और अन्दर,और अन्दर।
कर चुकी है श्यामसुन्दर से स्वयंवर।।
रिक्ष बन्दर सी कलन्दर वह मुकद्दर की सिकन्दर।
हो धुरन्धर सींच अंजर और पंजर बाग बंजर।।
कर समुन्दर को दिगम्बर फिर बवण्डर सा उठाती।
बन्द बिरहिन का कलेजा खोल खंजर सा चलाती।।
आ रही है मेघमाला।
देख सजनी ! देख ऊपर।।

भामिनी सी कामिनी सहगामिनी मृदुयामिनी सी।
वामिनी गजगामिनी ले दामिनी मनस्वामिनी सी।।
रागिनी घनवादिनी पंचाननी सौभागिनी सी।

जामुनी हंसासनी सी सावनी मधु चासनी सी ।।
जीवनी में घोलती संजीवनी सा रस बहाती।
तरजनी सी मटकनी कुछ कटखनी बातें बनाती।।
आ रही है मेघमाला।
देख सजनी ! देख ऊपर।।

तू कापुरुषों का पूत नहीं

चलने से पहले तय कर ले, दुर्गम पथ है अँधियारों का।
हे वीर व्रती ! तब बढ़ा चरण, होगा रण भीषण वारों का।।
यह भी तय है तू जीतेगा,शासन होगा उजियारों का।
तू कापुरुषों का पूत नहीं, वंशज है अग्निकुमारों का।।

नदियाँ लावे की बहती थीं, जिनकी शुचि रक्त शिराओं में।
जो हर युग में गणनीय रहे, धू-धू करती ज्वालाओं में।।

तू उन अमरों का अजर पुत्र, आर्यों की अमर निशानी है।
तेरी नस-नस में तप्त रक्त, पानीदारों का पानी है।।

हे सूर्य अंश ! अब दिखा कला, कर सिद्ध शौर्य अंगारों का।
सुनकर माँगेगा बैर नीर, पथ है कर्कश टंकारों का।।
तू कापुरुषों का पूत नहीं, वंशज है अग्निकुमारों का।।

तेरी जननी की हरी कोख, करुणा की तरल पिटारी से।
अवतरण हुआ है हे कृशानु! तेरा बुझती चिनगारी से।।

हे हुताशनी पावक सपूत! बलधर अकूत दमदारी से।
कर दानवता को भस्मभूत, अनलत्व भरी किलकारी से।।

खूँखारों की ललकारों का, सुन अट्टहास हथियारों का।
अब सहनशक्ति से बाहर है, कर ध्वंस वंश बटमारों का।।
तू कापुरुषों का पूत नहीं, वंशज है अग्निकुमारों का।।

जो सीधे पथ के राही हैं, जिनके जीवन में मोड़ नहीं।
जिनको मरने तक जीना है, उन सबसे तेरी होड़ नहीं।।

मरकर भी नहीं मरे अब तक, जिनके साहस की जोड़ नहीं।
उनसे ही तेरी तुलना है, जिनका दुनिया में तोड़ नहीं।।

हो चुका निवेदन ज्वारों का, अब समय गया मनुहारों का।
हे अग्निपथिक! संकोच त्याग, दायित्व निभा अधिकारों का।।
तू कापुरुषों का पूत नहीं, वंशज है अग्निकुमारों का।।

दुश्मन छाती पर आ पहुँचा, लिखने को नई कहानी है।
हर बार हारकर लौटा पर, हिम्मत उसकी शैतानी है।।

इस बार साथ ला रहा शत्रु अन्धी आँधी तूफानी है।
हे युग प्रताप! उठ देर न कर पानी में आग लगानी है।।

आ गया समय आहुतियों का, वैश्वानर की जयकारों का।
साहस की प्राण प्रतिष्ठा का, विस्फोटक की हुंकारों का।।
तू कापुरुषों का पूत नहीं, वंशज है अग्निकुमारों का।।

(कापुरुष=कायर, कृशानु=अग्नि, हुताशनी=अग्निधर्मा, उत्सर्ग प्राण=वीर गति, वैश्वानर=अग्नि,)

अमलेन्दु शुक्ल
सिद्धार्थनगर उ०प्र०

तेरे दीदार को आ गये चाँद हम

तेरे दीदार को आ गये चाँद हम,
नयन खोलो,नयन को मिलाओ जरा,
रिश्ता अपना है तुमसे कई जन्म का,
खोलकर लब इसे तुम बताओ जरा,

आओ अठखेलियाँ प्यार की हम करें,
चित्र आँखों में ले,प्यार का रङ्ग भरें,
दूर अब तक रहे,कष्ट कइयों सहे,
ताने सबके सुने पर नहीं कुछ कहे,

दौर उनका खत्म है बताओ जरा,
तेरे दीदार को आ गये चाँद हम,
नयन खोलो,नयन को मिलाओ जरा,

प्यार की दौड़ में प्यार से दौड़िये,
धन की ताकत से इसको नहीं तोलिये,
जीतता है वही प्यार की दौड़ को,
हों दुआएं भी जिसके यहाँ साथ में,
हार निश्चित है उनकी इस रेस में,
चल रहे जो लिये बद्दुआ हाथ में,

जान करके जो अनजान बन चल रहे,
बेवजह शक्ति पर जो यहाँ तन रहे,
उनकी ताकत है छोटी दिखाओ जरा,
तेरे दीदार को आ गये चाँद हम,
नयन खोलो,नयन को मिलाओ जरा,

सच तो यह है अभी तक रहे दूर हम,
फिर भी आने की कोशिश निरन्तर किये,
इसके पहले नहीं हम पहुँच क्यों सके?
इसके विष को यहाँ हम निरन्तर पिये,

मिलन के आस का एक दीपक जला,
रात कइयो ही हमने बिताये वहाँ,
आंधियों ने बुझाने की,की कोशिशें,
पर मनोयोग से हम बचाये वहाँ,

यह उसी का है फल,आ गये हम यहाँ,
दे के सेल्फी मेरे संग,बताओ जरा,
तेरे दीदार को आ गये चाँद हम,
नयन खोलो,नयन को मिलाओ जरा।

मुसाफ़िर

बिना डिगे तू , बिना डरे तू
कह दे अपनी बात मुसाफिर ,
रथ में भी है ,पथ में भी है
सच है तेरे साथ मुसाफिर ।

चल निकला जब राह दिखाने
फिर चिंता किस बात की?
ध्येय एक रख, दृष्टि नेक रख
झूठे सब जज्बात मुसाफ़िर।

बस्ती तेरी राख करेंगे
जी भर तुझको लूटेंगें,
अहसानों को ताक में रख के
ये आदम की जात मुसाफिर ।

चैन लिए बिन भला किए चल
कठिन थपेड़े भी सहता चल ,
ईश्वर ने तुझको तो दी है
सत्कर्मों की सौगात मुसाफिर

खामोशी है सन्नाटा है
वीरानी- सी छाई है ,
शांत नहीं है भीतर कुछ हैं
तेरे ये हालात मुसाफ़िर।

डॉ. अखिलेश शर्मा
इन्दौर

आईने से हक़ीक़त पूछती हुई ग़ज़लें

अविनाश भारती हिंदी के एक ऊर्जावान ग़ज़लकार हैं. छपरा यूनिवर्सिटी में हिंदी पढ़ाते हुए वह ग़ज़ल के लिए लगातार काम कर रहे हैं. अपनी पहली कृति आने से पूर्व ही लगातार लेखन और प्रकाशन के कारण उन्होंने अपनी शनाख़्त बना ली है. आईने से पूछो उनका पहला मौलिक ग़ज़ल संग्रह है, जिनमें उनकी छप्पन ग़ज़लें मौजूद हैं. इन ग़ज़लों को पढ़ते हुए यह साफ़ पता चलता है कि अविनाश भारती ने ग़ज़ल लिखते हुए कोई जल्दबाजी से काम नहीं लिया है. ऐसे भी ग़ज़ल जल्दी में लिखी जाने वाली विधा नहीं रही है. इसमें सिर्फ शेर की गंभीरता ही नहीं शब्दों की कारीगरी और तकनीक का भी पूरा ध्यान रखना होता है. आलोक धन्वा से लेकर ओमप्रकाश यती, विजय कुमार स्वर्णकार और डॉ.भावना आदि ने इस किताब में उनकी ग़ज़लों पर बात की है,जो अपने आप में महत्वपूर्ण है. आलोक धन्वा ने माना है कि अविनाश भारती इस तरुण पीढ़ी के सबसे संभावनाशील गज़लकार हैं. समकालीन हिंदी ग़ज़ल हमारी ज़रूरतों से जुड़ी हुई है. यहां भी स्त्री है, लेकिन वह सिर्फ प्रेयसी बनकर नहीं उभरी है. अब यह स्त्री संघर्ष करती है. नौकरी करती है.घर -बार और कारख़ाने संभालती है, वह सियासत तकनीक और समाज के अभिन्न हिस्से के रूप में देखी जा रही हैं, लेकिन अभी भी स्त्रियां की एक बड़ी आबादी ऐसी है जो अपने मक़ाम के लिए जद्दोजहद कर रहीं हैं.अविनाश की पहली ग़ज़ल ही इसी संघर्ष से शुरू होती है -

जीती है क़ैद में बेटियां आज भी
हमसे टूटी नहीं बेड़ियां आज भी

फिर इसी ग़ज़ल का अगला शेर हमारी ज़रूरतों और संकटों से जुड़ जाता है -

कौन लेगा भला कोई उनकी ख़बर
जिनके हिस्से नहीं रोटियां आज भी

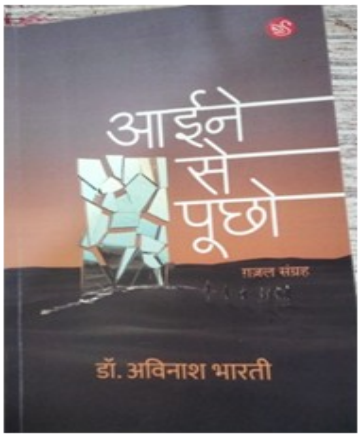

शायर को दुनिया की तमाम चीज़ों से मोहब्बत है. सिर्फ इंसान ही नहीं उनकी नज़रों में पेड़ -पौधों को काटना भी उसका क़त्ल करने के बराबर है, देखें एक और शेर -

हर घड़ी लग रही दुपहरी तो नहीं
पेड़ को काटना ख़ुदकुशी तो नहीं

शायर अपने शेर में कभी अपना घर- आंगन और बचपन तलाशता है, तो कभी इस मुश्किल वक्त में जिंदगी की ज़रूरतों को पूरी करने में संघर्षरत दिखलाई देता है

छत भी अपनी आंगन अपना
सबसे अच्छा बचपन अपना
मयस्सर नहीं जब हमें दाल रोटी
मुनासिब है कितना कमाना हमारा

यह वह फिक्र है जो अपने कई शेर में वह बार-बार दर्ज करते हैं-

अपना सब कुछ छोड़ रहे हैं
घर का राशन जोड़ रहे हैं

देखने की बात यह है कि तमाम अशआर में सारी दुनिया की चिंता करने वाला शायर इस किताब के आख़री शेर में इश्क़ की बात करता है-

इश्क़ की ये डगर हमको प्यारी लगी
ख्वाब सोये हुए हम जगाने लगे

जो इस बात की अलामत है कि मोहब्बत को ग़ज़ल से ख़ारिज नहीं किया जा सकता, लेकिन यह हमारी पहली ज़रूरत नहीं है. इसके अलावा भी ज़माने में कई ग़म हैं.

हम कह सकते हैं कि अविनाश भारती का भले ये पहला ग़ज़ल संग्रह है,लेकिन इसमें बनावट,बुनावट,सजावट और कसावट की कोई कमी नहीं है.

पुस्तक -आईने से पूछो (ग़ज़ल संग्रह)
शायर-डॉ. अविनाश भारती
मूल्य-199/- पृष्ठ-103,वर्ष-2025
प्रकाशक- श्वेतवर्णा प्रकाशन,नोएडा

मेरी इतनी कहानी है—ग़ज़ल में एक और युवा का दख़ल

इन दिनों युवा पीढ़ी भी ग़ज़ल के प्रति तेज़ी से आकर्षित हो रही है. सत्यम भारती एक ऐसे ही युवा ग़ज़लगो हैं, जिन्होंने बेगूसराय के एक छोटे से गांव से निकलकर वाराणसी, दिल्ली और वर्धा में अपनी पढ़ाई मुकम्मल की. मेरी इतनी कहानी है, उनकी ग़ज़लों का नया संग्रह है. ऐसा नहीं है कि यह उनकी पहली कृति है, बल्कि इससे पहले सुनो सदानीरा और बिखर रहे प्रतिमान पुस्तक के साथ वह अपनी मज़बूत उपस्थिति दर्ज करवा चुके हैं.ऐसे ही नहीं के पी अनमोल ने उन्हें सामर्थ्यवान युवा ग़ज़लकार माना है.

सत्यम भारती की ग़ज़लों को देखकर यह सहज अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि उनके पास ग़ज़ल की शैली और कथ्य को सहेजने का खूबसूरत हुनर है. पूरी उर्दू -हिंदी ग़ज़ल में प्रेम भरा पड़ा है, पर उसमें या तो मिलन है या विरह है, पर सत्यम भारती की दृष्टि इन दोनों से अलग कहीं और जाती है-

प्यार वफ़ा है या धोखा है
उससे मेरा रिश्ता क्या है

वह परिस्थितियों से उदास या हताश होने वाले शायर नहीं हैं. उनकी एक ग़ज़ल का पहला ही शेर है -

अच्छे हैं हालात नहीं
फिर भी कोई बात नहीं

सत्यम भारती की भाषा बिल्कुल सरल और सहज है. वह अपनी बात रखने के लिए किसी वक्रोक्ति का सहारा नहीं लेते, बल्कि सादगी से कहते हैं-

कितना उसका मीठा स्वर है
लेकिन हाथों में खंजर है.

वो मानकर चलते हैं कि मनुष्य हो या अदब समय के साथ सबको बदलना चाहिए-

वक्त के साथ चल नहीं पाया
ख़ुद को मैं तो बदल नहीं पाया

इस प्रकार इस संग्रह में सत्यम भारती की जितनी ग़ज़लें हैं, वह सादगी के साथ, लेकिन अर्थ की पूरी गंभीरता रखते हुए अपनी बात रखती हैं. हिंदी के इस युवा ग़ज़लकार को आज इस पुस्तक के लिए बधाई देने का दिन है.

मेरी इतनी कहानी है
विधा-ग़ज़ल
शायर -सत्यम भारती
वर्ष 2025, मूल्य 249, पृष्ठ 104
श्वेतवर्णा प्रकाशन, नोएडा

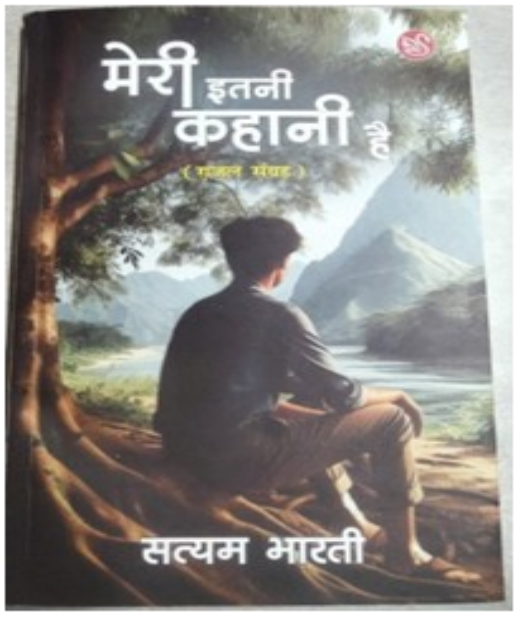

डॉ अनुराधा प्रियदर्शिनी
मथुरा, उत्तर प्रदेश

मन के मनके

मन के मनके डॉक्टर मधुबाला सिन्हा जी की वैदिक प्रशासन द्वारा प्रकाशित हाईकु को संग्रह में एक बहुत ही अद्भुत कृति है। इससे पुर्व वैदिक प्रशासन से उनकी आशियाना, धूप के साए में और करूँ भरोसा जैसी कई कृतियां प्रकाश में आ चुकी हैं। मन के मनके में डॉक्टर मधुबाला सिन्हा जी ने सभी रचनाएं हाईकु विधा में लिखी हैं जो अपने आप में एक अनोखा प्रयास है। इस संग्रह का प्रत्येक हाइकु अपने आप में एक गहन अर्थ समेटे हुए है। मन के मनके में कहीं जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है तो कहीं अपने प्रियतम को पास बुलाने की आतुरता, कहीं अपने प्रियतम से मिलन की खुशी है तो कहीं विरह की अगन में प्रियतमा की व्याकुलता।
इस संग्रह की पहली ही रचना जीवन का संदेश देती है

जीवन जियो
खुशियों के संग तो
दिल विंहसे

भरा सागर
अपने ही भीतर
दर्द बहुत

मौन हो गई
मुखर बहुत थी
दिल है लुटा

लेखिका भावों के माध्यम से बिंबों का उपयोग करती हैं एक रचना में देखिए

जोत जलाई
तेरे संग प्रीत की
मन मोहना

मन के मनके में बहुत ही छोटे-छोटे शब्दों में लेखिका ने दिल की बात रखने का अनोखा प्रयास किया है और ऐसा लगता है जो हर एक दिल की बात कहती हो

दिल ने छेड़ी
तान मुरली बन
बजता जाए

भंवरा कहे
तितली जरा सुन
आगोश में आ

मुझे एक पाठक और समीक्षक के तौर पर डॉ मधुबाला सिन्हा जी की यह पुस्तक बहुत ही अच्छी लगी। आपको बताते हुए यह हर्ष हो रहा है कि जब से यह पुस्तक मेरे पास आई है मैं इसको की बार पढ़ चुकी और इसे बार-बार पढ़ने की इच्छा होती है। मन के मनके की समस्त रचनाएं पाठक को अंत तक बांधे रहती है।

मन के मनके को पाठक अमेजान किंडल और अमेजान की साइट से आनलाइन मंगाकर पढ़ सकते हैं इसके अलावा वो प्रकाशन और लेखक से संपर्क करके भी पुस्तक प्राप्त कर सकते हैं।

मन के मनके का कवर पृष्ठ अत्यंत ही मोहक और आकर्षक है जो पाठक को पहली दफ़ा ही अपनी ओर खींचता है।हाइकु जैसी विधा में प्रेम, जीवन सपने और जीवन जीने प्रेरणा से ओत-प्रोत रचनाओं के लिए मैं डॉ अनुराधा प्रियदर्शिनी पुस्तक की लेखिका डॉ मधुबाला सिन्हा जी और वैदिक प्रकाशन की समस्त टीम को बहुत-बहुत बधाई एवं शुभकामनाएं देती हूँ।

मन के मनके
ISBN 9788198726346
प्रथम संस्करण 2025
कुल पृष्ठ 93,मूल्य 199₹
प्रकाशन वैदिक प्रकाशन
लेखिका डॉ मधुबाला सिन्हा

चंद्रबरदाई

पित्ते पुत्त सनेह गेह भुगता युक्तानि दिव्या दिने।
राजा छत्रनि साजि राजि षितया नंदाननब्भासने।

कुसमे कातिक चंद निम्मल कला दीपांनि वर दायते।
मां मुक्कइ पिय बाल नाल समया सरदाय दरदायते।

मानवी सेवा संस्था : राष्ट्र और राष्ट्र जन की सेवा में समर्पित

274/x ,शक्तिनगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

http://www.manvipatrika.co.in

(पत्रिका यहाँ से भी पढ़ सकते है)